न मिटना बुरा है न पिटना

प्रवचनकार
अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी
आचार्य श्री १०८ वसुनंदी जी मुनिराज

प्रकाशक
गजेन्द्र ग्रन्थमाला

कृति : न मिटना बुरा है न पिटना

प्रवचनकार : आचार्य श्री 108 वसुनंदी जी मुनिराज

संपादन : आर्यिका 105 श्री वर्धस्वनंदनी माताजी

उपलक्ष्य : आर्यिका 105 श्री वर्धस्वनंदनी माताजी (ससंघ) के
प्रथम चातुर्मास के उपलक्ष्य में
सकल दिगम्बर जैन समाज,
शिवाजी पार्क, अलवर (राज.)

प्राप्ति स्थान: निर्ग्रन्थ ग्रन्थमाला, बौलखेड़ा
जैन साहित्य सदन, श्री दि. जैन लाल मन्दिर, दिल्ली
गजेन्द्र ग्रन्थमाला, H2/16, II फ्लोर, अंसारी रोड,
दरिया गंज, नई दिल्ली-110002 मो. 9810035356

संस्करण : प्रथम

प्रतियाँ : 1100, सन् 2015

मूल्य : 100.00 रुपये

मुद्रकः एन.एस. एन्टरप्राईजिज
2578, गली पीपल वाली, धर्मपुरा, दिल्ली-6
दूरभाष : 9811725356, 9810035356
e-mail : swaneeraj@rediffmail.com

पुरोवाक्

संसार का प्रत्येक प्राणी अभीप्सा और आकांक्षा से ग्रसित है वह गतिशील होना चाहता है। उसे कुछ प्यास है अलभ्य को पाने की। गतिशील तो संसार में कोई भी हो सकता है किंतु गतिशील होने के पूर्व जानने की आवश्यकता है कि वह किस दिशा में गतिशील हो। दिशा का निर्णय किए बिना मंजिल का चयन किये बिना, उद्देश्य का निर्धारण किए बिना चलना व्यर्थ एवं अनिष्टकारी है। अंधकार में भटकने वाले प्राणी असंख्यात और अनंत हैं किन्तु यदि वे दिव्य प्रकाश को प्राप्त कर लें तो निःसंदेह वे मंजिल को प्राप्त करने में समर्थ हो सकेंगे। आवश्यकता है उस अंधकार में जलते हुए दीपक की, आवश्यकता है अरण्य में भटकते हुए व्यक्ति को सद्मार्ग की, आवश्यकता है जीवन में उस प्रकाश किरण कि जिसके बिना समग्र जीवन दुख का खजाना है। उस प्रकाश को पाने के लिए आवश्यक है एक नंदा द्वीप प्रज्वलित करने की, जो कभी बुझे न। स्वाध्याय के माध्यम से इसे प्रज्वलित किया जा सकता है।

शास्त्र स्वाध्याय चेतना में बसे हुए अंधकार को दूर करने की क्रिया है, विधि है। जैसे सागर को पार करने के लिए तैरने की कला सीखना आवश्यक है ऐसे ही संसार सागर को पार करने के लिए मोक्ष मार्ग में चलने की कला स्वाध्याय से सीखी जा सकती है।

''स्वाध्यायः स कृतः काले मुक्त्यै द्रव्यादिशुद्धितः।''

द्रव्यादि की शुद्धिपूर्वक योग्य समय में किया गया स्वाध्याय मुक्ति के लिए होता है।

नित्यं स्वाध्यायमभ्यस्येत् कर्मनिर्मूलनोद्यतः।
स हि स्वस्मै हितोऽध्यायः सम्यग् वाध्ययनं श्रुतेः॥

कर्मक्षय करने के लिए उद्यत मुनि को निरंतर स्वाध्याय का अभ्यास करना चाहिए। स्वकीय हित के लिए पढ़ना अथवा समीचीन रीति से शास्त्र का पढ़ना स्वाध्याय है।

स्वाध्यायाद्ध्यानमध्यास्ते ध्यानात् स्वाध्यायमामनेत्।
ध्यानस्वाध्यायसंपत्त्या परमात्मा प्रकाश्यते॥

स्वाध्याय से ध्यान को प्राप्त होता है और ध्यान से स्वाध्याय को प्राप्त होता है। ध्यान और स्वाध्याय रूप संपत्ति से परमात्मा प्रकाशित होता है।

अनंत संसार की यात्रा में अनादिकाल से इस जीवन यात्री की नौका पुण्य-पाप के हिचकोले खाती हुई जन्म-मृत्यु के दोनों तटों का स्पर्श करती है। इस सतत प्रवाही यात्रा में ये नौका कभी ऐसे महत्वपूर्ण तट को भी प्राप्त करती है जिस तट को प्राप्त कर इस यात्रा का अनंतकाल के लिए अंत भी हो जाता है। उस तट के स्पर्श का नाम है-मानव जन्म। बिना मानवता के क्षितिज के आध्यात्मिकता का सूर्योदय नहीं होता। अत: अल्प समय के लिए जब तक इस तट से स्पर्शित हैं तब तक स्वाध्याय के द्वारा चेतना के धरातल को प्रकाशित कर लेना चाहिए।

अल्पायुषामल्पधियामिदानीं, कृतः समस्त श्रुत पाठ शक्तिः।
तदत्र मुक्तिप्रति बीज मात्र-मभ्यस्यतामात्महितं प्रयत्नात्॥

इस समय अल्पायुष्क और अल्पबुद्धि वाले मनुष्यों में समस्त शास्त्रों को पढ़ने की शक्ति कहाँ है अत: मुक्ति के कारणभूत आत्महितकारी शास्त्र को प्रयत्नपूर्वक पढ़ लेना चाहिये।

संसार बीजमज्ञानं संसारज्ञः पुमान् स्मृतः।
ज्ञाने तस्य निवृत्तिः स्यात्प्रकाशे तमसो यथा॥

अज्ञान संसार का कारण है, पुरुष वही माना गया है जो संसार का ज्ञाता है, जिस प्रकार प्रकाश के होने पर अंधकार की निवृत्ति हो जाती है।

चिर पिपासित चेतना को ज्ञान जल की सिक्तता चाहिए, ताकि भव-भवांतर की तिक्तता से प्राण मिल सकें। चिंतन, मनन, ज्ञान, ध्यान व तपस्या की प्रवाहित धारा में निमग्न परम शांति की उपलब्धि हेतु साधना में रत साधुजनों का सान्निध्य मिलना वह क्षणिक जीवन का एक सुअवसर है। ऐसा ही स्वर्णिम अवसर तब आया जब लंबे प्रयास के बाद परम पूज्य गुरुदेव का 2014 का मंगल चातुर्मास अजमेर को मिला। तभी जन-जन को लाभान्वित करने वाली गुरुवर श्री की ''मीठे प्रवचन श्रृंखला'' दस दिनों तक चली। जिस (अमृतमयी वाणी) का लाभ सभी पंथ, जाति, आम्नाय के लोगों ने लिया।

इस श्रृंखला में गुरुवर श्री वसुनंदीजी मुनिराज ने सामाजिक विषयों जैसे-जीवंत कौन, सामाजिक एकता, पापा बिना अपराधी, आध्यात्मिक विषयों जैसे प्रेय से श्रेय, साथी सगा न कोई, सैद्धांतिक विषयों जैसे फोर सर्च लाइट आदि का व्याख्यान अत्यंत रोचक उदाहरणों द्वारा किया और इतना ही नहीं व्यक्तित्व निर्माण एवं सफलता के सूत्र भी पूज्य गुरुदेव ने प्रदान किए।

विभिन्न विषयों पर तत्त्वज्ञान की गूढ़ गुत्थियों को सहज व सुलझे हुए रूप में उदाहरणों के माध्यम से समझाते हुए गुरुवर श्री ने बताया कि धर्म और नैतिकता जीवन के प्रत्येक क्षेत्र के लिए नितान्त आवश्यक है।

पुस्तक का अध्ययन करने पर आप पाएंगे कि इसका प्रत्येक पृष्ठ जीवन को नया आलोक देने वाला है।

प्रस्तुत पुस्तक ''न मिटना बुरा है, न पिटना'' के संकलन व संपादन में यदि कोई त्रुटि रह गई हो तो विज्ञजन संशोधित कर ही इसका अध्ययन करें। इस कृति के संकलन में सहयोगी एवं पांडुलिपि तैयार करने में संघस्थ त्यागीव्रती, मुद्रण व प्रकाशक करने में सहयोगी सभी धर्मस्नेही जनों को पूज्य गुरुदेव का मंगलमय शुभाशीष।

परम पूज्य आचार्य श्री वसुनंदी जी गुरुदेव को उनके 27वें दीक्षा दिवस के अवसर पर भेंट करने-में असमर्थ, अकिंचन हैं फिर भी

''हमारा जीवन जिसको किया साकार, अर्पित है।
अनंत उपकारों का पुण्याहार समर्पित है।''

गुरु-चरणों में
अनंतश: नमन-नमन-नमन

जैनम् जयतु शासनम्	ॐ ह्रीं नम:
श्री शुभमिति आश्विन कृष्ण षष्ठी	आर्यिका वर्धस्वनंदनी
वीर निर्वाण संवत् 2541	3 अक्टूबर, 2015
श्री संभवनाथ दि. जैन मंदिर	शनिवार
शिवाजी पार्क, अलवर	

अनुक्रमणिका

क्र.	नाम	पेज स.
	पुरोवाक्	3
1.	अपना पराया	9
2.	ना मिटना बुरा है न पिटना	37
3.	माटी कहे कुम्हार सो	62
4.	Personality Development	84
5.	पाप बिना अपराधी	102
6.	सहज पके सो मीठो होए	130
7.	प्रेय से श्रेय	155
8.	तैयारी जीत की	176
9.	साथी सगा न कोई	199
10.	फोर सर्च लाइट	230
11.	जीवंत कौन	251
12.	सामाजिक-एकता	271

अपना पराया

अभी आप लोग माननीय सांसद महोदय रासासिंह रावत जी से उनकी विद्वत्ता पूर्ण और निर्मल चित्त से उत्पन्न हुए विचारों को सुन रहे थे। जो व्यक्ति जैसा होता है उनके अंतरंग से वैसे ही शब्द निकलते हैं। यदि बर्तन कांसे का है तो कांसे की ध्वनि निकलेगी, बर्तन लोहे का है तो लोहे की ध्वनि निकलेगी और यदि बर्तन सोने का है तो ध्वनि सोने की निकलेगी। व्यक्ति के श्री मुख से वही वचन निकलते हैं जो व्यक्ति के अंतरंग में होती है। व्यक्ति उसी प्रकार का विचार कर सकता है जिस प्रकार का व्यक्ति है। पापी व्यक्ति कभी पुण्यरूप विचार नहीं कर सकता तो पुण्यात्मा व्यक्ति के मन में कभी पाप के विचार नहीं आते। नरक में रहने वाला नारकी कितना भी चाहे किंतु वह शुभ विक्रिया नहीं कर सकता। स्वर्ग में रहने वाले देव चाहें तब (नारकी के समान) भी अपने परिणाम खराब नहीं कर सकते।

जैसा द्रव्य वैसा परिणाम

जैसा द्रव्य होता है उसी प्रकार के उसमें परिणाम होते हैं। भूसा कितना भी महंगा हो जाए और सोना कितना भी सस्ता हो जाए तब भी दोनों का मूल्य एक नहीं हो सकता। सबकी अलग-अलग कीमत होती है, द्रव्य पर निर्भर करता है, सोना सोना है, लोहा लोहा है। चाहे भले ही लोहा उत्कृष्ट स्थान पर रखा है चाहे सोना जघन्य स्थान पर रखा है तब भी सोने की कीमत में कहीं कमी नहीं आती। और लोहा कहीं भी रखा है लोहा लोहा रहता है चाहे वह जौहरी की दुकान पर हो चाहे कबाड़ी की दुकान पर हो, उसकी कीमत नहीं बढ़ जाती। महानुभाव, इससे सिद्ध होता है प्रत्येक द्रव्य की एक निश्चित क्षमता होती है उस क्षमता के अनुसार ही उस द्रव्य में परिणमन होता है परिणमन उससे विपरीत और पृथक् नहीं होता। क्योंकि जैन दर्शन में

द्रव्य और गुण और उनकी पर्याय सबको एक साथ माना है, कोई भी द्रव्य अपने गुणों से अलग नहीं होता और कोई भी पर्याय अपने द्रव्य व गुणों से पृथक् नहीं होती। जैसे किसी वस्तु की परछाई पड़ रही है तो परछाई और वस्तु अलग-अलग दिखाई दे रहे हैं किंतु जैसी स्थिति उस परछाई की है इससे सिद्ध होता है वह वस्तु भी उसी प्रकार की होगी।

महानुभाव द्रव्य का परिणमन ही पर्याय कहलाती है, तो द्रव्य में जैसा-जैसा परिणमन होता चला जाता है, वैसी-वैसी पर्याय आती चली जाती हैं। अभी आपने संक्षेप में कितनी अच्छी बातें सुनी कि व्यक्ति पर किसका कैसा प्रभाव पड़ता है। व्यक्ति जैसा अन्न खाता है उसका मन वैसा हो जाता है। जैसा पानी पीता है वैसी वाणी बोलता है जैसा संग होता है वैसा रंग होता है, जैसे विचार आते हैं वैसा आचार होता हैं। इत्यादि बातें आपने सुनी।

निंदा और प्रशंसा में रखें साक्षी भाव

ये बातें यदि हम अपने जीवन में विचार करते रहें कोई व्यक्ति हमें बुरा कहता है तो हम उस व्यक्ति से लड़ने के लिये न बैठें, हम अपने अंतरंग में झांककर देखें कि वास्तव में मेरे अंदर बुराई है या नहीं है। यदि मेरे अंदर बुराई नहीं है तो वह व्यक्ति मुझे बुरा नहीं कहता और यदि मेरे अंदर बुराई है तो सामने वाला बुरा कह रहा है तो मुझे बुरा क्यों लग रहा है, बुराई तो मेरे अंदर है। और दूसरी बात जब ये बुराई मेरे अंदर नहीं है तो कोई कितना भी बुरा कहता रहे तो तुम कहोगे मुझसे थोड़े ही कह रहा है और बुरे व्यक्ति को ही अपनी बुराई बुरी लगती है। अच्छे व्यक्ति को बुराई कभी बुरी नहीं लगती। बुरा व्यक्ति बुराई को सहन नहीं कर सकता, अच्छा व्यक्ति अपनी बुराई सुनने को इच्छुक रहता है। बुरा व्यक्ति अपने मन में सदैव यह सुनने को लालायित रहता है कब मेरी प्रशंसा के दो शब्द मुझे सुनने को मिलें।

किंतु जो व्यक्ति प्रशंसा और निंदा से थोड़ा सा ऊँचा उठ जाता है उस व्यक्ति को अपनी निन्दा प्रशंसा से कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता। जो व्यक्ति जघन्य भूमिका में रहता है उसे बुराई के शब्द चुभते हैं और जो ऊँचा उठ जाता है उसे बुराई के शब्द इतने चुभते तो नहीं किंतु अच्छाई के शब्द सुनना चाहता है। जो और ऊँचा उठ जाता है फिर न बुराई के शब्द चुभते हैं न अच्छाई के शब्द, उसे कोई प्रभावित नहीं कर पाते, यह कहलाता है उसका साक्षी भाव।

जैसी हवा वैसी उड़ावनी

महानुभाव ! मनस्वी व्यक्ति, पुण्य पुरुष, महापुरुष उनकी अलग ही वृत्ति होती है, अलौकिकी वृत्ति होती है वह लोक से पार हो जाते हैं। आचार्य भगवन् अमृतचन्द्र स्वामी ने लिखा है ''मुनीनाम् अलौकिकी वृत्तिः'' मुनि अलौकिकी वृत्ति में जीने वाले होते हैं। महानुभाव, अलौकिक वृत्ति लोक के पार दृष्टि पहुँच जाए तब ही प्रारंभ होती है। जिसकी दृष्टि केवल लोक तक सीमित है तब तक वह अलौकिकी वृत्ति का निर्वाह नहीं कर सकता क्योंकि लोक में रहने वाले व्यक्ति को तो लोक के अनुसार चलना ही पड़ेगा, नहीं चलेगा तो लोक व्यवहार में जो असफल हो गया, वह जीवन में सफलता प्राप्त नहीं कर सकता।

जैसी हवा चलती है उड़ावनी वैसी ही करनी पड़ती है। हवा तेज है और उड़ावनी अनाज आदि की करते हैं तो ज्यादा-ज्यादा गिराते जाते हैं यदि हवा कम चलती है तो कम-कम गिराते हैं-यदि कम हवा में ज्यादा-ज्यादा गिराएंगे तो भूसा और अनाज दोनों अलग-अलग नहीं हो पायेंगे। और ज्यादा हवा चल रही है और थोड़ा-थोड़ा गिराएँगे तो भूसे के साथ अनाज भी उड़कर वहाँ पहुँच जाएगा। इसलिए जो व्यक्ति लोक व्यवहार के अनुसार चलता है निःसंदेह वह लोक प्रिय बन जाता है। महानुभाव, जो व्यक्ति लोक व्यवहार का उल्लंघन

करके, मर्यादा का उल्लंघन करके, आत्मानुशासन का उल्लंघन करके, धर्म और नीतियों का उल्लंघन करके यदि सत्य के साथ भी रहे तो उसकी आत्मा में तो सत्य हो सकता है किंतु ऐसा व्यक्ति भी लोकनिंद्य हो सकता है।

मनोवृत्ति अच्छे को अपनाने की

मैं समझता हूँ संसार के जितने भी पदार्थ हैं उन सभी पदार्थों को आपने केवल दो श्रेणी में बाँट दिया है या तो उन्हें आप अपना कहते हैं या पराया कहते हैं तीसरा शब्द उपयोग करने के लिए आपके पास है ही नहीं। किसी चीज को देखकर के अच्छी चीज लगती है तो उसे अपना बनाने का प्रयास करते हैं। जो चीज आपको अच्छी नहीं लगती उसे परायी ओर फेंकना चाहते हैं। यदि आपको जीत अच्छी लगती है तो आप स्वीकार करना चाहते हैं और हार बुरी लगती है तो उसे दूसरी पाली में देना चाहते हैं। यदि आपके सामने दो वस्तुएँ हैं और आपको दो में से एक ही मिलनी है तो आप अच्छी वस्तु को अपना बनाना चाहेंगे।

छोटा-सा उदाहरण आपकी जेब में एक-एक हजार के दो नोट हैं। एक नोट नया सा करकरा सा नोट है और दूसरा मैला सा गंदा सा नोट है। अब आप अपनी मनोवृत्ति को देखना कि आपके हाथ से दुकानदार के पास पहले कौन सा नोट जाएगा। आप जानते हैं जो करकरा नोट है वो बाद में भी चल जाएगा कोई बात नहीं किंतु पुराना नोट ये तो वैसे ही ढीला सा हो रहा है और कहीं भीग गया कहीं हाथ से फिसल गया तो फट जाएगा इसलिए पहले इसे चलाओ। तो व्यक्ति उस बुरी चीज को यद्यपि दोनों का मूल्य एक हजार है, एक हजार एक रुपये में नहीं चलेगा और दूसरा वाला 999 रु. में नहीं चलेगा। फिर भी मनोवृत्ति यह है जिसे मन में अच्छा स्वीकार कर लिया उसे अपने पास रखना चाहता है और जिसे बुरा स्वीकार किया उसे व्यक्ति दूसरे

की पारी में फेंकना चाहता है। चाहे दूसरा व्यक्ति अच्छे का हकदार हो चाहे हम खुद उस अच्छे के अधिकारी नहीं हों फिर भी हमारा मन उस अच्छे को लेना चाहता है क्योंकि प्रत्येक चेतना का स्वभाव, प्रत्येक प्राणी के प्राणों का स्वभाव अच्छाई को ग्रहण करना है बुराई को छोड़ना है। ये बात अलग है कि हम अपने स्वभाव को भूल गए हैं, ये बात अलग है कि व्यक्ति विभाव में जी रहा है और आश्चर्य की बात तो यह है कि विभाव को स्वभाव मान लिया है।

भूलः स्वभाव को भूलने की

जैसे किसी व्यक्ति को क्रोध ज्यादा आता है, थोड़ी-थोड़ी बात पर क्रोध आता है, सहन नहीं होता तो लोग क्या कहते हैं महाराज जी इससे ज्यादा चर्चा मत करो इन्हें क्रोध आता है इनका तो स्वभाव ही है क्रोध करना। अरे बच्चों का तो स्वभाव ही है रूठ जाना इनका तो स्वभाव ही है डाँटने का। तो ये स्वभाव नहीं है। क्रोध करना, मान करना, मायाचारी करना, लोभ करना, हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह ये किसी प्राणी के स्वभाव नहीं हो सकते। ये सब क्या हैं मनोविभाव हैं। किंतु विभाव हमारे साथ इतना मिल गया है, इतना परिचित हो गया है कि हम भेद नहीं कर पा रहे हैं जो विभाव हमारा शत्रु है, जो विभाव हमें संसार में परिभ्रमण कराता है, जो विभाव हमें हमारी आत्मा की निधि से दूर रखता है, जो विभाव हमें अपने घर से निकाल करके जेल में डाल देता है उस विभाव को हम अपना कह रहे हैं। यही हमारे जीवन की सबसे बड़ी भूल है और जो स्वभाव हमारा है उसे हम भूल करके बैठे हैं। वास्तव में हमारा है क्या!

पूज्य आचार्य भगवन् श्री कुन्द-कुन्द स्वामी ने जो लगभग आज से 2000 वर्ष पूर्व हो गए हैं उन्होंने 84 पाहुड़ों की रचना की उसमें एक पाहुड़ है समय पाहुड़। समय पाहुड़ या समय प्राभृत, समय कहें तो आत्मा और प्राभृत कहें तो भेंटस्वरूप उन्होंने आत्मा का शुद्ध

स्वरूप उपहार में संसारी प्राणियों को दिया है। उसमें लिखा है कि-आत्मा अनादिकाल से आत्मा ही थी, आत्मा आज भी आत्मा है और अनंतकाल तक ये आत्मा आत्मा रहेगी। अनंतकाल पहले भी ये आत्मा जीवंत थी, सचेतन थी, चेतनमय थी और आज भी आत्मा चेतनमय है अनंतकाल के बाद भी चेतनमय रहेगी। पुद्गल अनंतकाल पहले भी पुद्गल था आज भी पुद्गल है और आगे भी पुद्गल रहेगा। अनंतकाल पहले भी आत्मा अपनी ही थी, आज भी अपनी है, अनंतकाल के बाद भी अपनी ही रहेगी। पुद्गल अनंतकाल पहले भी मेरा नहीं था, आज भी मेरा नहीं हो सकता, अनंतकाल के बाद भी मेरा नहीं होगा। आत्मा कभी भी अचेतन नहीं हो सकती और पुद्गल कभी भी चेतन नहीं हो सकता।

द्रव्य नित्य है, आत्मा आत्मा है पुद्गल को कभी आत्मा नहीं बनाया जा सकता। जो जैसा है वैसा ही रहेगा वैज्ञानिक कितना भी प्रयास कर लें एक परमाणु को भी नष्ट नहीं कर सकते और एक परमाणु की भी नई उत्पत्ति नहीं कर सकते। संसार में जितने जीव हैं उतने ही रहेंगे। एक जीव को पूरी दुनिया मिल करके भी नष्ट नहीं कर सकती और पूरी दुनिया मिलकर के एक नए जीव का निर्माण भी नहीं कर सकती। पुद्गल का जितना भी प्रचय यहाँ संसार में विद्यमान है उस पुद्गल के प्रचय का एक परमाणु भी कभी भी किसी भी काल में किसी भी प्रकार से नष्ट नहीं किया जा सकता और एक नया परमाणु कभी उत्पन्न नहीं किया जा सकता, जितने हैं उतने ही रहेंगे। आप कहेंगे महाराज ऐसे कैसे नष्ट नहीं किया जा सकता एक लकड़ी का गट्ठर रखा है उसमें आग लगा दी तो वह जल गया नष्ट हो गया। ये तुम्हें भ्रम हो गया है कि तुमने नष्ट कर दिया। लकड़ी को जलाकर के राख बना दिया किन्तु परमाणु नष्ट नहीं किए। राख को तुम मिट्टी में मिला दो तब भी उसका अस्तित्व तो रहेगा।

यह प्रकृति का नियम है जो सत् है उसका कभी अभाव नहीं होता जो अक्षत है उसका कभी प्रादुर्भाव नहीं होता।

मानो वही जो हो

अपना-पराया शब्द को तीन बार अपन पढ़ें तो इसमें से कुछ अर्थ निकल कर के आता है पढ़ने की स्टाईल थोड़ी सी चेंज करेंगे। ''अपना-पराया''। क्या समझ में आया। अपना जो अपना है और जो पराया है-वो मेरे हाथ में नहीं है। अपना क्या है? पराया है। जो अपना था वो अपना नहीं हो रहा है दूसरों के हाथ में चला गया है। दूसरी प्रकार बोलें तो ऐसे बोल सकते हैं–अपना-पराया। जो पराया है उसको हमने अपना मान लिया है। क्या है? जो वास्तव में है तो पराया है, अपना नहीं है किंतु अपना किसको मान लिया हमने। पराया जो है उसे अपना मान लिया। कहने का अर्थ क्या था कि जो अपना है वह पराया हो गया है क्यों पराया हो गया? मकान तो तुम्हारा था तुमने दूसरे को किराए पर दे दिया वह कहता है 25 साल से मैं रह रहा हूँ, 50 साल से रह रहा हूँ तू जा कोर्ट में क्या करेगा मेरा, मैं नहीं खाली करूँगा। ये तो मेरा हो गया और तुम्हारा मकान अपना था कागज तुम्हारे पास है रजिस्ट्री तुम्हारे पास है किंतु वह अपना मकान भी अब पराया हो गया। अब उससे कह रहा है भईया कोर्ट में जाकर क्या करूँगा राजीनामा कर ले 10 लाख रुपये ले लो। जिस समय लिया था तब कीमत 10,000 रु. भी नहीं थी। आज वह 10 लाख रु. देने को तैयार है। मकान तुम्हारा है वह तो किराया भी नहीं दे रहा अब पराया हो गया। वह अपना भी पराया हो गया। दूसरी बात जिस किराये के मकान में तुम रह रहे हो, किराए की ड्रेस पहन करके बाबूजी बन गए राजा बन गए, राजा की ड्रेस पहन ली किराए की लाए अब उतार करके देने का मन नहीं कर रहा है। है तो वह पराया किंतु हमने क्या मान लिया अपना-पराया। तो अब समझेंगे। अपना तो पराया हो गया है और पराया सो अपना मान लिया है।

मान, भले ही लो केवल मानने से काम चलता नहीं है। ये तो गणित के सवालों में चलता है x का मान आपने मान लिया माना कि बाबूजी की *Income* x रु. है और दूसरी y रु. है। $x + y$ जोड़कर के 326 रु. है पुन: दूसरे दिन उनकी जेब में x रु. y रु. जोड़ लिया माना 242 है पुन: निकाल करके मान रख देंगे और निकालकर आपने *Calculation* किया x और y का मान रखने पर समझ लिए। किंतु वास्तव में जेब में x थोड़ी है जेब में क्या है रुपये हैं किंतु मान लिया है और केवल मानने से काम नहीं चलता, मानने की भी सीमा होती हैं कहाँ तक माने। व्यक्ति कहता है तू तो अपने आपको परमात्मा मान ले। अरे ! परमात्मा कैसे मान लूँ भाई मैं परमात्मा हूँ नहीं, परमात्मा हो सकता हूँ। यदि परमात्मा मैं हूँ तो मेरी प्रवृत्ति परमात्मा जैसी होनी चाहिए। परमात्मा जन्म नहीं लेता, परमात्मा का मरण नहीं होता, परमात्मा वृद्ध नहीं होता, परमात्मा रोगी नहीं होता, परमात्मा खाता पीता नहीं है, परमात्मा संसार के भोग नहीं भोगता मैं ये सब कार्य कर रहा हूँ मैं कैसे कह दूँ कि मैं परमात्मा हूँ। जो संसार की क्रिया कर रहा है और जो संसार की क्रियाओं से रहित हो गया है शरीर से भी रहित हो गया निराकारी हो गया, अनंत गुणों का पुंज हो गया, अनंत दर्शन वाला, अनंतज्ञान वाला, अनंतशक्ति वाला, अनंतसुख वाला वह परमात्मा है मैं कैसे हो सकता हूँ। मान लो, ऐसे कैसे मान लूँ। ये कोई गणित का सवाल है जो मान लो। ऐसे मानने से काम नहीं चलता।

जो कुछ है सो है

किसान मान ले कि मेरे खेत में बहुत अच्छी फसल आ गई है खेत ऐसे खुले पड़े हुए हैं। जुताई भी नहीं हुई तो फसल और कैसे आ गई। तो ऐसे मानने से काम नहीं चलता। जो है सो है। कोऊ कहत कछु है नहीं, कोऊ कहत कछु है। संसार में जो ज्ञानी हैं, विद्वान हैं, त्यागी हैं, तपस्वी हैं, संत हैं, अरहंत हैं वे कहते हैं संसार में कुछ भी

सार नहीं है। और ये कहते हैं कौन कहता है सार नहीं है मुझसे पूछो संसार में रहते हैं। संसार में हमें आनंद ही आनंद आ रहा है। संसार में बहुत सार है, एक तपस्वी कहता है मैं तो आत्मा में लीन होता हूँ संसार से निरीह हूँ तब भी संसार में आनंद की अनुभूति करता हूँ।

कोऊ कहत कछु है नहीं, कोऊ कहत कछु है।
इस है और नहीं के बीच में, जो कछु है सो है।

इस है और 'नहीं' के बीच में संसार में जो कुछ भी है 'है' और 'नहीं' के बीच में ही है। कोई व्यक्ति 'है' तक पहुँच जाते हैं और कोई व्यक्ति लौटकर 'नहीं' तक आ जाते हैं। कोई बीच में चक्कर लगाते रहते हैं। एक जगह स्थाई रुक जाओ तो संसार की दोनों बात सही हैं। है-हमारा स्वभाव है नहीं-हमारा विभाव हमारे पास नहीं होना चाहिए। हम हैं और नहीं यानि स्वभाव और विभाव दोनों में अभी गोते लगा रहे हैं।

यही आपने देखा अपना और पराया। जो अपना है वह कभी भी पराया नहीं हो सकता वह अपना ही रहेगा। ये बात अलग है अपनी वस्तु को भूल जाएँ, ये बात अलग है हमारी वस्तु गुम जाए। वस्तु हमारी गुम गयी कोई उठाकर ले जायेगा, उसे अपनी कह देगा। किंतु वास्तव में यदि वह तुम्हारी वस्तु है, तुमने ईमानदारी के साथ उसका अर्जन किया है तुम्हारे पुण्य की वस्तु है तो तीन लोक का कोई भी प्राणी उस वस्तु को भोग नहीं सकता और तुम्हारी नहीं है कितना भी छीन कर ले आना उसे अपने घर में रख सकते हो किंतु भोग नहीं सकते। बिना पुण्य के, बिना पूर्व के भाग्य के वस्तु के एक कण का भी भोग उपभोग नहीं किया जा सकता। ये बिल्कुल शाश्वत सत्य है।

माना कि किसी ने आपके मकान पर कब्जा कर लिया। यदि आप न्याय मांगने के लिए जाएँगे तो आपकी वस्तु आपको मिलेगी ही मिलेगी किंतु उसे प्राप्त करने में बड़ी कठिनाई होगी क्योंकि आप

इतने दिनों से अपनी वस्तु को भूल कर के बैठे थे। इसीलिए राजीनामा करके वह देने को तैयार तो है किन्तु उसके बदले में आपसे कुछ पैसा लेगा। तो पैसा तो आपको देना पड़ेगा आप अपनी भूल का ये प्रायश्चित कर रहे हैं ये आपको हरजाना देना पड़ रहा है आपका जुर्माना हुआ। आप अपनी वस्तु को क्यों भूल गए। आपने ये आवश्यकता से ज्यादा क्यों रखी। इसीलिए अब आप उसको प्राप्त करना चाहते हो तो पुनः उसको चुकाना पड़ेगा। किंतु आपकी वस्तु आपकी रहेगी कोई कब्जा कर नहीं सकता किसी व्यक्ति ने जंघा चीरकर उसमें हीरे रख दिए तो हीरे उसके नहीं हो गए। जब आत्मा निकलेगी तो मिट्टी में ही पड़कर रह जायेंगे। यदि कोई व्यक्ति कुछ भी अपने शरीर में रख ले तो शरीर में रह जायेगा आत्मा के साथ नहीं जाएगा। कोई कर्म भी आत्मा के साथ चिपक जाता है पुण्य और पाप, वह कर्म भी नियम से उदय में आता है, फल देता है पुनः वह नष्ट हो जाता है किंतु वह कर्म कभी आत्ममय नहीं बन जाता।

अपना शाश्वत है

ये ध्यान रखना जो धागा है वह धागा है, रंग-रंग है। धागा और रंग दोनों एक मेक हो गए फिर भी धागा-धागा और रंग-रंग है। रंग धागा नहीं है और धागा रंग नहीं है। दूध और शक्कर भले ही दोनों एक मेक हो गए फिर भी दूध-दूध है शक्कर-शक्कर है। शक्कर दूध नहीं है और दूध शक्कर नहीं है दोनों अलग-अलग हैं। चाहे आपने हल्दी और चूना को एक मिला दिया और दोनों को मिलाकर के तीसरा लाल रंग आ गया। भले ये दोनों की विकृत अवस्था दिखाई दे रही है, फिर भी हल्दी-हल्दी है, चूना-चूना है। ऐसे ही हमारी आत्मा का जो स्वभाव है वह आत्मा का स्वभाव, चाहे आत्मा अनंत काल से जन्म-मरण कर रही है संसार के दुःखों को भोग रही है फिर भी आत्मा कभी भी पुद्गल नहीं हो सकती और जो पुद्गल है उसे कभी

आत्मा नहीं किया जा सकता। जैसे अग्नि को पानी नहीं कर सकते पानी को अग्नि नहीं कर सकते। अग्नि और पानी का संयोग करने से पानी को गर्म तो किया जा सकता है किन्तु पानी को अग्नि नहीं बनाया जा सकता। पानी के संयोग से अग्नि को बुझाया तो जा सकता है किंतु अग्नि को ठण्डा नहीं किया जा सकता दोनों के अपने-अपने अलग-अलग स्वभाव हैं, पृथक-पृथक स्वभाव हैं। कोई भी द्रव्य अपने स्वभाव का मूलत: कभी त्याग नहीं कर सकता।

महानुभाव ! और पराया क्या है? पराया वह है, जिसके हम सपने देखते हैं, जिसको हम सपने में देखते हैं, जिसे हम आज तक अच्छा मान कर जीते रहे, जिसे पकड़ने के लिए दौड़ते हैं, जो बाहर दिखाई दे रहा है वह सब पराया है, जिसे अपना बनाने की कोशिश करते हैं वह सब पराया है। सपने में आ रहा कि ये वस्तु मेरी है ये वस्तु मेरी है ये सपना जब आ रहा है ये समझो सब पराया है। क्योंकि सपना कभी अपना नहीं होता, जो अपना है वह कभी सपने जैसा नहीं होता। अपना कभी नष्ट नहीं हो सकता और पराया कभी शाश्वत रह नहीं सकता।

जीवन में चिंतन करो एकांत में बैठ करके आँख बंद करके कहीं अकेले में जाओ जंगल में, मंदिर में, घर के किसी कोने पर, छत पर बैठ जाओ और आँख बंद करके सोचो ऐसी मेरे पास कौन सी चीज है जो कभी नष्ट नहीं हो सकती। यहाँ तक की जिसे मौत भी नहीं छीन सकती। वह चीज क्या है? जिसे भाई नहीं छीन सकता, चोर नहीं छीन सकता, भूकंप नष्ट नहीं कर सकता, आग लग जाए तो नष्ट नहीं हो सकती वह चीज मेरी अपनी हो सकती है-वह आत्मा है। सबसे न्यारा आत्मा।

''सब जानन देखन हारा, यह आत्मा हमारा।
यह कटे नहीं काटे इसे तोड़ सके न भाटे,
ये मरे न मरेगा हमारा, ये आत्मा हमारा।''

अग्नि में जलता है न पानी में भीगता है, न हवा से सूखता है यह आत्मा है। इस आत्मा को कोई नष्ट नहीं कर सकता। ये ऐसा अखण्ड आत्मा, जिसकी सत्ता को कोई नष्ट नहीं कर सकता।

यह शाश्वत अजर अमर है। जो मैं हूँ, वास्तव में उसे तुम भूल गए। हम क्या मान करके बैठ गए ये मेरा चश्मा है, ये मेरा बैग है, ये मेरा पैन है, ये मेरे कपड़े हैं, ये मेरा घर है, ये मेरा शरीर है, ये मेरी पत्नी है, ये मेरा पुत्र है, ये मेरा भाई है, ये मेरा मित्र है, ये मेरे रिश्तेदार हैं। ''मेरा'', यहाँ तक की व्यक्ति शत्रु को भी कहता है ये मेरा शत्रु है। उसको भी ''मेरा'' कहके कहता है जिससे द्वेष कर रहा है उसमें भी मेरा।

ये ममत्व भाव जीव के संसार का कारण है ''अहमिदं ममेदं!'' ममेदं और अहमिदं। ममेदं यह मेरा और अहं-इदं-मैं यह। मैं ये हूँ और ये मेरा है। ''आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने कहा अहमिदं यह धारणा ही आपकी उल्टी धारणा है वस्तु को अहमिदं ''ये मैं हूँ'' ''ये मेरा है'' यह धारणा ही मिथ्या है ये धारणा ही निर्मूल है। इसमें कहीं आधार नहीं ये निराधार है। जो तेरा है उसे संसार का कोई व्यक्ति छीन नहीं सकता। जो तेरा है वह तेरा नहीं वह स्वयं तू है। कौन है ? क्योंकि तेरी आत्मा और तेरी आत्मा के गुण तुझसे अलग नहीं हैं। इसलिए संसार में तेरा तो कुछ है ही नहीं जो है सो तू है और उस वस्तु 'तू' के अलावा जो कुछ भी है वह सब पराया है।

गणना स्वयं की

महानुभाव, संसार में चार प्रकार के आदमी होते हैं पहली तरह के आदमी वह होते हैं जो कहते हैं-मेरा सो मेरा, तेरा सो मेरा। जो मेरा है वह तो मेरा है और ध्यान रख जो तेरा है वह भी मेरा है। मेरा राज्य तो मेरा है ही तेरे राज्य पर भी मैं कब्जा कर लूँगा वह भी मेरा है। मेरा घर तो मेरा है ही मैं तेरे घर को भी लूट लूँगा। तो जो पहली प्रकार

के व्यक्ति जिन्हें दुष्ट कहें, जो अपने को अपना कहते हैं और दूसरे को भी अपना कहते हैं। दूसरे प्रकार के व्यक्ति शिष्ट कहें। वह कहते हैं ''मेरा सो मेरा, तेरा सो तेरा।'' पहले प्रकार के दुष्ट, दूसरे प्रकार के शिष्ट और तीसरे प्रकार के विशिष्ट होते हैं। वे कहते हैं भैया ! तेरा सो तेरा और मेरा सो भी तेरा। ले जा भाई मुझे नहीं चाहिए, और चौथी प्रकार के व्यक्ति होते हैं उन्हें क्या कहूँ उत्कृष्ट, सर्वोत्कृष्ट। उनसे तो उत्कृष्ट कोई हो ही नहीं सकता। वह कहता है न कुछ तेरा, न कुछ मेरा ये दुनिया रैन बसेरा।

यहाँ पर सब मेरे हैं इस संसार में क्या तुम्हारा है। किसी वस्तु को लेकर के तुम कह दो मेरी है कल दूसरा कह दे मेरी है। जिस मकान में तुम रह रहे हो उस मकान को तुम अपना कहते हो पिताजी भी ऐसा कहते हैं, उससे पहले बाबाजी ऐसा कहते थे उसके पहले उनके पिताजी ऐसा कहते थे।

सब कहते हैं मेरा, मेरा, मेरा क्या वास्तव में तुम्हारा है। ये तो सराय है व्यक्ति आता है क्षण भर के लिए, नाम लिख लिया ये मेरा हो गया। जैसे कोई शराबी व्यक्ति चौराहे पर खड़ा होकर के सामने से आती बस को देख करके ताली बजाता है, ओह मेरी बस आ गई। और हँसता हँसता आनन्दित होता है मेरे पास इतनी सारी बसें हो गईं, और सबकी गिनती कर रहा है और थोड़ी देर बाद बस रवाना हो गई। रोने लगा मेरी बसें चली गई, तेरी थीं कब? बच्चे ऐसा करते हैं वे कागजों को नोट बनाकर के मेरे पास इतने नोट हो गए। मिट्टी के घरोंदें बना कर मैं इस टीले का मालिक बन गया और पुन: कागज लगा के चिपका कर लकड़ी में ध्वजा फहरा दी मैं राजा बन गया। आप भी चाहे भले ही उम्र में बड़े हो गए बाल सफेद हो गए किंतु अंदर का बचपना अभी नहीं गया। जैसे बच्चे स्टूल पर खड़े होकर कहते हैं मैं बड़ा हो गया। बच्चा कहता है ये राज्य मैंने जीत लिया।

पहले बचपन में आप लंगड़ी खेलते थे, मालूम नहीं अब खेलते नहीं खेलते। कैसे फुदक-फुदक के आते थे और कॉलम बनाते थे और उसमें पत्थर डाल कर के आगे जाते थे और उसे पूरा एक बार आप खेल लेते और कहते ये राज्य मैंने जीत लिया। और उस पर अपना निशान बना देते थे दूसरा व्यक्ति जब खेलता तो आपके राज्य को लांघकर उल्लंघन करके जाता था पैर नहीं रखता था। यदि उसे पैर रखना है तो वह हिस्सा मांगता कि मुझे अपने राज्य में जगह दे दो। मैं एक पैर रखने की जगह चाहता हूँ। तो उसे आप जगह दे देते हो। ऐसे पुनः जीतते-जीतते उसने जितने कॉलम जीत लिए पुनः वह उसका राजा बन गया वह विजयी हो गया। तो ऐसे ये बच्चों के खेल होते थे तो हमें लगता है कि आप उमर में बड़े भले ही हो गए फिर भी अंदर का बचपना नहीं गया। चाहे कितना भी व्यक्ति बड़ा हो जाए अंदर का बचपना वह जा ही नहीं रहा है। 60 साल में भी 8 साल की अनुभूति ज्यों की त्यों ताजी बनी रहती है।

तो महानुभाव, ये बच्चों जैसे खेल हैं। बच्चों ने कंकड़ पत्थरों को इकट्ठा कर लिया कहते हैं मेरे पास इतने पैसे हो गए इतने नोट हो गए और तुमने इतने चमकते हुए कंकड़ पत्थर इकट्ठे कर लिए जिसे आप हीरे-मोती कहते हैं, नीलम, पन्ना, मूंगा कहते हैं। इसे और भी रत्नों की उपमा देते हैं, तो जैसे बच्चों ने कंकड़ पत्थर इकट्ठे किए गोल नोट बनाए। आपने चौकोर नोट बना दिए सिक्के बना दिए कहते हैं मेरे हैं। और बच्चे जिसके पास दस पंद्रह चमकीले पत्थर हैं, इतना ऊँचा मिट्टी का घरोंदा बना लिया उस पर ध्वजा बना दी उसका महल कितना ऊँचा हो गया उसने राज्य जीत लिए तो वो अपने को बड़ा कहता है। ये काम तो आप भी करते हैं। बताओ न, आपके बड़प्पन में बच्चों के बचपने में क्या अंतर है। प्रवृत्ति तो वही है, कोई विशेष अंतर नहीं है अफसाने बदल गए हैं नाटक तो वही पुराना है।

बस केवल शब्दों की भाषा बदल गई होगी आपके जो अल्फाज हैं वह बदल गए होंगे। किंतु नाटक तो वही चल रहा है उसी प्रकार का रोल है कोई आपकी प्रवृत्ति में अंतर थोड़े ही आ गया।

बच्चा खड़ा होता था स्टूल पर कहता पापा मैं आपके बराबर हो गया बड़ा हो गया। आप खड़े होते हैं 20वीं मंजिल पर कहते हैं मैं देश का सबसे बड़ा व्यक्ति हूँ या इस नगर का सबसे बड़ा व्यक्ति हूँ। बच्चे कह रहे थे ये सब मेरे ही हैं कंकड़, पत्थर, कागजों के टुकड़े, पत्थरों के टुकड़े, जब इन्हें अपना मान रहा था आज उसे अपना मान रहे हैं, बात तो एक ही है।

खुली आँख का सपना

यहाँ तक व्यक्ति, इतना मोहित हो गया, इतना मूर्च्छित हो गया है कि भगवान और मंदिर को कहने लगा ये मेरे भगवान, ये मेरा मंदिर। व्यक्ति की मानसिकता तो देखो जब भगवान अपने स्वचतुष्टय में सिद्धालय में विराजमान हैं। ऋषभदेव से लेकर के महावीर पर्यन्त चाहे राम चन्द्र जी, चाहे हनुमान जी भगवान बन गए सिद्ध बन गए उनकी आत्मा तो वहाँ पहुँच गई, फिर भी पाषाढ़ की मूर्ति बना कर कह रहे हैं हे भगवान तुम मेरे हो। इनको हाथ नहीं लगा देना पहले अभिषेक मैं करूँगा, पहले शांति धारा मैं ही करूँगा वहीं झगड़ा हो जाता है। आश्चर्य होता है हमने धर्म सीखा क्या है? क्या जाना है धर्म के बारे में। हम किसको अपना मानते हैं किसको पराया मानते हैं। केवल अपने अहंकार का पोषण कर रहे हैं। अभी अपने तक पहुँच ही नहीं पाये।

तो महानुभाव, ये सब सपने हैं। क्या हैं? ये सपने हैं व्यक्ति रात में भी सपने देखता है और दिन में भी आँख खोलकर सपने देखता है। रात्रि में आँख मूंद करके जो सपने देखता है उसे तो स्वीकार कर

लेता है कि रात में मैंने ये सपना देखा था किंतु आँख खोलकर जो सपना देखता है उसे स्वीकार नहीं करता। ये सपने भी कब टूट जाएँ रात के सपने की कोई गारंटी नहीं है ये सपना कितना लम्बा चले और कब जल्दी से टूट जाए। ऐसे ही दिन के सपने की कोई गारंटी नहीं है-दिन का सपना चल रहा है जिसमें कल्पना में आप राजा बन जाते हैं महाराजा बन जाते हैं चक्रवर्ती बन जाते हैं क्या-क्या नहीं बन जाते हैं। आप सपने देखते-देखते ही दिन में, आपने साल भर में लाख कमाया, दस लाख कमाया, एक करोड़ कमाया ये बिल्डिंग तुम्हारी, सामने वाली तुम्हारी बाजू वाली तुम्हारी पीछे वाली तुम्हारी ये भी तुम्हारी और आप अपने मन से क्या-क्या नहीं सोच लेते हो। इतना सब कुछ करते चले जा रहे हो सबको अपना कहते चले जा रहे हो किंतु ये सपना देख रहे हैं। जब तक ये सपना टूटा नहीं है तब तक ये सपना आपको सत्य ही दिखाई देता है। खुली आँखों से देखने वाले सपने भी तब तक सच्चे ही लगते हैं जब तक सपना टूटे नहीं। और बंद आँखों से जो सपने दिखाई देते हैं जब तक वह आँख बंद है तब तक सपना सच्चा दिखाई देता है किंतु ध्यान रखना–

''आँख खुली तो सपना गया और आँख मुंदी तो अपना गया।
दो दिन का मेहमान यहाँ पर श्वांस रुकी तो दफना गया।''

महानुभाव, सांस रुकी तो दफना गया पहले आँख बंद का सपना था अब खुली आँख का सपना है। तो आँख बंद के सपने को तो आप सपना कह देते हैं किंतु कौन जो जग रहा है वह कह सकता है कि सपना देखा होगा? जब तक सपना देख रहे हैं तब तक उसे सपना नहीं कह सकते तब तक वह सही लगता है और कई बार ऐसा होता है सपने में भी नए-नए सपने आ जाते हैं। सपने में हम देख रहे थे कि हम कुयें के पाट पर सो रहे थे, हमें सपना आ रहा है ऐसा ऐसा हुआ, सपने में भी सपने आ रहे हैं फिर भी सपने दिखाई दे रहे हैं।

वह सपने देखने वाला व्यक्ति सपना देख रहा है कि मैं चक्रवर्ती बन गया। ''सपने में राज पद पाया, उठ मूरख रुदन मचाया।'' वह घास खोदने वाला घसियारा चक्रवर्ती बन गया। दूसरे मित्र ने जगा दिया। हाय हाय कर रोवन लगा, ले खुरपा मारन को भागा। हाय रे .... तूने मेरी, खोदी सबरी माया.......सपने में राजपद पाया।

तो सपने में राज पद पाया हाथी घोड़े बैल बहुत कुछ थे, किंतु ये सब सपना था। ऐसे ही यह सपना है वह आँख बंद का सपना था यह खुली आँख का सपना है। जैसे ही वहाँ पर आँख खुल जाती है सपना टूट जाता है कुछ भी तुम्हारे पास नहीं। यहाँ पर आँख बंद हो जाती है यह सपना टूट जाता है कुछ भी तुम्हारे साथ नहीं जाता है। महानुभाव, सपनों पर ज्यादा विश्वास नहीं करना चाहिए, सपने मुर्दे की पहचान हैं। सोया हुआ व्यक्ति मुर्दा कहलाता है और सपने देखने वाला व्यक्ति और ज्यादा मुर्दा बन जाता है उसे होश नहीं रहता। जागता हुआ व्यक्ति भी मुर्दा है जो जाग रहा है वह भी यदि सपने देख रहा है तो वह मुर्दा है। भगवान महावीर स्वामी ने कहा जो भूतकाल में जीता है वह अतीत के सपने को याद कर रहा है। जो भविष्यकाल में जीता है वह भविष्य का सपना देख रहा है। केवल वर्तमान में जीने वाला व्यक्ति वह सत्य से साक्षात्कार कर सकता है। वह सपने से रहित हो सकता है।

महानुभाव, ये संसार तो बस ऐसा है कि संसार में आप और हम तो क्या बड़े-बड़े सम्राट हुए शूरमा हुए, चक्रवर्ती हुए, नारायण हुए, प्रतिनारायण हुए, बलभद्र हुए, तीर्थंकर हुए, कोई तो नहीं बचा। न राजा बचा है न रानी बचेगी न तेरी न मेरी कहानी बचेगी। बचा ही क्या है इस दुनिया में मौत से। जो आपने हमने जैसी जिन्दगी जी है अच्छी या बुरी, पुण्य रूप या पाप रूप केवल वह चर्चा में कोई कहानी बचेगी और कुछ न बचेगा।

मृत्यु बोध से आत्म बोध

एक दिन महाराज मिथिला नरेश जनक अपने राज दरबार में विराजमान थे, वहाँ सभी सभासद भी विराजमान थे राजपुरोहित, महामंत्री, सेनापति, कोतवाल एवं सामान्य नगर के नागरिक सभी वहाँ बैठे हुए थे पूरा राजदरबार खचाखच भरा हुआ था। महाराज जनक बताने लगे कि मैंने एक भयानक सपना देखा और सपना मैंने क्या देखा कि मैं बिल्कुल दरिद्र बिल्कुल कंगाल हो गया। कंगाल ऐसा हो गया कि दूसरे राजा ने मेरे राज्य पर चढ़ाई की है पूरे राज्य को घेर लिया है मैं सेना लेकर युद्ध के लिए गया किंतु युद्ध में मेरी सेना पूरी मारी गई। जो प्राणी अपने प्राण बचाना चाहते थे वे मिथला नगरी को छोड़कर भाग गए। मैं भी प्राणों को बचाने के उद्देश्य से युद्ध क्षेत्र से हट गया और जंगल में भाग रहा हूँ। मेरे पास न मुकुट है न राजशाही पोषाक है, न रत्न है कुछ नहीं है अकेला दौड़ रहा हूँ भिखारी की तरह से। मैं तीन दिन का भूखा प्यासा एक दानशाला में पहुँचा भोजन करने के लिए। जब मैं पहुँचा तब तक भोजन समाप्त हो गया। दूसरी जगह पहुँचा वहाँ भी दानशाला बंद हो गई थी। तीसरी जगह पहुँचा वहाँ भी भोजन समाप्त हो गया। ऐसे चलते-चलते तीसरा दिन हो गया वहाँ भी भोजन नहीं मिला।

मैं कहीं दानशाला में संध्या काल में पहुँचा तो वहाँ पर भी भोजन समाप्त हो चुका था। मैंने बहुत गिड़गिड़ा कर दीनता से प्रार्थना की तो नीचे भगोने में जमी हुई खिचड़ी खरोचकर के वह जमी हुई काली सी खिचड़ी परोसकर के दौने में दे दी। मैं उसे लेकर के आगे आ रहा हूँ। मैंने सोचा खिचड़ी ऐसे खाऊँगा तो पेट नहीं भरेगा। थोड़ी-थोड़ी खिचड़ी खाकर पानी पीऊँगा तो पेट भरेगा। और मैं दौना लेकर के जहाँ पानी था प्याऊ के पास आया और दौना मेरे हाथ में था। तभी चील ने झपट्टा मारा और वह दौना लेकर उड़ गई। मेरी

चीख निकल गयी और मैं धड़ाम से जमीन पर गिरा। देखता क्या हूँ मैं तो अपने महलों में सो रहा हूँ।

राजपुरोहित से पूछा, बताइये इस स्वप्न का फल क्या है। क्योंकि मैं वास्तव में देख रहा हूँ कि मैं इस राज्य का राजा हूँ। यह स्वप्न तो मिथ्या होना चाहिए। पुरोहित ने कहा, महाराज आपने आधी बात स्वीकार की जो स्वप्न, आपको रात में दिखाई दिया उसको तो आपने सपना मान लिया किंतु यह भी एक सपना है। सत्य तो यह है कि यह रात्रि का सपना है और जो हम देख रहें है वह दिन का सपना है। ये भी एक सपना है। आपने आधे सपने को तो सपना मान लिया, किंतु (दूसरे आधे) सपने को आप सपना नहीं मान रहे है।

महानुभाव, किंतु वर्तमान काल में लोक व्यवहार में जब अपने व्यक्ति साथ नहीं निभाते हैं जिनको अपना मान लिया है वह साथ नहीं निभाते हैं तो व्यक्ति अपना दर्द कम करने के लिए सपने संजोने का काम करता है। जैसे अपने टूटते हैं वैसे कभी-कभी सपने भी टूटते हैं और जैसे सपने टूटते हैं जिनको अपना मान लिया है वह भी टूट जाते हैं और जिसका सपना टूटता है जिसके जीवन में बहुत बड़ी घटना घटित हो जाये तो उसे आत्मा का बोध हो जाता है और सबसे बड़ा बोध मृत्यु बोध ही आत्म बोध कराने वाला है। पुराणों को पढ़कर के, सिद्धांतों को पढ़कर के, न्याय को पढ़कर के, अध्यात्म विद्या को पढ़कर के किसी के जीवन में आत्मा का बोध हुआ हो या न हुआ हो किंतु मौत को पढ़कर के सबकी आत्मा में बोध हो जाता है। मौत जीवन का सबसे बड़ा जीवंत शास्त्र है इसे कभी नकारा नहीं जा सकता, इसे कभी झुटलाया नहीं जा सकता।

अभी रोहिणी दिल्ली में एक युवा बालक था वह युवा बालक अपने माँ बाप का इकलौता था न कोई बहन न कोई भाई। वह परिवार बहुत सम्पन्न। अपने मनोनुकूल कोठी बनवाई 7 करोड़ की। उसकी

शादी हुई जून के महीने में अभी 8 या 10 जून की शादी थी उसकी 2014 में। कन्या पक्ष ने 7 करोड़ रुपये खर्च किये उसके पिता ने 70 लाख की तो उसे गाड़ी दी थी। वह बालक शादी के उपरांत, अभी जून में शादी हुई अभी मुझे समाचार मिला उसका मित्र जो 19 साल से उसके साथ में रह रहा था। वह आया, महाराज मैं तो बस संसार से घबरा गया मैं अब इस संसार में रहना नहीं चाहता क्या हुआ? महाराज मुझे तो दिन रात डर लगता है मैं तो कहीं अकेला जा भी नहीं सकता। उसकी मम्मी भी साथ आई बोली महाराज इसको समझाओ इसको क्या हो गया। पूछा क्या हो गया-कहा महाराज मेरा वह परम मित्र था। वह भी इंजीनियर मैं भी इंजीनियर। दोनों साथ-साथ रहे। 19 साल से हम साथ-साथ थे। यकायक कुछ दो चार दिन पहले समाचार मिला उसके चाचा का फोन आया कि वह लड़का मृत्यु को प्राप्त हो गया। देखने के लिए गया तो देखता क्या है वह कमरे में फाँसी के फंदे पर लटका हुआ है। अपने आप उसने आत्म हत्या कर ली। यह देख करके घर के चाचा ताऊ और लोग थे, वो तो रो ही रहे थे सिर धुन रहे थे। ये वहाँ जाकर के उसकी डेड बॉडी पर बेहोश हो गया। उसको लोगों ने घंटे दो घंटे में होश में लाने का प्रयास किया उठाकर दूसरे कमरे में ले गए। कहीं ऐसा न हो सदमा लगने से बीमार पड़ जाए। उसको पुन: घर पर लाए समझाने लगे। उसके परिवार के लोग रिश्तेदार वर्ग था उसे धमकियाँ देने लगें कि तुझे तो मालूम होगा उसने आत्म हत्या क्यों की। तू तो उसका पुराना मित्र है वह अपने माँ बाप से नहीं बोलता, रिश्तेदार से नहीं बोलता। कहा महाराज मैं क्या बताऊँ मेरा मित्र क्या चला गया मेरे तो प्राण ही चले गए।

संसार की असारता

महानुभाव, संसार की दशा यह है कि संसार में कब किसका क्या हो जाए और कब किसकी मृत्यु हो जाए। संसार में कुछ भी

सारभूत नहीं है। उस परिवार को देखकर के अब ऐसा लगता है कि जो हवेली उसने बनाई थी कोठी उसने बनाई थी ऐसा लगता है वह शमशान घाट हो। वहाँ मातम छाया हुआ है वहाँ से निकलकर ऐसा लगता है कि व्यक्ति वहाँ खड़ा नहीं हो पा रहा वहाँ चीख की आवाजें निकल रहीं हों। तो महानुभाव इस संसार में है क्या? कौन किसका कौन पराया। वह बालक कहता है महाराज, बस आप तो मुझे ब्रह्मचर्य व्रत दे दो मैं जॉब छोड़कर के आपके चरणों में रहना चाहता हूँ। आपने मुझे जीवन दिया। वह पहले अस्वस्थ हो गया था डॉक्टरों ने मना कर दिया था उस लड़के को। तो पुन: वह आया हमारे पास। उसको ऐसा लगा महाराज का आशीर्वाद मिल जाए तो मैं ठीक हो जाऊँगा मन की श्रद्धा काम करती है साधु का आशीर्वाद मिले या न मिले। उसकी श्रद्धा थी तो वह जीवित हो गया पुन: बच गया। डॉक्टर ने तो लिखकर दे दिया वह बच नहीं सकेगा। तो अब जीवन में यही मानता है महाराज ये जीवन आपका दिया हुआ है बस अपने जीवन को मैं आपके चरणों में समर्पित करना चाहता हूँ। संसार मैंने देख लिया संसार में कुछ भी सार नहीं है। कहा भी है:-

यह संसार असार न करना, पल भर राग सयाने।
यहाँ जीव ने अब तक पहने, हैं कितने ही बाने।।
पिता पुत्र के रूप जन्मता, बैरी बनता भाई।
देह त्यागकर पुत्र कभी, बन जाता सगा जमाई।।

महानुभाव, वास्तव में व्यक्ति को अपने व पराये की पहचान तब हो जाती है जब वह देख लेता है कि वास्तव में जो मेरा होता तो मुझे छोड़कर क्यों जाता। मुझे छोड़कर चला गया वह मेरा नहीं हो सकता। राम और लक्ष्मण की कितनी प्रीति थी, आपको मालूम होगा जब लक्ष्मण की मृत्यु हुई तो रामचंद्र जी लगभग छह महीने तक उन्हें साथ में लिए रहे बाद में देवों के द्वारा संबोधन प्राप्त होने पर वह

संस्कार करने को तैयार हुए, अन्यथा वे कहते थे मेरा भाई मरा ही नहीं है ऐसा हो ही नहीं सकता। तो महानुभाव ये कथन शायद वैदिक परम्परा की रामायण में नहीं आया हो किंतु जैन रामायण में यह कथन आया। कहने का आशय यह है कि जब व्यक्ति तीव्र रागान्वित होता है तो व्यक्ति को लगता नहीं कि यह मुझसे छूट के अलग हो सकता है।

महानुभाव, जब हम तिजारा में चौमासा कर रहे थे एक वृद्ध माँ थी अस्वस्थ रहती थी तिजारा क्षेत्र पर उनकी मृत्यु हुई। उनका बेटा था हमारे पास दिन में दो बार, चार बार आकर रोता था बोला महाराज जी आप तो बहुत तपस्या करते हैं मेरी माँ को बुला दो, मैं माँ के बिना जी नहीं पाऊँगा और वह भी दो-चार महिने में मृत्यु को प्राप्त हो गया। उसे ऐसा लगा मेरी माँ मुझे छोड़कर जा ही नहीं सकती। इन लोगों ने मुझे धोखा दे दिया है। महानुभाव, व्यक्ति जी रहा है अभी अपने में नहीं सपने में जी रहा है-पराए में जी रहा है। मध्यप्रदेश में एक व्यक्ति जिसने 5 मंजिल की कोठी बनाई और कोठी बनाकर के उसने उस कोठी का मुहूर्त किया। मुहूर्त कर रहा था जल्दी में उत्साह के साथ और हुआ ये उसे बिजली का करंट लगा और वह झटके से नीचे गिरा और वहीं मृत्यु को प्राप्त हो गया।

महानुभाव, जिसे अपना मान रहा है वह उसे अपना एक क्षण भी तो साथ देने को तैयार नहीं है। मृत्यु हो गई तो साथ में न पत्नी जायेगी, न माँ जायेगी, न भाई जायेगा, न बहन, न पौत्र, न पौत्री, न कोठी, न बंगला, न दुकान, न मकान कुछ भी तो जाने वाला नहीं है। जिसे अपना मान रहा है वह अपना है कहाँ। जिसे अपना मान रहा है वह वास्तव में अपना है ही नहीं। जो अपना है उसका कभी वियोग नहीं हो सकता। अपने पराये की पहचान यदि हमें हो जाए तो नि:संदेह ही पराये की बेड़ियों से जल्दी से मुक्त हो सकते हैं अपने को पा सकते हैं।

धर्म का बेटा

महानुभाव ! जिसको अपना मान लिया वो तुम्हारी सेवा नहीं, उसकी तुम सेवा कर रहे हो। कोई कहे महाराज जी ऐसा भी तो हो सकता है पराया हमारी सेवा कर रहा है। अरे ! वह तुम्हारी सेवा नहीं कर रहा तुम्हारे शरीर की सेवा कर रहा है, ये शरीर भी पराया है। आत्मा की सेवा करने वाला तो बिरला ही होगा जो तुम्हारा आत्मा से परिचय करा दे। इसलिए मैं कई बार एक बात कहता हूँ देखो, जिसके पास कोई बेटा नहीं है, वह एक बेटा मान लो आप कहेंगे महाराज जी मानने की बात आपने अभी कही, किसी को अपना न मानो। किंतु अब कह रहा हूँ यह बात मान लो कि एक बेटा मान लो। एक बेटा है तो दो बेटा मान लो, दो है तो तीन मान के चलो, तीन हैं तो चार मान के चलो, चार हैं तो पाँच मान के चलो, पाँच है तो छः यानि एक बेटा एक्स्ट्रा मान करके चलो। और ईमानदारी के साथ जो बेटा अलग से माना है उसके लिए भी उतना ही समय दो जो आप अपने बेटे को दे रहे हैं उसके लिए भी उतना ही धन खर्च करो जो एक बेटे के लिए कर रहे हो। एक्स्ट्रा बेटा को माना है उसका कितना हिस्सा बनता है उसके लिए भी आप निकालते जाओ। वह कौन-सा बेटा मानो? वह बेटा मानो धर्म का बेटा।

ये ध्यान रखें-वह 100 बेटे भी आपका साथ न देंगे वह धर्म का बेटा आपका साथ निभाएगा। ईमानदारी से यदि तुम्हारे एक बेटा है तो तुम दो मान लेना और अपने बेटे से कह देना कि तुम्हारे 2 बेटे हैं, मैं अपनी सम्पत्ति के दो हिस्से करूँगा। एक हिस्सा तेरे लिए एक हिस्सा मेरे दूसरे बेटे धर्म के लिए। मेरे मकान में, दुकान में, चल अचल सम्पत्ति में और ध्यान रख जितना समय मैं तुम्हें देता हूँ उतना समय धर्म के बेटे को भी दूँगा। और ये बात पक्की है धर्म का बेटा मेरा साथ देगा तो 100 बेटे मेरा साथ देंगे। और धर्म का बेटा मेरे पास

होगा ही नहीं तो 1000 बेटे हों, 96000 बेटे हों तो क्या करेंगे सब साथ छोड़ जायेंगे। तो जीवन में तुम्हारा अपना कोई हो सकता है तो जिसको शरीर से जन्म दिया है वह तुम्हारा बेटा नहीं हो सकता। भले ही तुम उसे आत्मज कह लो। क्या कहते हैं 'आत्मज'। किन्तु आत्मा से मिला थोड़े ही होता है वह तो तनुज है, हृदय से मिला हुआ है।

आत्मज और आत्मजा लिख देते हैं किन्तु वास्तव में आत्मा से पैदा नहीं होता। आत्मा से पैदा होता है धर्म का बेटा। वह बेटा तुम्हारा आत्मा से साथ निभायेगा। इस लोक में भी परलोक में भी तुम्हें दुखी नहीं होने देगा। धर्म आगे आ जायेगा तुम्हें पीछे कर देगा। तुम्हारी रक्षा करेगा। कहीं भी चले जाना वहाँ जन्म दिया बेटा नहीं पहुँचेगा वहाँ आत्मा का बेटा वह धर्म, वह पुण्य तुम्हारे साथ पहुँच जायेगा। चाहे नदी में, चाहे जंगल में, चाहे वन में, चाहे सागर में, चाहे दुर्घटना में, यान में, विमान में, कहीं भी हो जहाँ कोई और भी न पहुँच पाये वहाँ तुम्हारा धर्म साथ निभाएगा। वह तुम्हारी रक्षा करेगा। इसलिए कई बार लोग कहते हैं महाराज जी, कोई पुण्य आड़े आ गया। कोई पूर्वभव का धर्म रक्षक बन गया धर्म सहायी हो गया, मैंने कभी धर्म का बेटा पाला होगा उस बेटे ने आज मेरी रक्षा की।

ये बात बिल्कुल नोट कर लेना यदि आपने ईमानदारी से धर्म के बेटे को उतना ही समय दिया है यदि आपने ईमानदारी से धर्म के बेटे को उतनी ही सम्पत्ति दी है, यदि आपने ईमानदारी से धर्म के बेटे को हृदय में लाड़, प्यार दिया है जितना सगे बेटे को देते हो, जैसे सगे बेटे को गोदी में खिलाया है वैसे ही धर्म के बेटे को गोदी में खिलाकर के धर्म का स्मरण किया है, बेटे के वियोग में यदि आपके आँसू बहे हैं तो धर्म के वियोग में भी आपके आँसू निकलना चाहिए। बेटा बीमार हो जाता है तो आप डॉक्टर के पास जाते हैं, आपका धर्म का बेटा बीमार हो जाता है, आप धर्म कम कर पा रहे हैं तो आपकी

आँख से आँसू निकलना चाहिए। ईमानदारी के साथ चलना मैं दावे के साथ कहता हूँ वह धर्म का बेटा आपको कभी धोखा नहीं देगा। और यदि इतने पर भी आपको यकीन नहीं हो रहा है आपको कागज के टुकड़े पर यकीन होता है तो स्टेम्प पेपर ले आना मैं आपको लिखकर के दूँगा वह धर्म का बेटा आपको धोखा नहीं देगा।

और सभी बेटे तो शरीर के हैं और जब शरीर ही अपना नहीं होता ये शरीर ही धोखा दे देगा तो शरीर से उत्पन्न हुआ बेटा तुम्हारा कैसे हो सकता है। शरीर भी रोगी बन जाता है शरीर भी बिना कहे छोड़कर चला जाता है। तुम शरीर से कहो चलो भैया वंदना कर आयें मंदिर पैदल चलें तो शरीर कहता है हिम्मत नहीं है चलने की, उठने की हिम्मत नहीं है। कल तो कह रहे थे बिस्तर से उठने की हिम्मत नहीं है चार व्यक्ति तुम्हें उठाते। आज संसार से उठ गए। ये शरीर कैसा है। ये तो छोड़कर चला जाता है। किंतु धर्म का बेटा वहाँ भी नहीं छोड़ेगा। ये ध्यान रखना धर्म का बेटा वहाँ भी साथ जायेगा आत्मा जहाँ जायेगी। कहाँ जायेगी ? नरक में। नहीं, जीवन में जिसने धर्म का बेटा मान लिया है उसकी आत्मा नरक में कभी जा नहीं सकती, वह आत्मा कभी दुख पा नहीं सकती।

धर्म ही सच्चा साथी है :

एक राजा था, उसका एक राजकुमार था। वह राजकुमार राजकाज में ध्यान नहीं देता था। वह मित्रों के साथ रहता था और वह मित्र भी राजा के बेटे से धन लूटते रहते थे और उसके साथ मौज मस्ती करते थे। राजा का बेटा उन्हीं में मस्त रहता था। राजा ने बहुत समझाया देख ये ठीक नहीं है, किंतु फिर भी वह नहीं माना। उसके साथ कुछ मित्र ऐसे भी थे जो मित्र उसके पास कभी-कभी आते थे, कभी आए कभी नहीं आए। उसके उपरांत एक मित्र ऐसा था जो मित्र उसके पास साल में एक बार आता था वो भी दो घंटे के लिए। जो मित्र 24 घंटे उसके

साथ रहते थे उसके लिए राजकुमार ने बहुत सारा धन लुटा दिया। अपना राज्य आधे से ज्यादा खाली करा दिया। और जो दूसरे मित्र थे जो कभी कबार आते थे सप्ताह में, 15 दिन में, महीने भर में, उनके लिए भोजन पानी करवाता। तीसरा जो मित्र था वह कभी कभी साल में एक बार आता था उसे तो कभी पानी वानी भी पूछ लिया, चाय नाश्ता करा दिया ज्यादा कोई व्यय नहीं करता। राजा ने अपने बेटे राजकुमार को बहुत समझाया कि मित्रों का साथ छोड़ दे किंतु जब राजकुमार नहीं माना तो राजा ने उसे दण्डित करने की सोची। और यह घोषणा कर दी कि राजकुमार को फांसी की सजा कल प्रातः काल दी जायेगी। अब राजकुमार के पास कोई नहीं। कहाँ जाए। अब आ गया राजा का आदेश। यदि पालन नहीं, किया तो वह व्यक्ति देशद्रोही कहलायेंगे और फाँसी की सजा मिलनी है या तो देश छोड़ के भाग जाए, नहीं तो प्रातःकाल का सूरज यहाँ उगा तो फांसी की सजा सुनिश्चित है।

राजकुमार माँ के पास गया... रोने लगा। माँ की ममता उमड़ पड़ी। बेटे से कहा-'बेटा मैं तुझे बचा तो नहीं सकती, तेरे पिता का आदेश है मैं टाल नहीं सकती। और उन्होंने आदेश दे दिया है तो इतना कर सकती हूँ तू यहाँ से शीघ्र भाग जा। मैं तुझे रत्नों की पोटली बना करके दे देती हूँ। तेरा गुजारा हो जायेगा। तू जीवित रहेगा भले ही मेरी आँखों के सामने नहीं, कहीं तो जीवित रहेगा। मैं अपने मन में संतुष्ट रहूँगी। वह चला गया अपने मित्रों के पास गया जिन मित्रों के साथ 24 घंटे रहता था, उन मित्रों ने कहा मित्र-राजा ने घोषणा की है केवल ये नहीं कि तुम्हें फाँसी दे दी जायेगी बल्कि ये घोषणा की है कि जो मेरे बेटे को स्थान देगा बचाने का प्रयास करेगा उसे भी फाँसी के तख्ते पर लटका दिया जाएगा। इसलिए मित्र क्षमा करो हम तुम्हें बचा नहीं सकते। वह दौड़ के जाता है रात में ही उन मित्रों के पास

जो मित्र कभी-कभी आते थे। तो उन मित्रों ने भी कहा-'भाई ! मैं नहीं बचा सकता, बस ज्यादा हो तो मैं तुम्हें रास्ते के लिए भोजन-पानी दे सकता हूँ। मैं तुम्हें और भी सहायता दे सकता हूँ, किंतु मैं तुम्हें बचा नहीं सकता और तुम्हें बचाकर के स्वयं मौत नहीं ले सकता। तुम्हें भी नहीं बचा पाऊँगा और मुझे भी मृत्यु स्वीकार करनी पड़ेगी।

बेचारा वह अंततः रात्रि में जाता है अपनी देश की सीमा से पार हो जाता है। जो विदेश में रहने वाला मित्र था कभी-कभी साल में एक बार आता था उसे चाय नाश्ता कराता था उसके पास पहुँच गया। उसने कहा क्या बात है घबराए हुए क्यों हो? ठीक कहते हो घबराहट तो है ही। क्यों क्या हो गया ? मौत मेरी हथेली पर रखी है। ऐसा कैसे मेरे मित्र की मौत मेरे सामने, ऐसा नहीं हो सकता चिंता मत कर। बता, बात क्या है ? बात यह है मेरे पिता ने आदेश दिया है मुझे फाँसी की सजा। और मैं यहाँ तुम्हारे पास आ गया समाचार मिल गया तो हो सकता है मेरे पिता तुम्हें और मुझे दोनों को फाँसी की सजा दे दें। इसलिए तुम मौत को व्यर्थ में न स्वीकार करो। उसने कहा-''मैंने स्वीकार किया! मैं तेरा बाल-बांका नहीं होने दूँगा चाहे मुझे मौत को स्वीकार करना पड़े। तू चिंता न कर चैन से रह।'' और वह मित्र जो राजकुमार था अब वास्तव में उसे समझ में आया की सच्चा मित्र कौन है? वह सभी मित्र जो 24 घंटे साथ में रहते हैं वे सप्ताह में, पक्ष में, दिन में, रात में आठ घंटे - चार घंटे मिलते वे वास्तव में सारे मित्र धोखेबाज हैं। ये मित्र जो कभी-कभी मेरे पास आता था सच्चा मित्र था। महानुभाव कौन है वह सच्चा मित्र ? कौन है वह साथ देने वाले। तो महानुभाव ! आत्मा ही राजकुमार है। हमारे पिता परमात्मा हैं। जैन दर्शन तो कहता है परमात्मा दण्ड नहीं देता किंतु हमारा कर्म ही परमात्मा है। जब हम खोटे कर्म करते हैं तो कर्म ही विश्व प्रधान है।

''कर्म प्रधान विश्व फल राखा,
जो जस करहिं सो तस फल चाखा।''

कर्म की प्रधानता है कर्म सबसे बड़ा राजा है, सबसे बड़ा पिता है। जो दुष्ट कर्म करते हैं तो कर्म हमें दण्ड देता है। तुझे फाँसी की सजा मृत्यु की सजा सुनाता है तब आत्मा फड़फड़ाता है कहाँ जाए कहीं रास्ता नहीं मिलता। अपने उस मित्र के पास जाता है जिसके पास 24 घंटे रहता है। उस मित्र से कहता है कि राजा ने मुझे मृत्यु का दण्ड दिया मुझे बचा ले। वह पहला मित्र है शरीर। वह कहता है मैं पागल थोड़े ही हूँ, तेरे कारण मैं मृत्यु को प्राप्त क्यों करूँ, चल भाग यहाँ से मैं तेरा साथ नहीं दे सकता। वह साथ नहीं देता। दूसरे मित्र वह पत्नी है, बेटे हैं, माँ हैं, बाप हैं उनके पास जाता है, कहता है बचा लो। वे कहते हैं, नहीं बचा सकते तुम्हारी सम्पत्ति है इससे अपना कल्याण करना है तो करो नहीं तो जाओ हम तुम्हें बचा नहीं सकते और तीसरा मित्र है जो जीवन में कभी-कबार आता है वह है धर्म, वह है पुण्य। वह कहता है तेरा बाल भी बांका नहीं होने दूँगा तू चिंता न कर। कोई ऐसा राजा नहीं है जो तुझे हाथ भी लगा सके। जिसके पास धर्म का मित्र है। ऐसे व्यक्ति का कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता।

महानुभाव ! मैं भी तो आपसे बस इतना ही कहना चाहता हूँ। अभी तक आपने जिससे मित्रता की वह सब पराये थे, अभी तक आपने जिसको अपना बनाया वह धोखेबाज थे। अब उनको अपना बना लो जो तुम्हारे ही हैं तुम उनको भूल गए हो तुमने उन्हें अपने अन्दर से निकाल कर बाहर फेंक दिया है। वे ढके हुए दबे हुए पड़े हैं। वे तुम्हारा धर्म है तुम्हारा ज्ञान, तुम्हारी सरलता, तुम्हारी सहजता, तुम्हारा धैर्य, तुम्हारा विवेक, तुम्हारा मार्दव भाव, तुम्हारा संतोष, तुम्हारा सत्य, तुम्हारा संयम, तुम्हारा वैराग्य, तुम्हारा तप, तुम्हारा ब्रह्मचर्य, तुम्हारा आंकिचन्य व्रत, तुम्हारे अंतरंग के मित्र। ये मित्र जिसके पास होते हैं उसका संसार का कोई भी व्यक्ति बाल-बांका नहीं कर सकता। ये हमारे अपने हैं इसके अलावा सब पराया है।

ना मिटना बुरा है न पिटना

''विचार, विचारों को बदलने में समर्थ होते हैं आचार, आचार को, और व्यवहार, व्यवहार को बदल देता है।'' व्यक्ति जिसे बदलना चाहता है उसमें परिवर्तन संभव है। आज हम चर्चा इसी संबंध में करना चाहते हैं हमारे जीवन की पृष्ठ भूमि बदले। जीवन की पृष्ठ भूमि को बदलने के लिए बहुत साहस चाहिए। पृष्ठ भूमि बदलने का आशय है हमारा आधार बदल जाए। आधार के बदलने से आधेय बदलने लगता है। जब आधार और आधेय बदलने लगता है तो उस व्यक्ति और वस्तु के गुण धर्म में परिवर्तन आ जाता है।

आवश्यकता है पृष्ठ भूमि बदलने की...

गदंगी में रखा हुआ पात्र चाहे कितना ही शुद्ध क्यों न हो, उसमें रखी हुई वस्तु कितनी ही शुद्ध क्यों न हो लेकिन उसका आधार गदंगी ही है तो वह अशुद्ध ही कहलाएगी। शौचालय के समीप यदि कोई कलश रखा हुआ है तो वह कलश रसोई में पानी पीने के काम नहीं आता। कोई दूध देने वाला तुम्हारे घर का दरवाजा बंद था दूध किसी पात्र में भरकर शौचालय में रख गया और तुम्हें फोन कर दिया कि दरवाजा बंद था मैं दूध शौचालय में रखकर के आ गया हूँ आप ले लेना। वह कहता है तुम न रखते तो अच्छा था। यह शौचालय का दूध अब कौन पीयेगा। शौचालय स्थल भी अपवित्र है अशुद्ध है वहाँ पर रखा हुआ दूध शुद्ध कैसे हो सकता है। तो महानुभाव उसके लिए पृष्ठ भूमि को बदलना जरूरी होता है। हमारे जीवन में जो गुणधर्म हैं जो विशेषताएँ हैं, अच्छाईयाँ है ऐसा लगता है वह शौचालय के स्थान पर रखी हुई हैं और वे गलत हो गई हैं खराब हो गई हैं। यदि वही चीज जो उसका रखने का स्थान है वहाँ रखी जाए तब निस्संदेह सम्मानीय हो जाती है।

अपने स्थान को जो छोड़ देते हैं वे सम्मानीय अभिवंदनीय न होकर के कई तो निदंनीय और अपमानजनक अवस्था को प्राप्त हो जाते हैं। दन्ता नखा नरा केशा:। दाँत मुख में हैं सुन्दर लग रहे हैं। स्थान छोड़ दें तो सुन्दर न लगेंगे, लोग फेंक देंगे। नख उंगली में लगे हैं तो बड़े सुन्दर लग रहे हैं निकल जायेंगे तो कौन रखेगा, हड्डी है बाहर फेंक देंगे। केश सिर पर हैं चाहे दाड़ी मूंछ के हैं चाहे हाथ पर हैं, अगर केश आहार करते समय जहाँ पर हैं वहीं हैं कोई बात नहीं अन्तराय नहीं है और यदि वह अपना स्थान छोड़ दें तो अन्तराय कराने में समर्थ हो जायेंगे। ऐसे ही मनुष्य जिस स्थान पर बैठने के योग्य है वहीं बैठता है तो शोभा को प्राप्त होता है। यदि एक राजा सेवक के स्थान पर बैठ जाये और सेवक राजा के स्थान पर बैठ जाए तो दोनों ही निंदनीय दशा को प्राप्त हो जाएगें। कहते भी हैं-

ऐसी जगह न बैठो, कोई कहे उठ।
ऐसी वाणी न बोलो, कोई कहे चुप॥

महानुभाव ! हमारा स्थान क्या होना चाहिए और अभी वर्तमान में क्या है, इन दोनों में थोड़ा अंतर आ गया है। जो होना चाहिए यदि वही है तब तो कोई बात नहीं। किंतु जो होना चाहिए वह नहीं है तब निस्संदेह वह दशा हमें प्राप्त नहीं हो सकती जो होना चाहिए। हमारे जीवन में जो उत्कर्ष, जो उन्नति, जो विकास और जो गुणों का अनुभव हो सकता है नहीं हो पा रहा। हमारा स्थान तो सिद्धों के बीच में बैठने का है, हम यहाँ कैसे आ गए संसार में। हमारा स्वभाव तो मुक्त दशा को प्राप्त करना है, हम निगोद की अवस्था में क्यों भटकते रहे। जो सिद्धों का स्थान है, सिद्धों का सम्मान और सिद्धों का गुणानुभव है वह हमें प्राप्त नहीं हो पा रहा।

प्रवृत्ति हो क्षत्रिय जैसी

महानुभाव ! इस सबके लिए आमूलचूल परिवर्तन करने की आवश्यकता है। सम्पूर्ण रूप से मिटाने की आवश्यकता है और

सम्पूर्ण रूप से मिटाने में केवल एक क्षत्रिय ही समर्थ हो सकता है। इसलिए मोक्ष को प्राप्त करने वाला जीव क्षत्रिय होता है। चाहे क्षत्रिय कुल में जन्म लिया हो या नहीं, किंतु क्षत्रिय जैसी प्रवृत्ति वाला ही मोक्ष जा सकता है। जिसकी प्रवृत्ति क्षत्रिय जैसी नहीं होती वह तीन काल तक भी मोक्ष जाने की पात्रता नहीं रखता। क्षत्रिय वह होता है जो आमूलचूल परिवर्तन करने में समर्थ हो। क्षत्रिय वह होता है जो अपने आपको बदलने में समर्थ हो और वह क्रम-क्रम से नहीं बदलता है एक साथ बदलता है। क्षत्रिय की प्रवृत्ति ऐसी होती है या तो घोर अंधकार या पूरा प्रकाश। अमावस्या के अंधकार के बाद क्षत्रिय व्यक्ति के जीवन में ही सूर्य का दिव्य प्रकाश हो सकता है। वैश्य होता तो सूर्य के प्रकाश का इंतजार न करेगा वह तो मोमबत्ती जलायेगा, टिमटिमाता दीपक जलाएगा। कोई द्विज होगा तो हो सकता है अन्य प्रकार से रत्नों से प्रकाश प्राप्त करने का प्रयास करेगा, और कोई शूद्र होगा तो हो सकता है वह पत्थरों को रगड़ कर चिंगारी पैदा करेगा जिसकी जितनी क्षमता है उतना ही उसका प्रयास और पुरुषार्थ चल सकता है।

महानुभाव ! क्षत्रिय वह है या तो अंधकार में रहेगा या सम्पूर्ण प्रकाश में रहेगा। वह मिली जुली सरकार जैसा काम नहीं कर सकता कि आधा अंधकार जीवन में हो आधा प्रकाश हो। वह अपने जीवन को बदल सकता है अनादिकाल से क्षत्रिय ने अपने पास कमाया है उन सबको छोड़ने के लिए तैयार हो सकता है, वैश्य सम्पूर्ण रूप से छोड़ नहीं सकता। वह कहता है इतना मैंने दिया उसका प्रतिफल मुझे दे दीजिए। जीवन वैश्य बन करके नहीं जिया जा सकता जीवन तो क्षत्रिय बनकर जिया जा सकता है। जन्म आपको प्रेरणा देता है। जब भी बालक का जन्म होता है तो 9 महीने बाद पूरा ही जन्म होता है। ऐसा नहीं है कि बालक का जन्म थोड़ा हो जाए। एक महिने बाद

बॉडी का कोई एक पार्ट का जन्म हो जाए, दूसरे महिने में दूसरे पार्ट का, तीसरे में तीसरे पार्ट का। ऐसे जन्म नहीं होता है जब जन्म होता है तो एक साथ होता है। मृत्यु भी होती है तो एक साथ होती है। ये प्रकृति हमें संदेश देती है कि बदलना है तो आमूलचूल बदलना है।

बनने के लिए मिटना जरूरी है

एक व्यक्ति अपने आप को बदलना चाहता है अपने जीवन को बदलना चाहता है, तो वह तैयार हो जाए मरने के लिए। जो मरने के लिए तैयार होता है वह सम्यक् जीवन जीने का अधिकारी होता है। दीक्षा लेना भी तो मृत्यु को स्वीकार करना है। दीक्षा का आशय होता है, दूसरा जन्म और दूसरा जन्म तभी हो सकता है जब उसके पहले मृत्यु हो गई हो। जो-जो व्यक्ति मरने के लिए तैयार है, वह व्यक्ति जीवन जी सकता है, नया जीवन जी सकता है। जो मरने के लिए तैयार नहीं है वह नया जीवन जी नहीं सकता।

जो रोग को छोड़ने के लिए तैयार है वह निरोग दशा को प्राप्त कर सकता है। अन्धकार को छोड़ने के लिए तैयार हो जाये, प्रकाश को प्राप्त कर सकता है। कड़वाहट को छोड़ने के लिए तैयार हो जाए मिठास को ले सकता है। दु:ख को छोड़ने के लिए तैयार हो जाए तो सुख को प्राप्त कर सकता है। अज्ञान को छोड़ने के लिए तैयार हो जाए ज्ञान के कोश को प्राप्त कर सकता है। जो छोड़ने को तैयार नहीं होता वह जीवन में कभी सम्यक्त्व को प्राप्त नहीं करता। आचार्यों ने शर्त रखी है मिथ्यात्व को पूरी तरह से मिटा दो जिससे तुम सम्यक्त्व को अच्छी तरह से प्राप्त कर सको। यदि मिथ्यात्व को पूरी तरह से नहीं मारा है और साथ में सम्यक्त्व को भी प्राप्त कर लिया है तो मिथ्यात्व और सम्यक्त्व मिल करके सम्यक् मिथ्यात्व हो जाएँगे और सम्यक् मिथ्यात्व भी मिथ्यात्व के समान है सम्यक्त्व के समान नहीं है। इसलिए सम्यक् मिथ्यात्व गुणस्थान में जो ज्ञान भी होता है तो मिश्र ज्ञान होता है, सम्यक् ज्ञान नहीं होता।

महानुभाव ! मिटने के लिए तैयार तो होना पड़ेगा। जिसने पूरी तरह से मिटाया है अपने आपको, उसने पूरी तरह से पाया है अपने आपको। चारित्र मोहनीय का पूरी तरह से नाश हो जाए तभी ये जीव अनंत सुख को प्राप्त कर सकता है। यदि चारित्रमोहनीय कर्म की एक प्रकृति भी शेष होगी तो अनंत सुख को प्राप्त करने में समर्थ न हो सकेगा। महानुभाव ! मिटाना तो है किंतु क्या मिटाना है संसार में कुछ ऐसी चीजें भी होती हैं जिसको मिटाया नहीं जा सकता और संसार में कुछ ऐसी भी चीजें होती हैं जिसे ज्यादा दिन तक रखा नहीं जा सकता। जिसे मिटाया जा सकता है उसे मिटा ही देना चाहिए और जिसे नहीं मिटाया जा सकता उसे मिटाने का तो साहस ही व्यर्थ है।

क्या मिटाया जा सकता है, संसार में केवल पर्यायों को मिटाया जा सकता है, द्रव्य को नहीं। गुणों को नहीं मिटाया जा सकता पर्याय मिटाई जाती हैं। पुरानी पर्याय जब तक मिटाई न जाएगी नई पर्याय का प्रादुर्भाव नहीं हो पायेगा। दोषों को जब तक नहीं मिटाया जायेगा तब तक गुणों का आविर्भाव नहीं हो सकेगा। मिटाने के लिए तैयार तो हो जाएँ। पर मिटाना क्या है ? हम दूसरों की हस्ती मिटाना चाहते हैं। दूसरों की हस्ती मिटाकर के हमारी स्वयं की हस्ती नहीं बनेगी। हम अपने आपको मिटाने को तैयार हो जाएँ तो हम अपने आप में बन जाएँगे। बहिरात्मा की दशा मिटाई जाती है तो वह अन्तरात्मा बन जाती है। अन्तरात्मा की दशा मिट जाती है तो वह परमात्मा बन जाती है। जीवन में से शैतानियत खत्म हो जाती है, हैवानियत खत्म हो जाती है तो इंसानियत जाग जाती है। नींद को मिटाया जाता है तो जागरण आ जाता है और जीवन में विद्यमान जहर को मिटाया जाता है तो हमारा जीवन अमृत बन जाता है। नारकी तुल्य व्यवहार को मिटाया जाता है तो जीवन में स्वर्गीय आनंद का अनुभव होने लगता है।

जरूरी है मिटना और पिटना

गंदे वस्त्र में निहित मैल को जब तक मिटाया न जायेगा, गंदगी को न मिटाया जायेगा, तब तक स्वच्छता का अनुभव नहीं हो सकता। स्वच्छता तभी प्राप्त की जा सकती है जब गंदगी को मिटा दिया जाए। और जो व्यक्ति लोभ करता है गंदगी को मिटाना नहीं चाहता। यदि आभूषण गंदा हो गया है सोने का है चांदी का है और वह स्वर्णकार को देना नहीं चाहता मेरी चांदी और सोना घिस जाएगा वह तेजाब में डालकर के साफ कर लेगा। कुछ अंश सोने-चांदी का चला जायेगा हो सकता है चला जाए। गंदगी कहीं-न-कहीं से तो आपके अंदर से कुछ लेकर जायेगी किंतु आप नई अवस्था को प्राप्त हो जाएें। यदि तुम्हारे घर में गदंगी एक स्थान पर पड़ी है बदबू दे रही है और ज्यादा समय तक पड़ी रहेगी पूरे घर में बदबू हो जायेगी। जितना जल्दी हो सके उस गदंगी को मिटा दो। गदंगी को दूर करना है, मिटाना है। पापी को नहीं मिटाना है, पाप को मिटाना है। बुराई को मिटाने का प्रयास करना है बुरे व्यक्ति को मिटाने का प्रयास नहीं करना है।

जब पापी को मिटाया जाता है तब भी पाप जीवित रहते हैं। जब बुरे व्यक्ति को मिटाया जाता है तब भी बुराई जीवित रहती है और जब गंदे स्थान को मिटाया जाता है तो भी गदंगी जीवित रहती है। हमें प्रयास यह करना है कि पापी को नहीं पाप को मिटाना है। पाप को मिटाते ही पापी अपने आप मिट जाता है। हमें क्रोधी को नहीं मारना है क्रोध को मारना है, हमें शत्रु को नहीं शत्रुता को मिटाना है। शत्रु को मारने से शत्रुता नहीं मिटती। मिटाना तो है, पर उसे मिटाना है जो मिट सकता है। ये शरीर मिट सकता है तो उसे मिटाना है और ऐसे मिटाना है जिससे पुनः शरीर की प्राप्ति न हो, अशरीरी बन जाएँ।

ये कर्म हमारे मिट सकते हैं इनको मिटाना है और हमारी आत्मा नहीं मिट सकती है तो उसे नहीं मिटाएंगे। जो मिट नहीं सकता उसे

क्या मिटाओगे। पुद्गल कभी मिट नहीं सकता क्या मिटाओगे उसकी पर्याय केवल बदल सकती है। उसका सम्पूर्ण क्षय नहीं किया जा सकता। महानुभाव, जीवन में न मिटना बुरा है न पिटना। किंतु कहाँ मिटना आवश्यक है और कहाँ पिटना आवश्यक है। मिटना वहाँ आवश्यक है जहाँ पर प्रमोशन हो। मिटना वहाँ आवश्यक है जहाँ विभाव से स्वभाव की ओर यात्रा हो, मिटना वहाँ आवश्यक है जिसके बाद दुबारा मिटना न पड़े। तुम्हारा क्रोध, तुम्हारा मान, तुम्हारी मायाचारी, तुम्हारा लोभ, तुम्हारा असंयम, तुम्हारा मिथ्यात्व, तुम्हारा अज्ञान, तुम्हारा राग, तुम्हारा द्वेष, तुम्हारा मोह ये तो मिटेंगे ही मिटेंगे और जब तक इसके चक्कर में आत्मा पड़ी रहेगी तब तक ये पिटेगी ही पिटेगी इसलिए कर्मों के साथ रह करके नहीं पिटना है।

लोहा भी पिटता है। अग्नि की संगति पाकर के पीटा लोहे को जाता है परन्तु अग्नि व्यर्थ में पिटती है। अग्नि तो अपने आप में शुद्ध है उसे पिटने की आवश्यकता नहीं। किंतु ओछे की संगति करती है तो अग्नि भी पिटती है। लोहा पिटकर के शुद्ध हो जाता है। अग्नि पिटकर के नष्ट हो जाती है। इसलिए वहाँ नहीं पिटना है जहाँ अपना अस्तित्व नष्ट हो रहा हो। वहाँ नहीं पिटना है जहाँ पर हमारा डिमोशन हो रहा हो, वहाँ नहीं पिटना है जहाँ पर हमारे गुण विकृत अवस्था को प्राप्त हो रहे हों। मिटो, सोना जब तक मिटेगा नहीं, जब तक जलेगा नहीं, उसकी किट्ट कालिमा मिटेगी नहीं। सोना जब तक पिटेगा नहीं तब तक शुद्ध नहीं हो सकेगा। इसलिए पिटना भी जरूरी है और मिटना भी जरूरी है। यदि कोई व्यक्ति चाहता है कि जीवन में नई अवस्था को प्राप्त करूँ तो उसे पुरानी अवस्था को तो छोड़ना ही पड़ेगा। जो व्यक्ति कहे कि मैं छोड़ने के लिए तैयार नहीं हूँ, मुझे तो प्राप्त हो जाये। तो छोड़े बिना प्राप्त नहीं होगा।

समर्पणः बूंद मिटे तो सागर, माटी पिटे तो गागर

व्यक्ति तभी मिटने को तैयार हो सकता है तभी पिटने को तैयार हो सकता है, जब वह सोच ले वह सही स्थान पर आ गया, ताकि सही स्थान पर आकर व्यक्ति अपना सम्पूर्ण समर्पण कर दे। मिटने की पहली शर्त है समर्पण। बूंद सागर के लिए अपना समर्पण करती है। बिंदु जब मिटती है तो सागर बनती है, मिट्टी जब पिटती है तो गागर बन जाती है। सोना पिटता है तपता है तो मंगल कलश बनता है। पाषाण का खण्ड जब पिटने के लिए तैयार होता है, कटने छटने के लिए तैयार होता है तो परमात्मा की मूर्ति बनकर सामने आ जाता है। यदि पाषाण मिटने के लिए तैयार नहीं हो हथौड़े की चोट सहने को, पिटने के लिए तैयार नहीं हो तो पाषाण खण्ड कभी भी परमात्मा न बन सकेगा। हम अपने आपको नहीं पीट सकते इसलिए आवश्यकता है देव, शास्त्र गुरु की। उनके चरणों में जाकर के अपना सर्वस्व समर्पण कर देने की। व्यक्ति समर्पण कर देता है तो मिटने और पिटने में भी आनंद आता है।

एक रोगी डॉक्टर के आगे समर्पण करता है डॉक्टर उसका ऑपरेशन करता है। यदि आँख का समर्पण किया, अंदर से वह जो जाली थी, जो अंदर से मोतियाबिंद हो गया था, आँख को जब समर्पित कर दिया डॉक्टर के सामने, फिर उसने ऑपरेशन कर दिया तो नई ज्योति प्राप्त हो गई, अन्धे से वह आँखों वाला बन गया। यदि किसी के पेट में कब्ज है और डॉक्टर ने या वैद्य ने कहा पहले तुम्हारे अंदर की ये चीज निकालनी पड़ेगी इसलिए सब खाना-पीना छोड़ो सिर्फ और सिर्फ गर्म पानी पीना है, पतला मट्ठा पीना है इससे तुम्हारा पेट साफ हो जायेगा इससे तुम्हारे सब रोग मिट जायेंगे अन्यथा उस कब्ज के अन्दर कितनी भी औषधि दी जाएगी वह औषधि भी काम न कर पायेगी। इसलिए आयुर्वेदाचार्य की सबसे पहली विधि ये

होती है-पहले मिटाओ। पहले अपने अंदर के कब्ज को दूर करो उससे तुम्हारी पाचन शक्ति मंद हो रही है जठराग्नि मंद हो रही है तो पहले खाना-पीना कम करो। वैद्य कहेगा बस कुछ नहीं खाना है, केवल पानी और मट्ठा पीना है। रोगी बोलता है मैं तो मर जाऊँगा वैद्य कहेगा भूखा नहीं मरेगा, जी जाऐगा। खाते-खाते व्यक्ति मर जाता है भूखा रहने पर व्यक्ति मरता नहीं है। तो पहले मिटाना बहुत जरूरी है।

एक शिष्य गुरु के सामने सब समर्पण कर देता है, सर्वस्व समर्पण कर देता है, मिटने और पिटने को तैयार हो जाता है। यदि गुरु देखता है कि शिष्य रूपी वस्त्र में कुछ अच्छाई है ये वस्त्र बहुत कीमती है किंतु गंदा हो गया है तो गुरु रूपी धोबी उस वस्त्र को स्वच्छ कर देता है। वह गुरु शिष्य को पीटता है, डांटता है और उसे मिटाता है। ज्यों-ज्यों शिष्य पिटता चला जाता है, त्यों-त्यों उसके गुणों का निखार हो जाता है। पिटने से जो भी बुराईयाँ हैं वो निकल जाती हैं। जैसे कुम्भकार अपने मटके को पीटता है और पीटते-पीटते उसमें जो कंकड़ पत्थर रहते हैं उसे निकाल कर के बाहर कर देता है। मंगल कलश सबके लिए आदरणीय सम्मानीय बन जाता है। मिट्टी को पहले पीटता है उसे बिल्कुल बालू कर लेता है, कंकड़ पत्थर होते हैं वह निकाल कर बाहर कर देता है। वह मिट्टी मंगल कलश बनने में समर्थ हो जाती है।

महानुभाव ! जो पिटना ही न चाहे, एक चोट मारते ही वह टूट जाए, कह पड़े तुम कौन होते हो मुझे पीटने वाले। मैं नहीं पिटूँगा, मैं यहाँ नहीं रहूँगा। तो उससे कहेंगे जा तुझको बुलाया किसने। यहाँ पर तो पिटना ही पड़ेगा। यदि तुम पिटने के लिए, मिटने के लिए तैयार हो तब तो यहाँ पर स्थान है, यदि तुम मिटने के लिए तैयार नहीं हो तो कैसे स्थान मिलेगा। बुराईयों को तो मिटाना ही पड़ेगा ऐसा कोई उपाय नहीं है कि बुराईयों को मिटाये बिना अच्छाई को आरोपित कर

दिया जाए। खट्टी छाछ जिसमें रखी गई है ऐसी मटकी में यदि स्वच्छ दूध भी रख दिया जायेगा वह भी खराब हो जायेगा इसलिए मटके को अच्छी तरह से साफ करना जरूरी है। केवल साफ करना जरूरी नहीं उस मटके को ऊपर से अंदर से तपाना भी जरूरी है। उसकी गंध और बास भी उसमें रह जाए तो स्वच्छ दूध भी खराब हो जाएगा। महानुभाव, शिष्य को गुरु इसी तरह से पीटता है। उसे अंदर से और बाहर से तपाता है। कहीं वासना चेतना के प्रदेशों में रह नहीं जाए। यदि चेतना के प्रदेशों में किंचित् भी वासना रह जायेगी, कषाय के संस्कार रह जाएंगे तो तेरी आत्मा कभी भी परमात्मा तो छोड़ महात्मा भी नहीं बन पायेगी। इसलिए मिटना बहुत जरूरी है, पिटना बहुत जरूरी है।

महानुभाव ! गुरु दूसरों की चेतना को स्वच्छ करने का प्रयास करता है। गुरु वह शिल्पकार है जो अनावश्यक पत्थर को काटता-छांटता है, गुरु ऐसा दिशा निर्देशक है जो शिष्य को सही रास्ते पर चलाता है और गुरु उस गीली मिट्टी को एक आकार दे देता है। गीली मिट्टी को पहले कूटता है, फिर पानी डाल करके धर्म का अमृत डाल कर के उसे फूला लेता है। उसके बाद ही मंगल कलश का आकार देता है। जिस मिट्टी में पिटने की सामर्थ्य नहीं है व फूलने की सामर्थ्य नहीं है ऐसी मिट्टी कभी मंगल कलश नहीं बन सकती। महानुभाव, शिष्य वही हो सकता है जिसे गुरु के उपदेश का अमृत मिले तब उसका चित्त फूलता चला जायेगा। तब निःसंदेह वह शिष्य कुछ बन सकता है।

कषायों के त्याग बिना धर्म का स्वाद असंभव

कुसंस्कारों के ऊपर सुसंस्कारों का आरोपण नहीं किया जा सकता। कुसंस्कारों की काली छाया में सुसंस्कार पल्लवित नहीं होते। कुसंस्कार की काली रात्रि को निकल जाने दो। जिसको रात्रि से मोह

हो गया है इसका आशय है वह सूर्य को प्राप्त करना नहीं चाहता। यदि सूर्य को प्राप्त करना चाहता है तो रात्रि का मोह त्यागना पड़ेगा, अंधकार का मोह त्यागना पड़ेगा। एक समय एक ही स्थान पर रात भी हो और सूर्य का प्रकाश भी हो ऐसा संभव नहीं है।

एक चींटी वह शक्कर के ढेले पर रहती थी दूसरी चींटी उसे आकर के मिली कहने लगी बहन तुम तो बहुत दुबली-पतली हो गई हो। वह बोलती है मेरे भाग्य में तो ऐसा लिखा मैंने नमक के यहाँ पर जन्म लिया है नमक खाते-खाते मेरी हड्डी-पसली सब गल गई। बस मृत्यु की बाँट देख रही हूँ। दूसरी चींटी ने कहा ऐसा न कहो। हम और तुम दोनों बचपन से साथ-साथ रहीं, सहेली बन करके रहीं दोनों ने एक साथ शिक्षा प्राप्त की, संस्कार प्राप्त किए हैं अब मैं तुम्हारा साथ दूँगी। चल मेरे साथ और जहाँ मैं रहती हूँ वहाँ तो शक्कर ही शक्कर है। चींटी ने कहा, ठीक है बहन, तेरा बड़ा उपकार मैं तेरे साथ चलती हूँ। उसके साथ चली गई चींटी कहती है ले शक्कर का ढेर खा, कितनी शक्कर खायेगी। वह शक्कर खाती है किंतु उसे स्वाद तो नमक का आता है। कहती है बहन तुमने भी मुझे धोखा दे दिया। मैं तो समझती थी तू मुझे धोखा न देगी। वहाँ से चलाकर के लाई मैं तो थक गई। मेरे तो प्राण कण्ठ में आ गए। मुझे तो यहाँ पर भी नमक का स्वाद आ रहा है। बहन थोड़ा और खाओ हो सकता है नमक खाते-खाते तुम्हारे अंदर नमक के संस्कार पड़ गए इसलिए ऐसा लग रहा हो। नहीं, मुझे तो नमक का स्वाद आ रहा है। बहन! तुम्हारे मुँह में कुछ है तो नहीं। अरे, मेरे मुँह में क्या है? बस वहाँ से चलते समय थोड़ा नाश्ते के लिए नमक की डली रख ली थी छुपाकर के वह रखी है मुँह में। अरे बहन ! जब तक मुख में नमक की डली रखी होती है तब तक शक्कर का स्वाद नहीं आता। इसलिए नमक की डली को निकाल करके बाहर रख दे फिर शक्कर को खा। नहीं मैं इसे नहीं

छोड़ सकती इसे कोई ले गया तो। तुझे विश्वास नहीं है तो इसे पैर के नीचे दबाकर रख मुँह से निकाल फिर शक्कर को खाने का प्रयास कर। उस चींटी ने ऐसा ही किया और फिर उसे शक्कर का स्वाद आया।

मैं सोचता हूँ पंचेन्द्रीय चींटियों के आकार में जो मनुज हैं वे कब अपने अन्दर के कषाय, विषय-वासना रूपी नमक को निकाल कर बाहर रखेंगे, कब धर्म का स्वाद ले पायेंगे। कई बार व्यक्ति को मंदिर में आकर के भी धर्म का आनंद नहीं आता, स्वाद नहीं आता है। गुरुओं के पास बैठकर के भी कहता है, जैसा मुझे घर में लगता है वैसा यहाँ लगता है। घर में जो विषय-वासना के संस्कार तुम्हारे साथ चले आए हैं जब मंदिर में आओ तो जूते-चप्पल जैसे बाहर उतारते हो तो वैसे ही अंदर की विषय वासना को भी बाहर निकाल करके रख देना चाहिए। तभी तुम्हें भगवान दिखाई देंगे अन्यथा पाषाण की मूर्ति दिखाई देगी। गुरुओं के पास जीवन में जब भी आओ तब विषय वासना को छोड़कर के आओ, कषायों को छोड़कर के आओ। यदि गुरुओं के पास आते समय अपनी होशियारी को साथ में लेकर के आओगे तब गुरुओं से कुछ भी प्राप्त न कर पाओगे। कई बार व्यक्ति आते हैं। हमें सलाह देने के लिए हमारे सामने ही हुकूमत झाड़ने के लिए आते हैं हमें ज्ञान बाँटने के लिए भी आते हैं। मैं उनसे कहता हूँ भाई, अभी मुझे आवश्यकता नहीं है। मुझे ज्यादा ज्ञान का व्यापार नहीं करना जिससे मेरा कल्याण हो जायेगा उतना ज्ञान मेरे पास पर्याप्त है। मुझे तुम्हारी सलाह की अभी आवश्यकता नहीं है। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ जब भी मुझे तुम्हारी सलाह की जरूरत पड़ेगी मैं तुम्हारे पास नंगे पैर दौड़े-दौड़े आऊँगा।

सलाह का महत्त्व

महानुभाव ! जब सलाह कोई माँगे तो उसे दे देना। बिना माँगे जो सलाह दी जाती है तो उसका कोई महत्व नहीं। वकील साहब से पूछो

उनके पास कोई सलाह लेने आए एक-एक सलाह के हजारों रुपये लेते हैं और लोग देते हैं। यदि फ्री में सलाह देने लगें तो कोई न माँगे। चल तेरे जैसे सलाहकार बहुत हैं। भारत में बस यही कमी है सलाह देने वाले बहुत हैं किंतु फ्री की सलाह और सलाह लेने वाले बहुत कम। जो सलाह पैसे में ली जाती है वह वास्तव में कार्यकारी होती है, फ्री में दी हुई सलाह कार्यकारी नहीं होती इसलिए ये एडवाईस सेंटर शुरू करना पड़ा। क्योंकि ऐसे बूढ़े व्यक्ति अपने बच्चों को सलाह देते थे वे मानते नहीं थे झगड़ते थे कोर्ट में पहुँच गए अदालत में पहुँच गए। वहाँ जब केस चला और वह परेशान हो गए तब मजिस्ट्रेट ने कहा—किसी सलाहकार व्यक्ति को अपने साथ लेकर आओ वह तुझे सही सलाह देगा। तब से पुनः वकीलों की नियुक्ति प्रारंभ हो गई अन्यथा पहले वकीलों की आवश्यकता नहीं थी।

महानुभाव ! सलाह फ्री में मिलती है तो वह लाभदायक नहीं होती कोई मानता नहीं और पैसे में मिलती है व्यक्ति छोड़ता नहीं। एक छोटी सी सलाह यदि पैसे में मिलती है तो उसे आप नियम से पालन करोगे। एक श्रेष्ठी का पुत्र, वह वन में घूमते हुए आ रहा था। सामने बोर्ड लगा था हमारे यहाँ पर हर तरह की सलाह मिलती है। 1 रु. से लेकर के 1 लाख रुपये तक की। सेठ के पुत्र ने सोचा जब सलाह मिल रही है तो मैं भी कोई सलाह ले लूँ। उसकी जेब में पाँच रुपये थे। उसने पाँच रुपये में सलाह ली। उसे सलाह दी "जब कोई दो व्यक्ति आपस में झगड़ रहे हों तो वहाँ पर खड़े नहीं होना चाहिए।" ठीक है घर आया पिताजी से कहने लगा-पिताजी, मैं सलाह लेकर के आ गया। क्या सलाह लेकर के आया है? जब दो व्यक्ति झगड़ रहे हों तो वहाँ पर खड़े नहीं होना चाहिए। रे मूर्ख ! ऐसी सलाह तो मेरे पास हजारों हैं। तू पाँच रुपये देकर के चला आया। चल मेरे साथ किसको देकर के आया।

उसके साथ गया उससे कहने लगा तूने मेरे बेटे को ठग लिया। तूने पाँच रुपये ले लिए। ये भी कोई सलाह होती है क्या? दुकानदार बोला ठीक है अभी अच्छी नहीं लग रही तो वापस कर जाओ, लो तुम्हारे पाँच रुपये किंतु मैं यदि सलाह फ्री में दे दूँ तो, एक नहीं पाँच दे दे। तो फ्री में सलाह यह है कि जहाँ पर झगड़ा हो रहा हो वहाँ पर अवश्य रहना चाहिए। उसने कहा क्यों। बोले इसलिए यदि किसी के झगड़े के साक्षी हो तो झगड़े वाले दोनों व्यक्तियों में से तुम जिसकी गवाही दोगे वह तुम्हें पैसा देगा। तुम्हें पैसा मिल जायेगा। और यदि व्यर्थ में ही चले जाओगे तो क्या पैसा मिलेगा। फ्री की सलाह है, बोले बहुत अच्छा। सलाह ग्रहण कर ली बेटे ने, फ्री की सलाह थी और सलाह ग्रहण करके दूसरे तीसरे दिन वह जंगल में गया।

संयोग की बात संध्याकाल का समय था। जंगल में राजकुमार और मंत्री पुत्र दोनों अपने घर से घोड़े पर सवार होकर के आ रहे थे। दोनों ने निशाना लगाया और कोई एक शिकार किया। शिकार जो था उसमें दोनों के तीर लगे। मृग बहुत सुन्दर था उसे पकड़ लिया। राजदरबार में लाया गया घाव तो उसका ठीक हो गया किंतु उस मृग पर मंत्री पुत्र कहता है मेरा अधिकार है और राजपुत्र कहता है मेरा अधिकार है दोनों में बहुत झगड़ा हुआ। अब राजा न्याय कैसे करे। यदि कहता है कि राजपुत्र ने ठीक किया तो लोग कहेंगे देखो अपने बेटे का पक्ष ले रहा है। किंतु राजकुमार कहता है, पिताजी मैं सत्य कहता हूँ मेरे तीर से ही मैंने उसे घायल किया है वह मेरा है मंत्री के पुत्र का बाण तो बाद में लगा है। मंत्री पुत्र कहता है महाराज आप न्याय करो या अन्याय शिकार तो पहले मैंने किया है। बहुत मुश्किल हो गया न्याय करना। दोनों अपनी-अपनी बात को कह रहे हैं।

राजा ने उनसे पूछा कोई साक्षी भी वहाँ पर था बोले-हाँ था कौन था–वह सेठ का पुत्र था। सेठ के पुत्र की बात आई राजकुमार ने

अपना एक दूत भेजा और सेठ से कह दिया तेरा बेटा कल गवाही देने के लिए आयेगा यदि उसने मेरे पक्ष में गवाही नहीं दी तो ध्यान रखना कल ही संध्याकाल के पूर्व तुम्हें देश निकाला करवा दूँगा। वह सेठ सोचता है मुझे क्या है मैं राज पुत्र के संबंध में गवाही दिलवा दूँगा और कल जब राजपुत्र राजा बनेगा तब वह मुझे बहुत पुरस्कार देगा। जब वह राजकुमार का दूत लौटकर के वहाँ से आया तो मंत्री का एक व्यक्ति वहाँ उसके घर पहुँच गया और कहने लगा मुझे मंत्री ने भेजा है और कहा है यदि मेरे बेटे के संबंध में तूने गवाही नहीं दी तो ध्यान रखना रात्रि में ही तेरे घर में आग लगवा दूँगा कुछ नहीं बचेगा जिंदा मर जाओगे तुम सब। अब तो बेचारा सेठ घबरा गया क्या करूँ। इधर कुआँ इधर खाई। अब तो कहीं जा ही नहीं सकता, बहुत मुश्किल में पड़ गये।

पिता-पुत्र दोनों रोने लगे। बेटा कहता है पापा देखो मैं 5 रु. की सलाह लेकर के आया था अगर इस सलाह को मान लिया होता तो दोनों के झगड़े को मैं नहीं देखता मैं अपने घर सीधा आ जाता। किंतु जो फ्री की सलाह ली तो दोनों का झगड़ा देखता रहा उससे ये मुसीबत आ गई या तो घर में आग लगेगी या देश छोड़कर के भाग जाना पड़ेगा। पिता ने कहा बेटा तुम कहते तो ठीक हो अब उसी के पास चलें जो सलाह देता है। दोनों उसके पास गये बोले ऐसा-ऐसा मामला है। वह बोला इसमें तो एक लाख रुपये की सलाह काम करेगी छोटी मोटी सलाह काम नहीं करेगी पहले एक लाख रुपये रखो यहाँ पर और 5 रु. वो रखो क्योंकि उस सलाह को भी आप बाद में काम में लोगे तो एक लाख 5 रु. रखो तो मैं सलाह दे दूँगा।

सेठ मन में बड़ा दुखित हो रहा है मेरी मेहनत की कमाई जा रही है फिर बेटे ने कहा पिताजी जल्दी दो, नहीं तो रात्रि में या तो अपने मकान में आग लग जायेगी या हमें देश छोड़कर जाना पड़ेगा। पिताजी

ने रुंआसा होकर के एक लाख रु. निकालकर रख दिए और 5 रु. भी रख दिए। वह व्यक्ति कहता है पिताजी से, आप जाओ बाहर। सेठ के बेटे को बुलाया उसके कान में कुछ कहा और सेठ का बेटा खुश होकर के बाहर निकल आया। सेठ ने पूछा क्या सलाह दी बेटा बेला अब आपको नहीं बताऊँगा। आप सब गड़बड़ कर देते हैं, अब हमारे प्राण बच जाएँगे। न हमें देश को छोड़कर जाना पड़ेगा न हमारे घर में आग लगेगी। किंतु कैसे बचाएगा बता तो सही, आप देख लेना मैं आपको नहीं बताऊँगा। आप पुनः वापस करवा देंगे और पुनः हो सकता है हमारे प्राण संकट में पड़ जाएँ। ठीक है पिता पुत्र दोनों घर आ गए।

प्रात:काल जब दरबार में बुलाया तो वह दरबार में बड़ा विचित्र रूप बनाकर पहुँचा। एक पैर में तो उसने धोती पहन ली दूसरे पैर में पजामा पहन लिया ढीला ढाला सा। इधर धोती में जेब इधर पजामे में जेब। इधर से पहनी आधी शर्ट उधर से आधा दुपट्टा सा ओढ़ लिया और सिर पर टोप ऐसा लगाया जो न टोप न टोपी और उसमें सब जगह जेब, इधर भी जेब, उधर भी जेब, पीछे भी जेब और सब जेबों में क्या भर लिया किसी में मूंगफली, किसी में मुरमुरा, किसी में बताशे किसी में चने भर लिया। और पुनः वह पहुँच गया राज दरबार में। सब कह रहे थे कि श्रेष्ठी पुत्र आयेगा अपनी गवाही देगा जिसके पक्ष में गवाही देगा वही विजयी माना जायेगा और ये मृग उसे ही दे दिया जायेगा उसे राजकीय सम्मान भी प्रदान किया जाएगा। सेठ पुत्र पहुँचा सब देखते रह गए ये कौन है? वह सेठ पुत्र पहुँच करके एक जेब में हाथ डालता है और मुट्ठी भरकर मुँह में डालता है और खूब तेज हँसता है।

राजा ने पूछा कल शाम को तू गया था जंगल में ? कौन, जंगल वो तो मेरे घर में रहता है। राजा ने पूछा कल शाम को तूने मृग देखा

था। कौन सा मृग ? मृग ! उससे तो मैं रोज मिलता हूँ। फिलहाल हमारी बोलचाल बंद है। अरे ! कल तुमने मंत्री पुत्र और राजकुमार को देखा था। हाँ मेरे यहाँ पानी भरते हैं। और पुनः मुरमुरे खाता है हा.. ....हा............हा और कहता है। देखो मेरे यहाँ पर जंगल है। मेरे यहाँ पर राजपुत्र, मंत्री है और मृग ! अरे मृग तो मैं पेड़ों से तोड़कर के लाता हूँ। बहुत सारे मृग हैं अपने घर में तो। राजा कहता है किस पागल को पकड़ लाए भगाओ यहाँ से और उस पागल को भगा दिया। सेठ का पुत्र अपने घर आ गया। सेठ का मकान जलने से बच गया और सेठ को परदेश भी नहीं जाना पड़ा।

महानुभाव ! सलाह जब भी दें फ्री की न दें। इसलिए कई बार शिष्य गुरु को सलाह देते हैं तो गुरु कहते हैं तुम्हारे पास इतनी बुद्धि थी तो मेरे पास क्यों आये। बात ये है कि सलाह जब फ्री में दी जाती है तो वह अनर्थकारी हो जाती है।

तीन लाख की तीन बातें

महानुभाव ! एक व्यक्ति धन कमाकर के आ रहा था। उसके पास तीन लाख रुपये थे। उसने सोचा तीन लाख रुपये को मैं कैसे छुपाऊँ ? तो वह सोचता है कहाँ जाऊँ ? कहीं से ठिकाना नहीं मिला। वह चोरों का डर समझ के एक मंदिर में पहुँच गया जहाँ पर धर्म कीर्तन चल रहे थे। वह पहुँचा साधु के पास। सब भीड़ चली गई रात के 12 बजे साधु और वह दोनों ही रह गए। उसने कहा-महात्मा जी मैं आपके पास रात्रि विश्राम करना चाहता हूँ। मेरे पास 3 लाख रुपये हैं तो महात्मा जी ने कहा ठीक है विश्राम कर लो लेकिन कोई चोर चोरी करके ले जाए तो मेरी गारंटी नहीं। तो फिर ? ऐसा है कि सोने के बजाय हम कुछ चर्चा करते हैं। ठीक है महात्मा जी। किन्तु मैं चर्चा ऐसे नहीं करूँगा, मेरे पास बहुत अच्छी-अच्छी बातें हैं और एक अच्छी बात, अच्छी कहानी मैं तुम्हें बताऊँगा। महात्मा जी आपकी

बड़ी कृपा होगी आप तो परोपकारी हैं सुनाइए! किंतु मेरी एक कहानी का मूल्य 1 लाख रुपये है। उस व्यक्ति ने सोचा मेरे पास 3 लाख रुपये हैं 1 लाख दूँगा तो 2 लाख तो बच जायेंगे एक कहानी के सहारे से रात्रि तो पार हो जाएगी। कोई बात नहीं। उसने कहा ठीक है महात्मा जी आप तो कहानी सुनाओ।

उसने कहानी सुनाना प्रारंभ किया–''अपना भला चाहो तो दूसरों का कभी बुरा मत करो।'' वह कहता है और सुनाओ। बस कहानी पूरी हो गई ला दे एक लाख रुपये ये तो मुश्किल हो गयी। इतनी सी कहानी। अब दूसरी कहानी यदि सुनता है तो फिर एक लाख रुपये देने होंगे। वो बोला दूसरी कहानी भी सुना दो। तो दूसरी कहानी यह है–''कभी भी कोई कार्य करना है तो उतावलेपन में मत करना, धैर्य से करना है'' ठीक है कहानी पूरी हो गई। बोले एक कहानी और सुनाओ। बोले एक लाख रुपये और रखो तो एक लाख रुपये और रखे उसने तीसरी कहानी यह कही कि ''नौकर के सामने खुद काम मत करो। अर्थात् जो काम तुम्हारा नौकर कर सकता है उस काम को स्वयं मत करो।'' तीसरी कहानी पूरी हो गई उस साधु ने तीन लाख रुपये ले लिए।

अब वह व्यक्ति चैन की नींद सोया। बोला जाने दो–तीन लाख रुपये अब उसने तीन बातें सीख लीं तीन लाख में तीन बातें। तो पुन: वह आगे बढ़ा और प्रात:काल का समय था वह जैसे ही निकला था उसे मंदिर से रोने की आवाज आई। पीछे मुड़कर के देखा तो पाँच सात डाकू उस महात्मा को पकड़े हुए हैं। उसे पीट रहे हैं वह चिल्ला रहा है और तीन लाख रुपये छीनकर ले गए। उसने सोचा ये रुपये मेरे पास होते तो मेरी पिटाई होती, हो सकता है मेरे प्राण ही ले लेते। कम से कम तीन लाख में तीन बातें तो सीखीं। वह आगे बढ़ा और आगे देखता है एक बावड़ी थी कुएँ में उतरा स्नान आदि करने के लिए। सुनसान बावड़ी थी जंगल में वहाँ कोई नहीं आता था।

दो व्यन्तर थे, देव और देवी। वो निकल कर आ गए और उसे पकड़ लिया बोले तू यहाँ कैसे आया। तुझे हम नहीं आने देंगे तुझे मार देंगे, बेचारा घबरा गया, उसे रोना आ गया हाथ जोड़ने लगा। चल ठीक है तुझे हम छोड़ देंगे एक बात बता कि मैं सुन्दर हूँ या ये सुन्दर है? वो सोचता है कि मैं कहूँगा ये सुन्दर तो ये मुझे मार देगा। कहूँगा ये सुन्दर तो ये मार देगी। क्या करूँ तभी उसे उस महात्मा की पहली सीख याद आती है कि यदि अपना भला चाहे तो दूसरे की बुराई मत करना। अब तो उसने अपने मुँह से एक बार भी किसी को बुरा नहीं कहा। उन देवों ने 50 बार पूछा कि हममें से कौन सुंदर है पर हर बार उसने एक ही बात कही आप दोनों ही बहुत सुन्दर हैं। आप जैसे सुन्दर तो मैंने कहीं देखे ही नहीं। दोनों बहुत खुश हुए। एक-एक रत्नों का पिटारा बावड़ी में से लाकर उसको दे दिया, वह बहुत संतुष्ट हुआ।

अब और आगे जाता है। कुछ दिनों में अपने घर पहुँच जाता है वह अपने घर 20 वर्ष बाद लौटा था देखता क्या है उसकी पत्नी किसी पुरुष के साथ लेटी हुई है। उसे देखकर उसे बहुत क्रोध आया क्रोधावेश में उसने पास रखी तलवार को म्यान में से उस पर वार करने के लिए ज्यों ही निकाला उसे महात्मा की दूसरी बात याद आ गई कि उतावलेपन में कोई काम नहीं करना। उसने तलवार की नोंक पत्नी के पैर से छुआई उसकी नींद खुल गई और देखती क्या है सामने उसके पति खड़े हैं। उठती है प्रणाम करती है और कहती है बेटा उठ तेरे पिता आए हैं। यह शब्द सुनकर वह अवाक् रह जाता है कि जिस बेटे को मैं छोटा सा छोड़कर गया था वह बेटा आज इतना बड़ा हो गया। वह मन ही मन साधु को धन्यवाद देता है कि उसकी सलाह मेरे काम आई, मेरा घर उजड़ने से बच गया। अब वह अपने घर में चैन से रहने लगा। पहले नगर सेठ था किन्तु अब बहुत बड़ा राजा बन गया क्योंकि रत्नों के दो पिटारे भी उसके पास थे।

एक बार क्या हुआ एक शत्रु राजा ने अपने दूत इसे मारने के लिए भेजे और कहा तुम किसी तरह राजा को जंगल में बने देवी के मंदिर में ले आओ वहाँ मेरे चाण्डाल खड़े हैं वो उसे खत्म कर देंगे। दूत जाकर मंत्री से मिल गए। मंत्री ने महाराज से कहा कि हम आपके जीवन की दीर्घ कामना करते हैं इसलिए एक यज्ञ करना है, वह यज्ञ जंगल में देवी के मंदिर में होगा। संध्याकाल में आप और हम चलेंगे और हाँ आपको खाली हाथ नहीं जाना नारियल हाथ में लेकर जाना है। राजा ने कहा ठीक है। संध्या हुई राजा नारियल लेकर घोड़े पर जाने के लिए जैसे ही सवार हुआ उसे साधु की तीसरी बात याद आ गई कि नौकर के सामने खुद काम मत करो उसने सोचा संध्या भी है और मैं अकेला भी, यह नारियल जब नौकर ले जा सकता है तो मैं क्यों लेकर जाऊँ। नौकर को बुलाकर नारियल उसे देकर देवी के मंदिर भेज देता है और खुद मंत्री की प्रतीक्षा में वहीं रुक जाता है। नौकर नारियल लेकर गया वहाँ नियुक्त चाण्डालों ने राजा समझ उसे मार डाला। जब राजा को यह सब पता चला तो वह समझ गया यह सब मंत्री की चाल थी। उसने मंत्री को कैद में डाल दिया। इस प्रकार तीसरी सलाह से उसके प्राण बच गए। कहने का आशय यह है कि जब सलाह पैसे में मिलती हैं तो वह कार्यकारी होती है। कोई सलाह यदि बिना पैसे में मिलती है तो वह बर्बाद करने वाली भी हो सकती है।

योग्य शिष्य और भरी शीशी में लगती है डाँट

महानुभाव ! जीवन में अच्छे संस्कार प्राप्त करो। अच्छे संस्कारों को प्राप्त करने के लिए चाहे कितना ही आपको सहन करना पड़े यदि अच्छा गुरु मिल जाए तो आचार्य अपराजित सूरी ने भगवती आराधना की टीका में लिखा है–आचार्य अपने शिष्य को सुधारने के लिए ''पादेन प्रहारिता'' लात भी मार सकता है किन्तु शिष्य का भला करे।

यदि आचार्य लात भी मारे और शिष्य का हित हो रहा है तब भी शिष्य को छोड़कर नहीं जाना चाहिए और जो आचार्य अपने शिष्य की पूजा करे दिन भर तारीफ करे और तारीफ कर करके शिष्य के जीवन को बिगाड़ दे ऐसे आचार्य से तो अच्छा है वहाँ से चले जाना चाहिए।

महानुभाव ! डाँट उसी शीशी में लगाई जाती है जिस शीशी में कोई कीमती वस्तु-दवाई आदि रखी हो। जो खाली शीशी हैं उसमें डाँट नहीं लगाई जाती, उसे ढक्कन कहते हैं पहले डाँट लगाई जाती थी–लकड़ी की मजबूत डाँट। और डाँट उस शिष्य को लगाई जाती है जो शिष्य योग्य होता है जो शिष्य योग्य बन सकता है। जो योग्य नहीं है उसमें डाँट नहीं लगाई जती। तो डाँट उस शिष्य और शीशी के लिए आवश्यक है जिससे उसकी गुणवत्ता और बढ़ती चली जाए।

मिटो वहीं जहाँ मिले नया आकार

महानुभाव ! जो मैंने आपको बताया था कि कुसंस्कार जहाँ पर है तो वहाँ सुसंस्कारों की नींव नहीं हो सकती। जहाँ सुसंस्कार हैं वहाँ कुसंस्कारों की नींव नहीं हो सकती। झोपड़ी बनाने के लिए नींव खोदी। अब तुम सोचो उस पर महल बना दोगे तो बन जाएगा क्या ? जो महल की नींव खोदी है बड़ी गहरी नींव 20-20 फीट गहरी नींव खोदी, बड़ा आसार देकर के खोदी है उस पर तुम झोंपड़ी डालना चाहो तो झोंपड़ी उस पर टिकेगी नहीं। तो महल की नींव अलग होती है झोंपड़ी की अलग होती है। झोंपड़ी के गिट्टे गाढ़ने के लिए चार अंगुल का गड्ढा पर्याप्त है और महलों के लिए 20 से 30 फीट गहरी नींव खोदनी पड़ सकती है। तो महानुभाव ! एक मटका यदि उल्टा रखा है तो उस पर उल्टे मटके वह कुम्भकार बीस रख लेगा और एक मटका सीधा रखा है तो उस पर सीधे मटके रखे जा सकते हैं। कुसंस्कारों के ऊपर कुसंस्कार वृद्धि को प्राप्त होते हैं, सुसंस्कारों पर

सुसंस्कार वृद्धि को प्राप्त होते हैं। तो जीवन में मिटना भी आवश्यक है और पिटना भी आवश्यक है। किंतु कहाँ मिटें और कहाँ पिटें। किसी दुष्ट के हाथ से पिटना भी अच्छा नहीं, किसी दुष्ट के हाथों मिटना भी अच्छा नहीं। जो अच्छा शिल्पकार नहीं है जो व्यक्ति अनाड़ी है ऐसे व्यक्ति के हाथ में अगर पत्थर आ जायेगा तो पत्थर का चूरा-चूरा कर देगा बालू बना देगा। वही पत्थर यदि किसी नदी के पानी में लुढ़कता हुआ चला जायेगा, वहाँ मिटेगा और पिटेगा तो, पर कम से कम गोल आकार में तो आ जायेगा और वही पत्थर किसी पत्थर से टकराता तो चूर-चूर हो जायेगा। तो मिटो वहीं जहाँ तुम्हें नया आकार मिले और पिटो वहीं जहाँ जीवन का स्वप्न साकार हो जाए।

महानुभाव ! जीवन को साकार रूप और आत्मा को नया आकार मिले, तब तो मिटना और पिटना बुरा नहीं है। किंतु जो व्यक्ति ज्यादा ही होशियार अपने आपको मान लेता है तो कई बार ऐसी जगह से पिटकर आ जाता है जहाँ से उसका डिमोशन हो जाता है। किंतु जो व्यक्ति अच्छे से पिटकर आता है वह फिर दोबारा पिटता नहीं है। सोने को एक बार कसकर पीट लो शुद्ध हो जाता है दुबारा पिटेगा नहीं। कच्चा लोहा भी अग्नि के साथ पिटकर शुद्ध हो जाता है फिर उसे पिटने की आवश्यकता नहीं पड़ती। किंतु यदि कच्चा है और थोड़ा पिटा, मिट्टी के साथ में फिर से चला गया फिर जंग लग गयी तो फिर पिटना पड़ेगा, इसलिए पिटना है तो एक बार अच्छे से पिट लो। मिटना है तो एक बार अच्छे से मिट लो। क्षत्रिय की तरह से या तो इस पार या उस पार। बीच में लटक जाओगे तो न नीचे जाओगे न ऊपर जाओगे। वह सासादन सम्यक्‌दृष्टि और मिश्र वालों की तरह से, जो मिथ्यात्व में पड़ा हुआ है वह तो सम्यक् दृष्टि बन सकता है और जो सासादन में पड़ा हुआ है वह सम्यक दृष्टि नहीं बन सकता उसे पहले मिथ्यात्व में जाना ही पड़ेगा।

महानुभाव ! कई बार अज्ञानी व्यक्ति का कल्याण जल्दी होता है, किंतु जिसने ज्ञान के नाम पर अज्ञान को बटोर लिया है ऐसे व्यक्ति के जीवन में ज्ञान का प्रकाश असंभव है। तो जिसने जीवन में माता-पिता की डाँट-फटकार सहन नहीं की उस व्यक्ति के बिगड़ने के चांस ज्यादा हैं। जो व्यक्ति या जो बालक माता-पिता की डाँट फटकार को सहन कर के बचपन से सुसंस्कारों के साँचे में ढल गया है उसके बिगड़ने के चांस कम रहते हैं।

तो जीवन में न मिटना बुरा है न पिटना बुरा है। पुरानी पर्याय को मेटो जिससे नई पर्याय उत्पन्न हो और पुन: इसके साथ-साथ बुराईयों को पीटो यदि बुराईयों का सम्मान होता चला जायेगा तो बिना पीटे बुराई जायेगी नहीं। जैसे लोग कहते है न किसी के फोड़ा हो जाए तो फोड़े में ऐसी दवाई लगाओ जो लगे। दवाई लग रही है तो फोड़ा जल्दी ठीक हो जाएगा और यदि दवाई नहीं लग रही, फोड़े में चुभ नहीं रही तो बोले फोड़ा ठीक नहीं होगा। कहने का आशय है कि जब बुराई पिटती है तब पिटकर के मिटती है जो बुराई पिटती नहीं सम्मान पाती है वह अपनी जड़ें बहुत गहरी जमा लेती है पुन: जीवन में से दूर नहीं हो सकती इसलिए उस बुराई को पीटना बहुत जरूरी है।

बस मैं आपसे इतना ही कहूँगा आप मिटने को तैयार हो जाओ आप पिटने को तैयार हो जाओ। यदि आप अपनी भूमिका को नहीं छोड़ोगे नहीं त्याग करोगे तो इस भूमिका से ऊपर पहुँच नहीं सकोगे। जो अपनी भूमिका को छोड़कर इधर आता है, उधर से मिट गया तो यहाँ बन गया। पहले किसी का नाम कुछ और था उसका नाम मिट गया अब कुछ और हो गया। पहले ये घर को छोड़कर आया मतलब पहला घर उसका मिट गया उसके अनेक घर हो गए। एक माता-पिता को छोड़कर के आया उसको ऐसा लगता है संसार में सब माता-पिता

तुल्य हैं। यदि वह किसी एक वस्तु को छोड़कर के आया उसको अनंत वस्तु दिखाई दे रही हैं। जो एक को नहीं छोड़ता एक को नहीं मिटाता है वह अनेक को प्राप्त नहीं कर पाता। जो अंदर में विद्यमान एक है उस एक को निकाल करके बाहर कर देता है तो अनेक उसके पास आ जाते हैं।

महानुभाव ! गुणों का जीवन में प्रादुर्भाव हो, इससे पूर्व आवश्यक है दोषों को नष्ट करने की किंतु दोष ऐसे न मिटेंगे। सहलाते-सहलाते कषाय को नष्ट नहीं कर सकते। जब आघात पहुँचता है तब कोई चीज नष्ट होती है। कई व्यक्ति बीड़ी पीने वाले सिगरेट पीने वाले, तम्बाकू खाने वाले वह कहते हैं छूटती नहीं हैं। कौन कहता है नहीं छूटती, ये कहो हम छोड़ते नहीं है। छोड़ते नहीं इसलिए नहीं छूटती संसार में ऐसा कोई काम नहीं जो असम्भव हो। हर काम संभव है असम्भव तो कुछ है ही नहीं व्यक्ति मन में ठान ले। सिगरेट, तम्बाकू आदि जो भी छोड़ना चाहते हो उसे गिरा देना तो देखो छूट गयी परन्तु छोड़ना ही नहीं चाहते। पीने वाला व्यक्ति वो बोतल का ढक्कन खोलकर नीचे कर दे तो छूट जाएगी अपने आप। नियम ले ले जब भी मैं शराब पीऊँगा तो उसको मुख की ओर नहीं ले जाऊँगा नीचे कर दूँगा तो नीचे गिर जाएगी तुम्हारे मुँह में कैसे जाएगी। छूटने को सब छूट सकती है, छोड़ने के लिए साहस तो चाहिए।

जीवन में कोई भी बुराई हो। चाहे कोई व्यक्ति पर स्त्री सेवन करता है या किसी व्यक्ति में कोई और भी गंदी आदत है मैं कहना नहीं चाहता गंदी आदतों की, दोषों की चर्चा कम करना चाहिए तो कोई भी गंदी आदत हो वह गंदी आदत छूट सकती है किसी अच्छाई का साथ करने से। अच्छाई का साथ करोगे तो बुराई छूटेगी। अच्छाई दूर जायेगी या बुराई छूट जायेगी दो में से एक छूट जायेगी। यदि बुराई में ज्यादा आसक्त हो तो अच्छाई छूट जाएगी और अच्छाई में आसक्त

हो तो बुराई छूट जाएगी। तो महानुभाव ! जिसे अपने अंदर बिठाना चाहते हो उसके पास बैठना शुरु करो। यदि भगवान को अपने अंदर बिठाना चाहते हो तो भगवान के पास बैठना शुरू कर दो। गुरु को अपने हृदय में बिठाना चाहते हो तो गुरु के पास बैठना शुरू कर दो। यदि किसी स्वार्थी, ढोंगी को हृदय में बिठाना चाहते हो तो उसके पास बैठना शुरू कर दो। जिसके पास बैठोगे वही चीज तुम्हारे अंदर बैठती चली जाएगी। अधिक न कहकर के आप सभी लोगों के लिए इतना ही आशीर्वाद है कि जीवन में मिटना बुरा नहीं है और जीवन में पिटना बुरा नहीं है, यदि हमारे कल्याण के लिए है तो। और यदि अकल्याण के लिए कुछ है तो न मिटना अच्छा है न पिटना अच्छा है, न बनना अच्छा है, न चढ़ना अच्छा है। जिस बनने और चढ़ने से, मिटने और पिटने से जीवन पतित होता है वह त्याज्य है जिससे जीवन का कल्याण होता है वह सब ग्राह्य है। आप सबका कल्याण हो, मंगल हो आप सबका का शुभ हो मैं आप सबके लिए बहुत आशीर्वाद देता हूँ।.....!!!

माटी कहे कुम्हार सो

आज थोड़ी सी चर्चा करेंगे। यह चर्चा है ''कुम्भकार और मिट्टी की चर्चा''। कुम्भकार मिट्टी से क्या कहता है? और मिट्टी कुम्भकार से क्या कहती है? कुम्भकार मिट्टी से मौन भाषा में कहता है कि मेरी सामर्थ्य है कि मैं तुझे कूटकर के पीट कर के मंगल कलश बना सकता हूँ। किंतु जब तू पिटेगी, कुटेगी और पद प्रहार सहन करेगी तब तू मंगल कलश बन सकेगी और कल आपने देखा था ''न मिटना बुरा है, न पिटना बुरा है'' कहाँ मिटना है और कहाँ पिटना है। किसके पास जाकर मिटना है जो मंगल आकार देने में समर्थ है उसके सामने पुरातन आकार छोड़ने में कोई हर्ज नहीं। जो मंगल आकार देने में समर्थ नहीं हैं वहाँ पर मिटना बुरा है। यदि ये शरीर समता भाव से छूटता है तो छोड़ना बुरा नहीं है। यदि ये शरीर विषमता के साथ संक्लेशता के साथ छूटता है तो ऐसी मृत्यु बुरी है। इसलिए पिटना भी कहाँ है जहाँ पिटकर के दोषों का क्षय और गुणों का आविर्भाव हो वहाँ पिटना ठीक है। दुष्ट के द्वारा पिटना ठीक नहीं है। वह धन भी छीनता है और आपका स्वास्थ्य भी। किंतु शिष्य का गुरुजनों के द्वारा पिटना ठीक है। वे दोषों का परिहार करके गुणों को प्रकट करने में समर्थ होते हैं।

फर्श से अर्श तक

महानुभाव, यहाँ मिट्टी कहती है कुम्भकार से-जीवन में सदा किसी का समय एक जैसा नहीं आता। आज जो आकाश में उड़ रहा है वह कल जमीन पर गिर सकता है। जो आज जमीन पर चल रहा है वह आकाश में उड़ सकता है। जो नींव के नीचे दबा हुआ पत्थर है वही पत्थर कल शिखर का कारण बन जायेगा। जो नींव को महत्त्व नहीं देता वह शिखर तक नहीं पहुँच पायेगा। बिना नींव का शिखर

धराशाही हो जाता है और नींव यदि उत्कृष्ट है, नींव यदि सुदृढ़ है तब उस पर अच्छी बिल्डिंग भी बनाई जा सकती है। एक अच्छे सुंदर भवन का निर्माण हो सकता है।

कुम्हार से माटी क्या कहती है? माटी कुम्हार से कहती है अपनी औकात में रहो। अपनी बात को मत भूलो और अपनी औकात को मत भूलो।

जो व्यक्ति अपनी बात को भूल जाता है वह सज्जनों की सभा में निंदा को प्राप्त होता है। जो व्यक्ति अपनी औकात को भूल जाता है वह दु:खों के सागर में गोते लगाता है। उसके जीवन में दु:खों के सघन मेघ बरसते रहते हैं। आपत्ति-विपत्ति के सघन श्याम घन छाए रहते हैं। जो व्यक्ति कभी अपनी बात को नहीं भूलता, अपनी औकात को नहीं भूलता, अपनी क्षमता और समता में रहता है, जो व्यक्ति अपनी शक्ति से ज्यादा करता नहीं और अपनी शक्ति छिपाता नहीं ऐसा व्यक्ति प्रशंसनीय होता है, अभिवंदनीय होता है। जिसने हमेशा अपनी बात को याद रखा है, अपनी औकात को याद रखा है वह निरभिमान फर्श से अर्श तक की यात्रा तय करता है किंतु जब-जब यह मानव अपनी बात को भूला है, अपनी बात से मुकर गया है अपनी औकात को नहीं समझा है तब-तब व्यक्ति ने संकटों का सामना किया है।

महानुभाव, व्यक्ति कुछ पैसा प्राप्त कर ले तो अपनी बात को भूल जाता है। आपे में रहने का आशय है अपनी आत्मा में रहना। अपनी सीमा में रहना, अपनी मर्यादा में रहना और अपने नियम के अंदर चलना और आपे के बाहर से आशय है अपनी सीमा के बाहर आ जाना, अपनी आत्मा के बाहर आ जाना। जो व्यक्ति सीमा के बाहर जाता है जिसने भी जीवन में सीमा रेखा का उल्लंघन किया है उसने कष्टों को अवश्य भोगा है। चाहे सीमा रेखा का उल्लंघन करने

वाले भगवान राम हो। राज्य अवस्था में जब राम वनवास में थे और उन्होंने शिकार के लिए स्वर्ण हिरण का पीछा किया अपनी सीमा का उल्लंघन किया। चाहे सीता जी हों उन्होंने लक्ष्मण रेखा का उल्लंघन किया तो वह भी संकट को प्राप्त हुईं, चाहे रावण हो उसने भी राजनीति के नियमों का उल्लंघन किया इसलिए वह भी कष्ट को प्राप्त हुआ। जिसने भी जीवन में अपनी सीमा का उल्लंघन किया है अपनी मर्यादा का उल्लंघन किया है, अपने नीति नियमों का उल्लंघन किया है, न्याय का उल्लंघन किया है ऐसा व्यक्ति कष्ट को अवश्य प्राप्त होता है।

जागरूक रहें

महानुभाव ! इसलिये मानव के लिए बहुत आवश्यक है सुबह और शाम आँख बंद करके प्रभु परमात्मा के चरणों में माथा टिकाने के साथ-साथ ये भी ध्यान रखना कि कहीं मेरे द्वारा मेरी सीमा का उल्लंघन तो नहीं हो रहा। कहीं मेरे द्वारा मेरी मर्यादा का उल्लंघन तो नहीं हो रहा, कहीं मेरे द्वारा मेरी शान में कोई बट्टा तो नहीं लग रहा, मेरी प्रतिष्ठा में कोई दाग तो नहीं आया। जो व्यक्ति इस प्रकार से सोचता है, ऐसा व्यक्ति दु:खों से बच जाता है। यदि एक ट्रेन अपनी सीमा का मर्यादा का उल्लंघन कर दे पटरी से नीचे उतर जाए तो ट्रेन में बैठे सभी यात्री मृत्यु तक को प्राप्त हो सकते हैं। यदि कोई बस अपने नियमों का उल्लंघन करके बायें हाथ पर न चल करके दायें हाथ पर चली जाये और दुर्घटना हो जाए तो बहुत सारी जन-हानि हो सकती है। यदि नाव नदी में चल रही है थोड़ा सा चूक जाए और पतवार छूट जाए तो नाव डूब सकती है। प्रज्ञ पुरुष को हमेशा जागरूक रहना चाहिए। हमेशा जागरूक रहना चाहिए स्वयं सेवक को। हमेशा जागरूक रहना चाहिये किसी प्रशासक को, हमेशा जागरूक रहना चाहिए मुखिया को, हमेशा जागरूक रहना चाहिए जिनके हाथों

में बहुतों की बागडोर है उनको। यदि एक मिनट के लिए भी चूक जायेगा तो क्षण भर की भूल भी अनेक जीवों के जीवन को खतरे में डाल सकती है। तो महानुभाव, जागरूकता बहुत जरूरी है, सावधानी बहुत जरूरी है। असावधानी ही संकटों का द्वार है, असावधानी ही मृत्यु का द्वार है, असावधानी ही पतन की सीढ़ी है, असावधानी मानवता पर कलंक है, असावधानी ही अभिशाप है। व्यक्ति को सदैव सावधान रहना चाहिए। जो सावधान रहता है वही वास्तव में शासक होता है, जो सावधान रहता है वही एक योगी हो सकता है, जो सावधान रहता है वही नेतृत्व करने की क्षमता रखता है, जो सावधान रहता है वही मुखिया का गुण पाता है। 'माटी कहत कुम्हार सो' क्या कह रही है माटी कुम्हार से।

एक दिन एक व्यक्ति अपनी कोठी के बाहर धातुओं के बने अक्षर, संभव है मेटल के बने थे उस पर स्वर्ण पॉलिश थी, वह बहुत बड़ी प्लेट अपने द्वार के बाहर लगा रहा था। वह बोल्ट कस करके सेट कर रहा था कि कहीं गिर नहीं जाए। वह ऊँची भी थी जिससे किसी का हाथ न पहुँचे। जब वह अपनी नेम प्लेट लगा रहा था तब उसे ऐसा लगा कि सामने से हँसी की आवाज आ रही है। उसने अपने पीछे मुड़कर देखा, दाँये देखा, बायें देखा, ऊपर देखा, नीचे देखा, कहीं से हँसी तो आ रही है किंतु कोई दिखाई नहीं दे रहा। दुबारा उसने प्लेट को लगाने का प्रयास किया फिर उसे जोर से हँसी की आवाज आई उसने फिर मुड़कर के देखा किंतु उसे फिर भी कहीं कोई नहीं दिखा। तीसरी बार फिर उसने साहस किया, तब उसे लगा कि तीसरी बार फिर कोई अट्टाहस कर रहा है और लगता है ये हँसी, किसी की हँसी में सम्मिलित नहीं, अपितु किसी के ऊपर हँसी है। हँसी दो प्रकार की होती है। एक किसी के ऊपर हँसना, एक किसी के साथ हँसना। तुम किसी के साथ हँसोगे तो वह तुम्हें अपना मानेगा,

किसी के साथ हँसना बुरा नहीं, लेकिन किसी के ऊपर हँसना बुरा है। जब मानव-मानव के ऊपर हँसता है तो वह दानव की श्रेणी में आता है जो मानव-मानव के साथ हँसता है तो वह मानव महामानव की श्रेणी में आता है। इसलिए किसी के ऊपर नहीं हँसना चाहिए। तो ये जो हँसी की आवाज आ रही थी ऐसा लग रहा था कोई किसी के ऊपर हँस रहा है। किसी के साथ नहीं हँस रहा। यदि किसी के साथ हँसता तो 2-4 हँसी एक साथ मिक्स आती, किंतु ये तो हँसी ऐसी आ रही है जैसे एकल हँसी हो। उसने देखा कौन हँस रहा है किसके ऊपर हँस रहा है। उसे लगा ये आवाज तो नीचे से ही आ रही है और जब उसने पूछा कौन ? तो नीचे से आवाज आती है। मैं ! तू कौन ? मैं पृथ्वी। अरे तू ! तू क्यों हँसती है? मैं तेरी मूर्खता पर हँसती हूँ। मेरी कौन सी मूर्खता है ? यही तो तेरी मूर्खता है। मैं देख रही थी कि जो आयरन की प्लेट तूने निकाली है और दूसरी प्लेट को लगा रहा है इससे पहले मैंने यह भी देखा था कि ये काम तेरे पिताजी ने भी किया, उनके पिताजी ने भी किया और मैं सोच रही हूँ जिस नेम प्लेट को तू आज लगा रहा है यदि शाम को तू दिवंगत हो गया तो कल सुबह तेरा बेटा अपनी नेम प्लेट लगायेगा। ये प्लेट कब तक लगाते रहेंगे ये होटल की प्लेट नहीं है कि जब चाहे धो-धोकर साफ करते जाओ। एक के सामने रख दी, दूसरे के सामने, फिर तीसरे के सामने। ये नेम प्लेट है तू नहीं समझता है ये तेरी शाश्वत नहीं है। तू नेम प्लेट लगाकर के सीना फुलाकर के सामने खड़ा होना चाहता है, बताना चाहता है कि मैं यहाँ का मालिक हूँ किंतु तुम जैसे अनंत आए और चले गए। ये भवन नहीं है ये तेरा स्थायी निवास नहीं है ये तो सराय है, पड़ाव है और जिस पड़ाव को कोई व्यक्ति अपना कह दे उससे बड़ा मूर्ख और कौन हो सकता है? जिस पर तू अपनी नेम प्लेट लगा रहा है वह तेरा मरघट भी हो सकता है। तेरे जीवन की मुख्य घटना

मृत्यु की घटना यहाँ पर घटित हो सकती है और जन्म की घटना तो अब कोई निश्चित नहीं है।

शाश्वत चित्र चरित्र का

पहले बात थी, जन्म घरों में होता था तो कह सकते थे ये मेरी जन्म भूमि है इसलिए मैं प्राण देने को तैयार हूँ रक्षा करूँगा। अब तो तुम्हारी जन्म भूमि अस्पताल होती है प्रायः करके। बहुत से लोगों की जन्म भूमि अस्पताल है तो अस्तपाल के लिए प्राण देते हैं व्यक्ति। अस्पताल में ही जन्म लेते हैं और अस्पताल में ही जाकर प्राण देते हैं। पहले जन्म घर में होता था, तो घर की रक्षा के लिए घर में बने पूजागृह की रक्षा के लिए, घर के इंसानों की रक्षा के लिए, व्यक्ति उनके लिए जीता भी था और उनके लिए प्राण भी देता था किंतु अब घर से ममत्व हो तो कैसे ? वह तो बस अस्पताल में जन्म लेता है और जन्म के साथ अनेक रोगों को लेकर के आता है और वे रोग मृत्यु के बाद ही पीछा छोड़ते हैं। तो महानुभाव, वह पृथ्वी जो हँस रही है कह रही है ऐसी नेम प्लेट तू कब तक बदलता रहेगा। तू इंसान है, तू मनु की संतान मनुज है अपने आपको देखता क्यों नहीं। हास्य का पात्र बना हुआ है। ये नेम प्लेट तुझे लगाने की आवश्यकता नहीं है। अरे तू अच्छा काम तो कर, लोग तेरे नाम की नहीं तेरे चित्त की प्लेट अपने हृदय में लगायेंगे। ऐसा काम क्यों नहीं करता कि तेरा चित्त, तेरा चरित्र व्यक्तियों के चित्त में लीन हो जाए, अंकित हो जाए।

तू अपना चित्र छपवाता फिरता है, अपना नाम लिखवाता फिरता है, अरे एक बात तो सोच ले–ये चित्र तो माटी का चित्र है किंतु तेरा जीवन चरित्र जो है वह जीवंत चित्र है। यदि एक बार तूने इसको सही कर लिया तो तुझे स्वयं नहीं जाना पड़ेगा फोटो ग्राफर के पास फोटो खिंचवाने के लिए। लोग तेरे पास आयेंगे और तेरे चरित्र की अपने चित्त में फोटो खींचेंगे। और वह नैगेटिव और पोजेटिव दोनों लेकर के

जायेंगे और फोटो उनके पास स्थाई रहेगी। जब-जब भी वह चिंतन करेगा तेरे बारे में तो ताजा फोटो बनकर के आ जाएगी, उस नैगेटिव से कॉपी होती चली जायेगी। महानुभाव, उस पृथ्वी की बातें सुन करके उसे कुछ लगा तो सही कि वास्तव में बात तो सही है। मैंने अनंतों बार ये सब कार्य किया है और अपने शरीर को नष्ट किया है मिट्टी में मिला दिया है। ये माटी की अर्जी बिल्कुल सही है ये माटी बिल्कुल ठीक कहती है। जिस माटी को मैंने अनेकों बार अपना शरीर बनाया। जिस माटी पर मैंने अनेक बार अपने पैर रखे, जिस माटी को मैंने पैरों से रौंदा। जो माटी पददलित है, वह धूल पैरों की ठोकर खाकर सिर पर सवार भी हो सकती है। यदि जिस व्यक्ति की दृष्टि में इतना सा उपदेश है, इतना सा वह धर्म को जानता है, इतना भी यदि नीति, न्याय को जानता है, इतनी जीवन की सभ्यता जानता है, इतना संसार का स्वभाव जानता है तो निःसंदेह वह किसी का अपमान नहीं कर सकता। दूसरे का अपमान वही कर सकता है, अपने अहंकार का पोषण वही कर सकता है जो यह सोचता है मैं तो बस स्थायी हूँ। मैं तो बस ऐसा ही रहूँगा और सामने वाले के बारे में सोचता है, कि यह निम्न पड़ा हुआ है तो नीचे ही पड़ा रहेगा वह कभी ऊँचा नहीं उठ सकता। किंतु मानव को सोचना चाहिए कि जो जमीन पर रेंगने वाली चींटी है वह भी कल तुमसे पहले भगवान बन सकती है। ये भी सोचना चाहिए जो स्वर्ग का देवता है वह कल मृत्यु को प्राप्त करके कीड़ा भी बन सकता है। ऐसा भी हो सकता है जो आज नारकी है, नरक की यातनाएँ भोग रहा है, कल वह नरक की पीड़ा को भोगते-भोगते उन दुःखों से मुक्त होकर के अच्छे कार्य करके मानव बन सकता है। मानव से महा मानव बन सकता है। इंसान से भगवान बन सकता है।

सुख में फूलों नहीं, दुख में कूलो नहीं

महानुभाव, व्यक्ति की नियति को कौन जानता है, व्यक्ति की प्रवृत्ति को कौन जानता है। ये तो बाह्य प्रवृत्ति को हम देख लेते हैं और हमारी बुद्धि, हमारे नेत्र ज्यादा दूर तक देख नहीं पाते हम चार फीट का भी तो देख नहीं पाते और निर्णय कर लेते हैं जैसे मानों हमने सब कुछ देख लिया हो। अरे 4 फीट तो छोड़ो हमारी पीठ के पीछे क्या है वह तो दिखाई नहीं दे रहा, हमें ये दिखाई नहीं दे रहा हमारे सिर के ऊपर क्या है और तो ठीक है सही बात कहें आँख को खुद आँख दिखाई नहीं देती तो तुम किसको देखोगे। आँख खुद अपने आपको नहीं देख सकती आप यदि अपने आपको देखेंगे तो दर्पण की आवश्यकता होती है बिना दूसरे के निमित्त से आप खुद को भी नहीं देख सकते। कैसा भी बढ़िया कलाकार हो अपने कंधे पर दोनों पैर रखकर खड़ा नहीं हो सकता। कितनी भी अच्छी तलवार हो वह तलवार खुद अपने आप को नहीं काट सकती। ऐसे ही व्यक्ति अपनी औकात को नहीं जान पाता। जब शेर को सवाशेर मिल जाता है और जब चोट खाता है तब उसे अपनी औकात का ख्याल आता है और जब भूल जाता है और भूल करके संकटों का पहाड़ टूट जाता है तो उसे अपनी बात का ख्याल आता है मुझे ऐसा करना चाहिए। मैंने तो जीवन में ऐसा नियम लिया था संयम लिया था, संकल्प लिया था, अरे मैं भूल गया, मुझसे ऐसी भूल हो गई ऐसा नहीं करना चाहिये था। तब याद आता है। बीती बात तभी याद आती है जब जीवन में संकट की घड़ी आती है। सुख की घड़ी में बीती बातों को कौन याद करता है किसी ने भी आज तक याद की? नहीं, जब सुख की घड़ी आती है तो दु:ख की घड़ियों को याद नहीं किया जाता। कहीं प्रसंग आ जाये बात छिड़ जाये अरे छोड़ो भी उन बातों को याद करके दु:ख होता है छोड़ो ! अब आगे की बात करो तो व्यक्ति दु:ख की घड़ी

में अतीत को याद करता है चाहे वह दुखद हो या सुखद हो। सुख की घड़ी में उसके पास समय ही नहीं है कि वह याद कर सके, चर्चा कर सके।

'माटी कहत कुम्हार सो'। माटी कुम्हार से क्या कहती है, अपनी औकात में आ जा। बेटा, तू मुझसे बेटा कह रहा है, क्योंकि तूने मुझे जन्म दिया नाना प्रकार का आकार दिया तू मेरा बाप बनकर के, एक मालिक बनकर के मुझे अपने Under में रखते हुए मुझे सेवक बना रहा है किंतु तू अपनी औकात भूल गया अनंत बार मैंने तेरे शरीर को बनाया है अनंत बार तेरा शरीर मेरे में मिल गया है। तू उसे भूल गया और ये भी भूल गया कि मिट्टी को रौंद करके फुला करके तूने आकार दे दिया तूने कलश बना दिया, खिलौना बना दिया और तू अपने आपको शहंशाह समझने लगा, अपने आपको विश्व का सम्राट मानने लगा। अपने आपको भगवान मानने लगा, अरे अपनी औकात तो पहचान। ये औकात जब तक न पहचानेगा तब तक आत्मपना प्रकट न हो सकेगा। जो व्यक्ति औकात को पहचानता है, अपनी बात को पहचानता है तो निःसंदेह वह व्यक्ति जीवन में सब कुछ प्राप्त करने में समर्थ है। जब-जब भी व्यक्ति भूलता है-तब-तब दुःखों के सागर में फूलता है, संसार के झूले में झूलता है। इसलिए क्षणिक सुख आ जाए तो फूलो मत। और दुःख आ जाए तो दुःख में कूलो मत। कुछ भी हो भगवान को भूलो मत और संसार के झूले में झूलो मत।

आत्मा की परिपाटी

महानुभाव ! यही जीवन की सत्यता है

'माटी कहत कुम्हार सो', तू का रोंदे मोय
इक दिन ऐसा आयेगा, मैं रोंदूंगी तोए।

ये माटी अपना संदेश कुम्हार से कहती है और कुम्हार तो प्रतीक है किंतु सत्यता ये है वह संसार के प्रत्येक प्राणी से कह रही है। इस

मिट्टी पर तू फूला न समाये। तू इस पर नाज करता है ये माटी तेरा साथ देने वाली नहीं है। ये माटी तेरी नहीं है, तू माटी को भले ही अपना कहता रहे किंतु माटी तुझे अपना नहीं कहती है। क्योंकि तू तो माटी बदलने का आदि हो गया है न। मिटना, मिटकर फिर बन जाना माटी की परिपाटी है। ये तो माटी की परिपाटी है कि मिटती है फिर बनती है फिर मिटती है फिर बनती है ये माटी की परिपाटी है। आत्मा की परिपाटी नहीं हैं। तू आत्मा की परिपाटी को क्यों भूल गया है, तेरी आत्मा की परिपाटी तो ये है कि आत्मा को परमात्मा बना ले आत्मा को महात्मा बना ले, आत्मा को पुण्यात्मा, धर्मात्मा बना ले। ये तेरी आत्मा की परपाटी है तू अपने घर की परिपाटी भूल गया वंशज की परम्परा भूल गया, अपने पूर्वजों की परम्परा भूल गया और तू मेरी परपंरा में उलझ गया। यदि मेरी परंपरा में उलझ कर रहेगा तो जीवन में कभी सुलझ न पायेगा। अनंत काल हो गया अनंत भव बीत गए, इस माटी के संभालने में, माटी का श्रृंगार करने में, माटी को सजाने में, माटी को चमकाने में, माटी को नहलाने में, माटी को खिलाने में, माटी को सिंहासन पर बिठाने में, माटी को जन्म देने में, माटी का मरण कर संस्कार करने में, तूने अनंत भव निकाल दिए। अनंत काल निकल गया कब चेतेगा, अरे अब तो चेत समय नहीं है। अन्यथा पछतायेगा। माटी कहत कुम्हार सो तू क्यों रौंधे मोय। ये माटी संदेश दे रही है तुम अहंकार में आकर के फूल करके क्या सोच रहे हो।

'गज चाढ चले हर्ष सो, सज सेना चतुरंग।
निरख-२ पग वे धरें पालत करुणा अंग।'

जो राजा महाराजा थे हाथी पर बैठकर के आते। घोड़ी, पालकी, बग्गी, रथों पर बैठकर आते थे जब जीवन से साक्षात्कार हुआ, माटी की कहानी समझ में आई तो वे यथाजात दिगम्बर मुनि बन गए और माटी से नाता तोड़ करके चेतना से जुड़ गए। अब वे चल रहे हैं, जो

पहले सीना तान करके चलते थे वे अब निरख-निरख कर चल रहे हैं। एक-एक कदम ऐसे रख करके चल रहे हैं फूँक-फूँक करके, 'पालत करुणा अंग' धीरे-धीरे जीव रक्षा करते हुए चलते हैं।

''जवानी और बुढ़ापा भी क्या तेवर बदलते हैं,
पहले हिल-हिल के चलते थे अब चलने में हिलते हैं।''

जवानी में व्यक्ति शान से चलता था हिल-हिल के ऐसा चलता है मस्त चाल में हाथी जैसा और बुढ़ापा आया तो फिर उसके हाथ वैसे ही काँपते हैं हिलता हैं, वह पैर कहीं रखता है पर कहीं और पड़ता है।

सबसे बड़ा अंधकार अहंकार

व्यक्ति जब जवानी के जोश में होता है तो बुढ़ापे का होश नहीं होता। जिसके पास जवानी का जोश है उसके पास बुढ़ापे का होश नहीं। जिसके पास जवानी का जोश और बुढ़ापे का होश है, उसके पास वास्तव में सुख का कोष है। उसके पास संतोष है और जिसके पास वह नहीं है उसके पास तो केवल रोष है, आक्रोश है। तो महानुभाव, जवानी सदा नहीं रहती है, जवानी में जवानी की कीमत है, जवानी में जवानी का आदर है, जवानी में जवानी का सम्मान है, जवानी जोश से युक्त होती है। किन्तु जो जवानी यदि होश से रहित है तो पतन का कारण बन जाती है। जवानी के जोश में यदि होश आ जाये तो वास्तव में जवानी संतोष का कारण है। महानुभाव, माटी कहती है तू क्या चल रहा है, हाथी पर बैठ करके। मगध सम्राट, महाराज बिम्बसार राजा श्रेणिक हाथी पर बैठ कर के जा रहे थे महावीर स्वामी के समवशरण में। हाथी के पैर के नीचे मेंढ़क मर गया, उन्हें ज्ञात ही नहीं है क्या हो गया। जब व्यक्ति चढ़कर के जाता है सवारी पर तो नीचे कहाँ देख पाता है। नीचे तो वह देखता है जो नंगे पैर हो, कहीं पैर में काँटा न लग जाए, कंकड़ न चुभ जाएँ, काँच

न लग जाए वह नीचे देख के चल सकता है, जीव रक्षा कर सकता है। जो पैरों में खडाऊँ भी पहन ले उसकी दृष्टि नीचे नहीं जाती उसके पैर में कौन काँटा लग रहा है? जो नंगे पैर विहार करने वाला है वो नीचे देखकर चल सकता है जो नंगे पैर विहार नहीं कर सकता, उसके अंदर में करुणा नहीं आ सकती। क्योंकि उसे तो अपने ऊपर दया करुणा है अच्छे मजबूत जूते पहन लिए। जूते के नीचे कोई भी आये कोई भी मरे उससे क्या होता है।

तो महानुभाव ! यहाँ पर 'माटी कहत कुमार सो'। व्यक्ति जब अहंकार में आ जाता है। तब व्यक्ति न तो अपने स्वरूप को जान पाता है न पर के स्वरूप को जान पाता है। अहंकार में आया हुआ व्यक्ति कर्त्तव्य से च्युत है। अहंकार में आया हुआ व्यक्ति अंधकार में भटक रहा है। क्योंकि अहंकार ही सबसे बड़ा अधंकार है। अहंकार से बढ़कर के जीवन में कोई और अंधकार नहीं हो सकता। बाहर के अंधकार में भटका हुआ व्यक्ति कभी भी मंजिल को प्राप्त नहीं कर सकता और अहंकार ऐसा पहाड़ है जिससे यदि नीचे गिरता है तो गिरकर चकनाचूर हो जाता है। अन्य कहीं समतल भूमि पर गिर जाये तो थोड़ी चोट आए किंतु अहंकार का पहाड़ तो बहुत ऊँचा है उस पर जब चढ़ जाता है बहुत ऊँचा चढ़ जाता है और इतने ऊँचे से गिरता है तो गिरकर चकनाचूर हो जाता है। इसलिए जीवन में उस अहंकार से बचना है। जो अहंकार तुम्हारे स्वभाव को नष्ट करने वाला है, जो अहंकार मानव की मानवता को नष्ट करने वाला है, धर्मात्मा के धर्म को नष्ट करने वाला है, नीति न्याय का सदा लोप करने वाला है, ऐसे अहंकार से बचना चाहिए।

जितना झुकोगे उतना उठोगे

'माटी कहत कुम्हार सो' तू क्या रौंदे मोय। यह माटी संदेश दे रही है केवल कुम्हार के लिए नहीं, जो अपने जीवन का सुधार करना

चाहता है उन सभी के लिए। जो अपने जीवन की सम्भाल करना ही नहीं चाहता उनके लिए क्या उपदेश, कुछ भी नहीं। उपदेश तो धर्मात्मा के लिए है। धर्म स्नेही, धर्मानुरागी भव्य बन्धु, ये शब्द क्यों कहे जाते हैं क्योंकि ये शब्द भव्य के लिए हैं अभव्य के लिए नहीं। क्योंकि यह उपदेश सज्जन के लिए है दुर्जन के लिए नहीं। उपदेश भले आदमी के लिए है बुरे आदमी के लिए नहीं। बुरा आदमी तो उपदेश देने वाले को भी कष्ट देता है। भला आदमी कष्ट सहन करके उपदेश सुनने जाता है। इसलिए उपदेश सुनने का पात्र भला आदमी हो सकता है बुरा आदमी नहीं। विनम्र ही हो सकता है, अहंकारी नहीं। गुणों का कोष बहकर के यदि आता है तो विनम्रता के पास आता है। जहाँ पर अहंकार है घमण्ड है, मान है वहाँ पर गुण ठहरते नहीं। जैसे कि बरसात आने पर बारिश सब जगह समान होती है, किंतु मंदिर के शिखर पर पानी की बूंद दिखाई नहीं देती। सूखे फूल पर पानी की बूंद दिखाई नहीं देती, पहाड़ की चोटी से पानी नीचे आ जाता है अन्तर्मुहूर्त में पानी सूख जाता है। किंतु वही पानी वहाँ आ जाता है जहाँ पर नम्रता है, जहाँ पर लोच है, जहाँ पर झुकाव है, जितना गहरा झुकाव जितनी नम्रता, जितनी लघुता उतना ज्यादा जल वहाँ पर आ जाता है।

गड्ढे में थोड़ा पानी, बड़े गड्ढे में और ज्यादा पानी, और बड़े गड्डे में और ज्यादा पानी, तालाब में और ज्यादा पानी, झील में और पानी और फिर नदी में बहुत सारा पानी आ जाता है और सागर में देखो तो और ज्यादा पानी क्योंकि वह बहुत गहरा है, वह लघु बन गया है, लघु से भी लघु बन गया है बहुत नीचे पहुँच गया लोग कहते हैं अब जमीन पर झुक गए अब कहाँ झुकें। सागर कहता है मेरी तरह से जमीन के नीचे घुस जा तो बहुत सारे गुण तेरे पास आ जायेंगे। और तू पहाड़ के जैसे उठ जायेगा झुक नहीं पायेगा तो जीवन में कभी उठ

नहीं पायेगा। जब समुद्र झुक गया है तो उसका पानी उठ जाता है ऊपर। जो झुकता है वही उठता है, जो झुकना नहीं जानता वह जीवन में उठ नहीं सकता और फिर वही पानी सबकी प्यास बुझाने के लिए, सबके संताप को दूर करने के लिए, ताप को दूर करने के लिए, और शुष्क प्रकृति को हरियाली देने के लिए खुशहाली देने के लिए, ऋद्धि, वृद्धि, समृद्धि देने के लिए बादल बन करुणा दृष्टि से बरस जाते हैं। तो पुन: जिनको जितना ग्रहण करना होता है ग्रहण कर लिया अनावश्यक है तो पुन: वह पहुँच गया सागर में। जो अनावश्यक चीज है वो सागर के पास पहुँच गई। अनावश्यक जल भी यदि गड्ढे में रहेगा तो वह उफनता रहेगा यदि नदी में रहेगा वह बाढ़ का रूप लेगी वह संहारक बन जायेगी तो अनावश्यक सागर में पहुँच गया। ऐसे ही जब व्यक्ति विनम्र होता है तो उसके पास गुण सिमट करके आ जाते हैं जब व्यक्ति उद्दण्ड होता है तो दण्ड का अधिकारी होता है। उद्दण्ड के लिए दण्ड चाहिए और विनम्र के लिए गुणों का कोष चाहिए। जो विनम्र है, विनयशील है वि-कहिए तो विशेष, नय कहिए तो ले जाने वाला। जो विशेषताओं की ओर ले जाने वाली होती है वह विनय कहलाती है। शील माने स्वभाव जो विनयशील है वह ऐसे विशेष स्वभाव की ओर आत्मा को ले जाती है जिससे आत्मा संसार के बंधनों से मुक्त हो जाए। जिससे आत्मा दु:खों से मुक्त हो जाए। महानुभाव ! अहंकार बहुत खतरनाक है। अहंकार से बढ़कर के कोई दूसरा अनर्थकारी पदार्थ संसार में हो नहीं सकता।

नाज करता है सूरज, आकाश में चढ़ते हुए।
शाम को देखा उसी को, सिर झुका ढलते हुए॥

संसार में कोई कितना बड़ा भी हो जाए किंतु एक दिन तो उसे सिर झुकाकर चलना ही पड़ता है। आज सिर झुका के चलोगे तो कभी गिरोगे नहीं। जो सिर उठा के चलता है वह ठोकर खाकर गिरता ही गिरता है।

''आज सोए पड़े है कब्र में पैर फैलाकर वो
कल जिनका सेहरा था जमीन से आसमां तक।''

महानुभाव ! जिस व्यक्ति की कल जयकार हो रही थी गूंज हो रही थी वह व्यक्ति दूसरे दिन मृत्यु को प्राप्त करके, यदि राज्य अवस्था का बुद्धि पूर्वक त्याग नहीं करता है, तो ''राजेश्वरी सो नरकेश्वरी'' नरक की यात्रा करने को उसको तैयार होना पड़ता है। जो बुद्धिपूर्वक राज्य का त्याग करके, उत्तराधिकारी को भार सौंप करके सन्यास को स्वीकार करके आत्मा के कल्याण के लिए आगे बढ़ जाता है तो जो तपेश्वरी सो सिद्धेश्वरी वह मोक्ष को प्राप्त करने का अधिकारी हो जाता है। महानुभाव, ये माटी कह रही है रे मानव तू मान। यदि माटी का कहना तूने मान लिया तो तू ऐसे स्थान पर पहुँच जायेगा जहाँ जीवन भर अनन्त काल तक तू टिका रहेगा। यदि माटी का कहना नहीं मानेगा तो अनन्त काल तक मिटता ही रहेगा। माटी की संगति पा करके तू मिटा ही मिटा है। अब इस माटी की संगति को छोड़कर के अपने आत्मा की संगति में पहुँच। परमात्मा की संगति में पहुँच। इस माटी को ज्यादा स्थान न दे माटी तो माटी है। ये माटी तुझे माटी में मिलाती रहेगी, ऊपर पहुँचाने में समर्थ नहीं है, जब तक तुम आत्मा से साक्षात्कार न करो।

महानुभाव ! व्यक्ति जब ठोकर खाता है, जब उसके पैर में बिवाई फटती है, जब उसके पैर में कोई घाव होता है पैर में छाले पड़ रहे हों तो एक-एक पैर को संभाल-संभाल कर रखता है। जब व्यक्ति किसी ऊँचे वाहन पर बैठ कर जा रहा हो तो नीचे छोटे वाले व्यक्तियों को देख नहीं पाता। झोपड़ी में रहने वाला व्यक्ति सबको देख लेता है किंतु ऊँचे महलों में रहने वाला व्यक्ति छोटों को कहाँ देख पाता है उसकी दृष्टि आकाश के तारों पर होती है जमीन की ओर नहीं होती। व्यक्ति जब वायुयान से चलता है तो ऊपर की ओर देखने का

प्रयास करता है। नीचे वाले व्यक्ति उसे तुच्छ दिखाई देते हैं। वह भूल जाता है कि नीचे वाले व्यक्ति भी मेरे जैसे हैं। वह ऊँचा पहुँच गया तो ऐसा लगता है नीचे वाले व्यक्ति बहुत छोटे हैं कीड़े मकौड़े जैसे दिखाई देते हैं। यदि आपने हवाई जहाज से यात्रा की हो तो यात्रा करते समय नगर के नगर ऐसे लगते हैं कि घरोंदे से बने हों। या बड़े-बड़े नगर बड़ी-बड़ी बिल्डिंग ऐसे लगते हैं कि कोई चींटी या मकौड़ों का बालु पत्थरों का ढेर लगा हो। ये नहीं लगता कि बहुत बड़े नगर होंगे। बड़ी-बड़ी ऊँची पहाड़ियाँ भी ऐसी लगती हैं जैसे कोई छोटे-छोटे मिट्टी के ढेर लगा दिए हों। ऊँचा पहुँच कर के व्यक्ति को ऐसा लगता है किंतु जो व्यक्ति यथार्थता के धरातल पर रहता है उसे ज्ञान होता है कि नीचे वाला इंसान और मैं दोनों बराबर हैं। दोनों में अंतर नहीं है।

क्षमता का मूल्यांकन

नीचे वाला व्यक्ति आकाश में ऊपर जा रहे जहाज को देख जानता है इस जहाज से सैकड़ों आदमी बैठे हैं। छोटा सा लग रहा है फिर भी नीचे वाला व्यक्ति कह रहा है ये डिबिया जैसा नहीं है माचिस की डिब्बी जैसा हो ऐसा नहीं ये जहाज बहुत बड़ा है बहुत व्यक्ति बैठे हैं। ऊपर वाला भूल जाता है नीचे वाला कभी ऊपर वाले को भूलता नहीं। चाहे सेवक कैसा भी हो वह स्वामी को कभी भूलता नहीं। भूल होती है तो प्राय: करके बड़े से होती है। संसार में जितनी भी भूलें हुईं जब-जब छोटे से भूलें होती हैं तो बड़े सुधारने का प्रयास करते हैं और छोटे सुधर भी जाते हैं। किंतु जब बड़ा व्यक्ति भूल करता है तो सुधारने के चांस लगभग खत्म हो चुके होते हैं क्योंकि बड़ा कहता है मैं तो बड़ा बन गया अब तो भूल का मेरे पास कोई प्रश्न ही नहीं है। मेरे से भूल कभी हो ही नहीं सकती भूल, और मेरे से ऐसा तो कभी हो ही नहीं सकता।

तो महानुभाव ! ये व्यक्ति का अहंकार है। उस अहंकार को तोड़ने के लिए माटी कुम्हार से कहती है। देख ध्यान रखना सौ चोट सुनार की एक चोट लुहार की। तू मुझे बार-बार रौंदता है पैरो से, अगर मैं एक बार तुझ पर हावी हो गई तो तू अनंत काल तक निगोद में पड़ा रहेगा, सड़ जाएगा। यदि मैं तेरे ऊपर हावी हो गई तो ध्यान रखना तू अपना कल्याण भी न कर पायेगा। मिट्टी में मिल गया पृथ्वी कायिक जीव बन गया, जल कायिक जीव बन गया, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पति कायिक जीव बन गया तो अपनी आत्मा का कल्याण भी न कर पायेगा। इसलिए अभी तेरे अंदर कल्याण करने की क्षमता योग्यता है, तू मनु की संतान तू मनुज है अपना कल्याण कर ले। अभी भी सोच ले, चेत जा, जाग्रत हो जा अन्यथा मैं तुझे मिट्टी में मिलाऊँ, इससे पहले अपनी मिट्टी को पहचान ले। मैं तुझे मिट्टी में मिलाऊँ जब तक अपनी मिट्टी का सही सदुपयोग कर ले।

''उठ जाग मुसाफिर भोर भई''

जैसे तू कुम्भकार होकर के इस मिट्टी को तोड़कर के बारीक करके और पानी में फुला करके फिर उसको रौंद-रौंद करके इसको सानता है फिर आकार देता है। जब तक मिट्टी की क्षमता प्रकट नहीं होती है तब तक वह कुम्भकार मिट्टी को रौंदता रहता है। जब तक मिट्टी में बनने की क्षमता है तब तक कुम्भकार मिट्टी का पात्र बना लेता है ऐसे ही तेरी आत्मा में जब तक क्षमता है, और क्षमता क्या? जब तक तू मनुष्य है, तब तक तू अपना हित अपना कल्याण कर सकता है। यदि मनुष्य का शरीर छूट गया तो क्या करेगा यदि पशु बन जायेगा तो पराधीन हो जायेगा, मूक हो जायेगा कुछ नहीं कर पायेगा। यदि कीड़ा मकौड़ा बन गया तो क्या कर पायेगा। यदि कहीं नरक में चला गया तो दु:खों को भोगना पड़ेगा अपना कल्याण नहीं कर पायेगा। इसलिए मिट्टी में जब तक क्षमता है ये मिट्टी सूखी नहीं तब तक अपना कल्याण कर ले।

कुंभकार गीली मिट्टी को आकार दे देता है और मिट्टी सूख जाने पर आकार नहीं दे सकता। ऐसे ही तेरी में इस मिट्टी में श्वाँस की जब तक नमी है तब तक इस मिट्टी को कोई अच्छा आकार दे दे। इसे पुण्यात्मा, धर्मात्मा, महात्मा, परमात्मा का आकार दे दे। अगर श्वाँस की नमीं चली गई तो मिट्टी पत्थर जैसी कठोर हो जाएगी फिर इसको कोई आकार नहीं दिया जा सकेगा। महानुभाव, ये संसार का नियम है कि जो ऊपर चढ़ता है वह गिरता है। जो ऊपर चढ़ता है यदि बिना आधार के चढ़ता है तो गिरता है। अपने पैरों की शक्ति को देखकर जो चलता है उसके गिरने के चांस कम होते हैं। जो दूसरे को देखकर चलता है, अपनी क्षमता शक्ति को नहीं पहचानता, वह ठोकर खाकर जरूर गिरता है। कौआ यदि हंस के साथ होंड़ करे, अपनी शक्ति को भूल जाए तो निःसंदेह उसे मृत्यु तुल्य दुख और पीड़ा को प्राप्त करना पड़ेगा।

कवि ने लिखा :-

कौआ माता ज्वार को मारत फिरे विहंग।
हंसन से सरवर करि उड़न कहत है संग॥
उड़न कहत है संग एक दिन नदी बीच आयो।
पानी की पड़ी न थाह बीच में ही बहरायो॥
कह गिरधर कविराय, बड़न के बड़े पखऊआ।
दो पंजन के बीच पार पे डारो कौआ॥

वह कौआ हंस के साथ यदि प्रतिस्पर्धा करता है तो हंस तो बड़े पंख वाला फर से उड़ जाता है पहुँच जाता है ठिकाने पर किंतु कागा वह ज्वार की नदी में ज्वार बाजरा खा कर के मदोन्मत्त हो गया मस्त हो गया, अहंकारी हो गया कहने लगा तू हंस सफेद तेरा रंग है तो क्या हो गया? मुझसे आगे दौड़कर बता। हंस ने कहा बस रहने दो, वह नहीं माना हंस उड़ा तो वह भी साथ में उड़ने लगा, हंस तो सागर से

मान सरोवर जा रहा था और उसकी उड़ान तो बहुत लम्बी उड़ान इतना बड़ा समुद्र और कौआ साथ में उड़ा, वह नीचे गिर पड़ा हंस को दया आ गई उसने पंजों से उठाकर के पंखों पर रखकरके किनारे पर पटक दिया जा मरना है तो अपनी मौत मर मेरे साथ मत मर। तो बात यह है कई बार छोटा व्यक्ति अहंकार से इतना भर जाता है वह सोचता है कि वह जब ऐसा कर रहा है तो मैं क्यों नहीं करूँ, उसने ऐसा कह दिया तो मैं क्यों नहीं कहूँ। तो व्यक्ति बुराईयों की ओर सहज से बह जाता है।

फहराना है जीवन के शिखर पर ध्वज

महानुभाव ! पानी अगर ऊपर से डालो तो नीचे की ओर ही जाता है, मनुष्य की प्रवृत्ति है वह नीचे की ओर ही आता है। बुराई जल्दी से उसके अंदर प्रवेश कर जाती है। अच्छाई को बुद्धिपूर्वक मुश्किल से ग्रहण कर पाते हैं। अच्छाई को प्राप्त करने का सौ-सौ बार प्रयास किया जाता है और बुराई को प्राप्त करने का प्रयास नहीं होता पूर्व संस्कार वशात् सहजता में ही प्राप्त हो जाती है। महानुभाव, माटी जो संदेश दे रही है, माटी का वह संदेश निःसंदेह सत्य है, स्वीकार करने के योग्य है-वह कह रही है-फूलो मत।

''फूले-फूले मत फिरो, यामें करो न भूल।
पहले तोड़े जात हैं फूले-फूले-फूल।''

ऐ मानव ज्यादा फूल मत ! ज्यादा फूल जायेगा तो फूट जायेगा। गुब्बारा ज्यादा फूल जाता है तो फूट जाता है। यदि ट्यूब में हवा ज्यादा भर जाए तो वह फट जाती है तो ज्यादा मत फूलो। फूलो उतने ही जितनी तुम्हारी क्षमता है। क्योंकि-**पहले तोड़े जात हैं, फूले-फूले-फूल** जो ज्यादा फूलते हैं वह फूल पहले तोड़े जाते हैं। इसलिए जो अति घमण्डी होते हैं वह ज्यादा परास्त होते हैं। पतन को प्राप्त होते हैं।

जो ज्यादा ऊपर चढ़ गया है और जहाँ पर बहुत चिकनाई है वहाँ पर गिरने के चांस ज्यादा होते हैं। जो नीचे सीढ़ी पर खड़ा है जहाँ चिकनाई कम है वहाँ से गिरने के चांस कम होते हैं। ऊपर चढ़ करके उतनी ज्यादा सावधानी होनी चाहिए और नम्र प्रवृत्ति होनी चाहिए। जब व्यक्ति पहाड़ पर चढ़ता है, तो पहाड़ पर चढ़ते समय वह व्यक्ति रेलिंग आदि पकड़ता है, सीढ़िया नहीं हैं तो क्या करता है वह झुककर के पकड़ता है धीरे-धीरे एक पैर को उठाता है, एक पैर को पत्थर पर रखता है। फिर धीरे-धीरे चढ़ता है। झुकता ही नहीं पूरा साष्टांग हो जाता है चढ़ने के लिए। आप तो गिरनार जी गए होंगे। चौथी टोंक की चढ़ाई पर कैसे चढ़ते हैं ? बहुत धीमे-धीमे चढ़ते हैं, जितना ऊँचा चढ़ते हैं हवा तेज से आ जाए तो ऐसा लगता है हवा के सहारे नीचे न गिर जाए।

अत: माटी कह रही है हे मानव तू जितना ऊँचा पहुँच गया है या 84 लाख योनियों में 83 लाख 99 हजार 999 योनियाँ पार करके अंतिम मानव योनि पर पहुँच गया है तब बहुत सावधानी की आवश्यकता है। व्यक्ति मंदिर में आए गिरने के चांस कम हैं, सीढ़ियाँ चढ़े गिरने के चांस थोड़े बढ़ गए और ऊपर सीढ़ियाँ चढ़े रेलिंग नहीं हो तो गिरने के चांस ज्यादा हैं और रस्सी के माध्यम से शिखर पर चढ़े तो बहुत सावधानी और शिखर के ऊपर कलशा लगा हुआ है वहाँ तक पहुँच जाए तो उसे और डर लगता है और फिर उसके हाथ में लम्बा बॉस या लम्बा पाईप हो और उसमें ध्वजा लगाकर ध्वजा फहराना तो बहुत ही खतरनाक है। कलश के ऊपर ध्वजा फहराना कोई बच्चों का खेल नहीं है। अपने जीवन के शिखर पर ध्वजा फहराना है ये जीवन एक भवन है, संयम उसका शिखर है, समाधि कलश है और बोधि को अगले भव तक लेकर जाना यह ध्वजा फहराना है तो ये कोई बच्चों का खेल थोड़े ही है। बहुत मुश्किल है

व्यक्ति जब धर्मात्मा बनता है तो बहुत विनम्र होता है। संयमी बनता है तो और विनम्र होता है तपस्वी बनता है तो नम्रता रग-रग में आ जाती है। आत्मध्यानी तत्त्वज्ञानी बन जाता है और समाधि की साधना करता है तो उसके रोम-रोम से करुणा, दया, विन्रमता, क्षमा भाव झलकने लगता है।

फूलो तो फल बनो

वह कहता है ये माटी है माटी में मिल जाएगा न तो उसे शरीर के प्रति आसक्ति है न संसार के प्रति आसक्ति रहती है, न भोगों के प्रति आसक्ति रहती है बस एक ही ख्याल रहता है परमात्मा का। हे प्रभु ! परमात्मा, मैं अपनी आत्मा को परमात्मा के साँचे में कैसे ढालूँ। बहुत सावधान रहता है, जो मनुष्य योनि को प्राप्त नहीं कर पाए वह पशु पक्षी इतना अहंकार नहीं करते जितना अहंकर यह मनु की संतान कहलाने वाला मनुष्य करता है। तो महानुभाव, क्या कहा फूले-फूले मत रहो, यामें करो न भूल, पहले तोड़े जात हैं, फूले-फूले फूल व्यक्ति सावधान रहे। जो ज्यादा अहंकारी है वही नीचे गिरता है।

''माली आवत देख कर कलियाँ करें पुकार,
फूले-फूले चुन लिए काल हमारी बार।''

अब कली कह रही है जो आज फूल गए तो आज ही पकड़े गए तोड़े गए, जब हम कली थीं इसलिए हम बच गए। यदि कल हम भी अहंकार में आकर फूल जाएंगें तो कल हमें भी तोड़ दिया जायेगा। यदि हम कली की तरह से विनम्र रहेंगे, नम्र रहेंगे, संस्कारों से युक्त, करुणा, दया से युक्त रहेंगे, धर्म से युक्त रहेंगे तब हम जीवित रह पायेंगे।

जब तक कली बन करके रहता है तब तक उसको तोड़ा नहीं जाता। कली मतलब लघु, विनम्र, करुणाशील, रहमदिल, दयाशील,

परोपकारी, सेवाभावी, वात्सल्य भावना से युक्त होता है तब तक उसकी रक्षा होती रहती है। कलियों की रक्षा की जाती है। कलियों को कोई तोड़े तो माली डाँटता है कि नहीं कली को तोड़ना पाप होता है। वह फूल को तोड़ देता है क्योंकि फूल पूरा फूल गया। अब इसके आगे उसका कोई विकास नहीं है, अब तो अंतिम दशा पतन है। एक दिन फूल टूट जाएगा और जमीन पर गिर जाएगा। ये फूल फूला है यदि ये फूल फलता रह जाता इसके पीछे फल आ जाता तो फूल सिकुड़ करके क्षुद्र रह जाता। फूल कोई फल नहीं है। फूलना फलित होना नहीं है। फूलना तो पतन के लिए है। जो पतन के रास्ते पर चलकर भी पतित न हो पाए जो भयानक रास्तों पर भी भयभीत न हो पाये, जो संदेह व भय के पार हो जाता है वो संकट को भी जीत लेता है संकट उसके चरणों में झुक जाता है। महानुभाव, या तो जीवन भर कली बन करके रहो यानि लघु बन करके रहो और यदि फूलना ही है तो साथ में फल लेकर के चलो। फिर फल बन जाओ क्योंकि फल जब बढ़ता जाता है, तो फूल सिकुड़ता जाता है सूखता जाता है उसमें विनम्रता आती जाती है। वह फल सुस्वादु सबके कार्य में आता है।

महानुभाव ! कहने का अभिप्राय यह है कि आप सभी लोग इस माटी के उपदेश को समझें सुनें। माटी कह रही है कि मुझे पददलित न बनाओ। किंतु तू मुझसे पहले अपनी नियती अच्छी बना ले यही बुद्धिमानी की बात है, यही समझदारी है।

Personality Development

प्रत्येक प्राणी कुछ करने की चाह में आगे बढ़ रहा है। संसार में ऐसा कोई भी प्राणी खोजना असम्भव है जो कुछ करना नहीं चाहता। और वह कुछ ऐसा करके दिखाना चाहता है जो अभी तक किसी ने नहीं किया। उसके अंदर ऐसी भावना प्रकट रहती है कि कुछ ऐसा करके दिखाना है जिससे सामने वाला भी मेरा लोहा मान जाए। कुछ ऐसा करके दिखाना है जो और कोई सामान्य व्यक्ति कर न सके। महानुभाव, निर्माण का कार्य बड़े जोर-शोर से चल रहा है। कोई अपने मकान का निर्माण करता है तो कोई अपनी फैक्ट्री को बना रहा है तो कोई अपने गोदाम को, कोई अपना व्यवहार बना रहा है कोई अपना सम्बन्ध बना रहा है। सब बनाने ही बनाने में लगे हैं। किंतु बनावट का जीवन ज्यादा चलता नहीं है। ये सजावट का, दिखावट का जीवन ज्यादा चलता नहीं है। ये मिलावट का, गिरावट का, कड़वाहट का जीवन ज्यादा चलता नहीं है। सहजता का जीवन, सरलता का जीवन, समता का जीवन, सद्भावना का जीवन, सदाचार का जीवन, शिष्टाचार का जीवन, शाकाहार का जीवन ही शाश्वत जीवन होता है। जिस व्यक्ति ने सरलता, सहजता, समरसता, साहस के साथ शांति के सुखमय सूत्रों को अपने जीवन में जीवंत स्थान दिया है, ऐसा व्यक्ति इस दुनिया में अजर अमर हो गया क्योंकि उसने सबसे पहले अपनी आत्मा को अजर अमर करने का प्रयास किया है।

व्यक्ति व व्यक्तित्व

यदि आपने अपने जीवन में एक नहीं दस मकान भी बना लिए तो क्या फर्क पड़ता है। यदि आपने अपने जीवन में एक नहीं दस दुकान भी बना लीं तो क्या फर्क पड़ता है। यदि आपने अपने जीवन में एक नहीं 10-20 फैक्ट्री भी बना लीं तो क्या फर्क पड़ता है। पुद्गल को जोड़ने से कभी भी व्यक्तित्व का निर्माण नहीं हो सकता।

व्यक्तित्व का निर्माण तब होता है जब व्यक्ति का अन्तरंग का तत्व सामने दिखाई देने लगे। व्यक्ति जिसके बिना जीवंत न रह पाये तत्त्व का आशय होता है उसका सार। जैसे तत्त्व का आशय होता है वह पना जैसे अपनत्व का आशय होता है अपनापन। ममत्व का आशय होता है ममत्व भाव। समत्व का आशय होता है समतापन। ऐसे ही व्यक्तित्व-व्यक्ति में त्व प्रत्यय लगाकर के व्यक्ति में जो व्यक्ति की गुणवत्ता है व्यक्ति की सरलता, सहजता कुछ भी हो सकती है, उसके बिना व्यक्ति का व्यक्तित्व कायम नहीं रहता। जैसे मानवता के बिना कोई मानव नहीं होता, ऐसे ही व्यक्तित्व वह चीज है जिसके बिना व्यक्ति, व्यक्ति कहलाने के लायक नहीं है।

महानुभाव ! व्यक्ति चाहता तो है मेरा व्यक्तित्व, मेरी पर्सनैलिटी बड़ी स्मार्ट रहे वह चाहता है मैं सबकी आँखों का नूर बन करके रहूँ। व्यक्ति चाहता है कि मेरा निवास महलों में हो केवल रत्नों के महलों में निवास करना उतना सौभाग्यशाली नहीं होता है व्यक्ति के लिए, जितना किसी के हृदय में वास करना। क्योंकि संसार में हृदय से पवित्र चीज और कुछ है ही नहीं। जब तक हृदय में वास नहीं तब तक मंदिर में वास करना भी नि:संदेह विश्वास का कारण नहीं हो सकता। हो सकता है किसी की मूर्ति मंदिर में स्थापित की जा सकती है किंतु केवल मंदिर में स्थापना करने से ऐसा नहीं है वो विश्वास के काबिल हो जाए। जो विश्वास के योग्य हो गया उसकी मूर्ति मंदिर में विराजमान हो या न हो किंतु हृदय के मंदिर में तो अवश्य विराजमान रहेगी ही रहेगी।

जीवन का वृक्ष हो हरा-भरा

महानुभाव ! सबसे बड़ी खुशी की बात तो यह है कि आज भी हम इस पंचम काल में अपने व्यक्तित्व का निर्माण करने के लिए स्वतन्त्र हैं। सबसे बड़ी प्रसन्नता की बात ये है चाहे भले ही हम

किसी भी मायने में परतन्त्रता को स्वीकार कर रहे हैं किंतु व्यक्तित्व निर्माण के मामले में आज भी स्वतन्त्र हैं। पहले इतने स्वतन्त्र नहीं थे। व्यक्तित्व का निर्माण हमें स्वयं करना है। मकान का निर्माण मजदूरों के माध्यम से हो सकता है। दुकान का निर्माण किसी और के माध्यम से हो सकता है। उधार पूंजी के माध्यम से सब कुछ बनाया जा सकता है, बाग बगीचे लगाए जा सकते हैं, पुष्प और फल भी वृक्षों पर आ सकते हैं किंतु जब तक तुम्हारे जीवन रूपी वृक्ष पर पुष्प और फूल नहीं लगेंगे तब तक वह वृक्ष बांझ और नपुंसक कहलाता है। यदि किसी से कह दिया जाए कि तू नपुसंक है। संतान की वृद्धि करने में, वंश की वृद्धि करने में समर्थ ही नहीं है तो नपुंसकपना कहना एक प्रकार की गाली कही जाती है। तो महानुभाव, हमें भी यह ध्यान रखना है कि हमारे जीवन रूपी वृक्ष पर कोई पुष्प खिले, हमारे जीवन रूपी वृक्ष पर कोई फल लगे। हमारा जीवन रूपी वृक्ष पत्तों से सहित हो, ठूंठ की तरह से खड़ा न हो।

हमें देखना है कि हमारे जीवन रूपी वृक्ष का आश्रय लेकर के क्या किसी का गुजारा हो रहा है। हमारे जीवन रूपी वृक्ष के समीप आकर के क्या किसी को क्षणभर के लिए शीतल छाया मिली है। यदि ऐसा नहीं हुआ है तो समझो जीवन रूपी वृक्ष ठूंठ की तरह से है। आते-जाते व्यक्तियों को ठोकर मारता रहता है। आते-जाते व्यक्ति उससे ठोकर खा करके घायल हो जाते हैं उससे लाभ तो कुछ नहीं वह अभिशाप बना हुआ है। आज हमें इतनी चर्चा करनी है हम अपने व्यक्तित्व का निर्माण कैसे करें। अपनी पर्सनैलिटी का डिवलपमेंट कैसे करें। क्या कोई ऐसा उपाय है, क्या कोई ऐसा फार्मुला है जिसके माध्यम से डिवलपमेंट किया जा सके। इस विकास के युग में सब जगह विकास हो रहा है तो विश्वास के क्षेत्र में ह्रास क्यों? जब सब जगह ही विकास हो रहा है तो चेतना के क्षेत्र में ह्रास क्यों? जब सब

जगह ही विकास हो रहा है तो गुणों के क्षेत्र में ह्रास क्यों? आवश्यकता तो ये है कि सबसे पहले हमें अपने चेतना के क्षेत्र का विकास करना चाहिए।

जीवन विकास की शर्त: विनाश के कारणों को दूर करें

यदि कोई खेत दो-चार साल ऐसे ही पड़ा रहे उसमें बीज नहीं बोया जाए तो वह खेत बंजर जैसा हो जाता है। बाद में फसल देने में असमर्थ हो जाता है। पुन: अन्य प्रकार की खाद डाली जाती है तब उसमें उपजाऊ शक्ति पैदा होती है। तब वह फसल आदि देने में समर्थ हो पाता है। हमारी चेतना की भूमि कितने काल से बंजर पड़ी हुई है क्या चेतना की भूमि पर आज तक हमने विचार किया है? गुणों के वृक्ष भी यहाँ पर उत्पन्न हों क्या हमने कभी सोचा है हमारे गुणों के माध्यम से जो पुष्प खिले हैं उसकी सुगंधि से पूरा वातावरण महक जाए ऐसा तो कभी किया ही नहीं। वह तो स्वयं ही हमारी चेतना की भूमि पर जो झाड़ झंकर खड़े हो गए हैं-क्रोध के, मान के, माया के, लोभ के, अनीति के, अत्याचारी के, बेईमानी के इस प्रकार के झाड़ झंकर खड़े होते जा रहे हैं। सप्त व्यसनों के झाड़ खड़े होते चले जा रहे हैं और हम सोचते हैं हमारे व्यक्तित्व का विकास हो जाए।

विकास की पहली शर्त है जिसके माध्यम से तुम्हारे जीवन का विनाश हुआ है उस विनाश के कारणों को दूर करना और उसकी भी पहली शर्त यह है कि तुम्हें इस बात पर विश्वास होना चाहिए कि विनाश के कारणों को दूर किए बिना जीवन का विकास नहीं हो सकता है। विश्वास विकास का बीज है। विश्वास विनाश को रोकने वाला है जब-जब हमारी चेतना में विश्वास नहीं होगा तब-तब हम कोल्हू के बैल की तरह करेंगे तो बहुत कुछ किंतु पायेंगे कुछ नहीं। जब-जब विश्वास नहीं होगा तब-तब सोते हुए व्यक्ति की तरह से सपने तो बहुत देख लेंगे किंतु अर्जन कुछ भी न हो पायेगा। इसलिए

सबसे पहली चीज तो ये है कि जीवन में एक-एक आत्मा के प्रदेश में ये विश्वास होना चाहिए कि मैं अपने व्यक्तित्व का निर्माण कर सकता हूँ। ये विश्वास होना चाहिए कि मैं बुराईयों से अपनी आत्मा को बचा सकता हूँ। ये विश्वास होना चाहिए कि मैं जो चाहूँ कर सकता हूँ। मेरी आत्मा में परमात्मा बनने की शक्ति है। ये बात जब तक आपकी आत्मा के प्रदेशों से निष्पन्न नहीं होगी तब तक हजारों वक्ता तुम्हें सुना-सुना कर थक जाएँ। चाहे हजारों शास्त्रों में ये बात लिखी हो चाहे कहीं भी बड़े-बड़े अक्षरों में ये बात लिखी हो पत्थरों पर भी खुदवा दी जाए परंतु जब तक आत्मा के प्रदेशों में ये बात नहीं आयेगी तब तक शास्त्रों की बात तुम्हारा कल्याण नहीं कर पायेगी।

दृष्टि की निर्मलता (Perception)

व्यक्तित्व के विकास के लिए सबसे पहली शर्त है आपकी दृष्टि निर्मल हो। इसे राईट फेद कहें, श्रद्धा कहें, आस्था कहें, निष्ठा कहें या दृष्टि की निर्मलता कहें। जब तक वह दृष्टि निर्मल नहीं होती तब तक बाहर के सभी दृश्य बदसूरत दिखाई देते हैं। माँ को अपना लाड़ला बेटा चाहे वह कैसा भी है श्याम वर्णी है या नील वर्णी, गौर वर्णी है या स्वर्ण वर्णी कोई भी वर्ण वाला हो उस माँ से पूछो उसे अपना बेटा प्राणों से ज्यादा प्यारा होता है। उसकी दृष्टि में निर्मलता है। उसकी दृष्टि में बेटे के प्रति अपनत्व का भाव है। उसकी दृष्टि में ये लग रहा है कि ये बेटा मेरे प्राणों का भी प्राण है इसलिए उसे अपने प्राणों से ज्यादा बेटा दिखाई देता है। जब तक ये दृष्टि में नहीं आये तब तक किसी दूसरे का बेटा कितना भी सुन्दर हो माँ का वात्सल्य उसके प्रति नहीं उमड़ता है। अपने बेटे के प्रति चाहे विकलांग है, चाहे पंगु है, चाहे अंधा है, बहरा है, गूंगा है, लगड़ा है कैसा भी है उसे देखकर के माँ के आँचल में दूध आ जाता है किंतु किसी सुंदर बेटे को देखकर के उसके आँचल में दूध क्यों नहीं आता क्योंकि उसके

प्रति अपनत्व का भाव नहीं है, उसके प्रति उसकी दृष्टि में अपनापन नहीं है। यदि व्यक्तित्व निर्माण की चर्चा करते हैं तो सबसे पहले दृष्टि का विकास बहुत जरूरी है। दृष्टि का विकास किए बिना चेतना के किसी भी गुण का विकास नहीं किया जा सकता।

तो पहली शर्त दृष्टि की निर्मलता, दृष्टि का व्यापकपना और दृष्टि जब तक निर्मल नहीं होती स्वच्छ नहीं होती, बाह्य उपकरण उसके बाधक बन जाते हैं। जिसकी दृष्टि में ही दोष है वह व्यक्ति जिंदगी भर सृष्टि को बदलता रहे अनंत भवों तक भी सृष्टि को बदलता रहे तब भी सृष्टि को बदला नहीं जा सकता। दृष्टि को बदलते ही सृष्टि बदलती चली जाती है और दृष्टि का विकास ही सृष्टि का विकास है। जब तक दृष्टि का विकास नहीं हुआ तब तक हम अपनी सृष्टि का विकास कर ही नहीं सकते।

प्रार्थना : अंतरंग की वीणा का स्वर (Prayer)

डिवलपमेंट करने का दूसरा प्रयास। जब व्यक्ति की दृष्टि निर्मल होती है विश्वास होता है आस्था के भाव जग जाते हैं आस्था का पक्षी अपने पैर अपने पंख खोलने लगता है तो नि:संदेह उसके आत्म प्रदेशों से प्रार्थना निष्पन्न होती है। प्रार्थना वे नहीं कही जातीं कि जिनवाणी हाथ में लेकर पढ़ ली, प्रार्थना वे नहीं कही जातीं कि संगीत की ध्वनियों के साथ आप गाते रहते हैं और मस्ती में झूम जाते हैं। प्रार्थना ये नहीं कही जाती जो दूसरों से पढ़वाई जाती हैं। मेरी तरफ से पूजा कर दो जितना भी चार्ज हो दे दूँगा। प्रार्थना वे नहीं कही जाती कि दूसरों के विधान आदि करवाए जाते हैं। प्रार्थना ये नहीं कही जाती जो छपवा कर के बुलवा करके कही जाती हैं। प्रार्थना तो आत्मा का आर्तस्वर है।

प्रार्थना आत्मा के प्रदेशों से निष्पन्न हुई अंतरंग की वीणा का स्वर है। यदि अंतरंग की आत्मा की वीणा से झंकृत नहीं हुआ है तब

तक वह प्रार्थना का स्वर फूट ही नहीं सकता। प्रार्थना की कोई निश्चित परिभाषा नहीं होती है। प्रार्थना के लिए कोई निश्चित भाषा नहीं होती। ऐसा नहीं कि प्रार्थना कोई भाषा में ही गाई जाए। प्रार्थना की कोई निश्चित भाषा नहीं प्रार्थना की कोई निश्चित परिभाषा नहीं। और एक बात और याद रखना प्रार्थना में कभी कोई आशा नहीं। प्रार्थना में जब आशा होती है तब प्रार्थना-प्रार्थना नहीं व्यापार बन जाता है। प्रार्थना तो नि:स्वार्थ समर्पण है, अपने इष्ट के प्रति जिसके बिना वह जी नहीं सकता उस प्रार्थना के बहाने से याद कर रहा है। जैसे छोटा बेटा अपनी माँ को याद कर रहा है। माँ बेटे को अकेला घर में छोड़ गई, दादा के पास दादी के पास वह मायके चली गई, बेटा दिन भर माँ को अपने नेत्रों में निहार रहा है। माँ चली गई उसे भोजन अच्छा नहीं लग रहा। उसे कोई प्रिय पदार्थ अच्छे नहीं लगते उसे कोई खिलौने अच्छे नहीं लगते। उसे कोई मनोरंजन के साधन अच्छे नहीं लगते। बस अपनी माँ दिखाई दे रही है। जैसे उसे माँ दिखाई दे रही है। माँ कहाँ से दिखाई दे रही है। माँ अंतरंग से दिखाई दे रही है, आँख बंद करके भी दिखाई दे रही है, आँख खोलने पर भी दिखाई दे रही है, माँ को देखने के लिए माँ को बुलाने के लिए माँ को पुकारने के लिए कोई निश्चित भाषा का उपयोग नहीं किया जाता।

एक बछड़ा है संध्याकाल में गाय के लिए रम्हा रहा है और गाय भी रम्हाती हुई जंगल से घर की ओर आ रही है। क्या उनकी कोई निश्चित भाषा है। माँ और बेटे के वात्सल्य की कोई निश्चित भाषा नहीं है। चाहे बेटा माँ को हिंदी में पुकारे, चाहे अंग्रेजी में पुकारे या संस्कृत में पुकारे या प्राकृत भाषा में पुकारे, चाहे बुंदेली में पुकारे चाहे मराठी में पुकारे, गुजराती में पुकारे, तमिल में पुकारे, किसी भी भाषा में पुकारे किंतु उसमें भावना है तो वास्तव में सच्ची पुकार है और भावना नहीं है तो भाषा से प्रार्थनाएँ नहीं बनती। तो पर्सनैलिटी

डिवलपमेंट करने का दूसरा सूत्र है कि जीवन के अंतरंग से आत्मा के प्रदेशों से प्रार्थना के स्वर झकृंत हों। बहुत बड़ी वीणा का चित्र सामने है चित्र की बनी वीणा जैसे ध्वनि नहीं दे सकती ऐसे ही शब्दों से प्रार्थना नहीं बन सकती। अपनी चेतना को ही वीणा बनाना पड़ेगा। और जब चेतना अंदर से आर्त्तनाद करे और आर्त्तनाद खुशी में नहीं होता, जब चेतना के अंदर से आवाज निकले तब नि:संदेह जो स्मरण करती है जिसे भी पुकारती है तो परमात्मा का रूप सामने आ जाता है, प्रार्थना बन जाती है।

धर्मः आत्मा और परमात्मा के बीच की श्रेणी

एक राजा ने अपने मंत्री से कहा मुझे धर्म के बारे में कुछ बताओ। मंत्री ने कहा महाराज धर्म के बारे में बताने की आवश्यकता नहीं है। आप तो अपने आप को पहचान लो और परमात्मा के बारे में जान लो जो बीच की श्रेणी है वह धर्म कहलाता है। आत्मा से परमात्मा बनने की जो भी यात्रा है वह सब धर्म कहलाती है, साधना कहलाती है, वह सदाचार कहलाता है, शिष्टाचार कहलाता है, संयम कहलाता है। जो भी अच्छाईयाँ हैं सब उसी के अंदर हैं, आत्मा-परमात्मा के बीच में हैं उसके बाहर कुछ नहीं। राजा ने कहा मंत्री जी मैं ये बातें नहीं समझता। क्या है आत्मा, क्या परमात्मा और क्या है प्रार्थना मैं नहीं समझता। मेरी समझ में नहीं आता मैं उसे स्वीकार नहीं करता। गुस्ताखी माफ हो महाराज। समझा तो मैं दूँगा आपको। समझा दो। चल मैं लिखकर तुझे देता हूँ कि गुस्ताखी माफ है।

संध्याकाल हुआ, वह मंत्री और राजा दोनों अपने-अपने घोड़ों पर सवार हुए। जंगल की सैर करने चले गए। मंत्री ने साथ में घोड़े की पीठ पर एक मोटा रस्सा रख लिया। चले गए जंगल में सूर्य अस्त हो चुका था। जंगल में सुनसान कोई आस-पास दिखाई नहीं दे रहा था। मंत्री राजा से कहता है ''महाराज ! आप और मैं एक खेल खेलेंगे।

क्या खेल। इस रस्सी के माध्यम से आप पहले मुझे बांधो। फिर मैं खुलने का प्रयास करूँगा।'' ठीक है राजा ने मंत्री को बांध दिया। थोड़ी देर के बाद मंत्री ने कहा-महाराज अब मैं हार गया मैं खुल नहीं पा रहा। अब राजा पेड़ के साथ खड़ा हुआ राजा तो सोच रहा कि खेल-खेल रहे हैं। मंत्री ने राजा को कस करके रस्सी से बांध दिया और एक डंडा उठाकर के लाया और राजा की पिटाई करना शुरू कर दिया। जैसी बेरहमी से कोई किसी पत्थर को कूट रहा हो। राजा चिल्लाने लगा राजा कहता है तू क्या करता है मेरे प्राण लेकर ही रहेगा। हे भगवान बचाओ....मंत्री ने कहा, बस समझ में बात आ गई। आत्मा क्या है, परमात्मा क्या है, प्रार्थना क्या है इसका रहस्य समझ में आ गया या समझाऊँ। राजा ने कहा तू तो मेरे प्राण लेकर ही रहेगा। यहाँ पर काहे के लिए लाया कोई मेरे साथ नहीं है। तेरा इरादा क्या है। इरादा तो सिर्फ इतना है कि तुम्हारी समझ में बात आ जाए जो मैं कहना चाहता हूँ। मैंने जिसको पीटा था वह तो पुद्‌गल था। जो चिल्ला रहा था वह आत्मा थी और जिसको चिल्ला रहा था वह परमात्मा था। और जो चिल्लाहट की आवाज थी वह थी प्रार्थना।

महानुभाव ! जो आत्मा के प्रदेशों से निष्पन्न हुई वाणी है वही वास्तव में प्रार्थना बन पाती है। इसलिए कई बार आप कहते हैं महाराज जी हम तो भक्तामर का पाठ खूब कर रहे हैं। और आ. मानतुंग स्वामी ने पढ़ा 48 ताले टूट गए। हमसे तो ताले तो छोड़ो गेट बंद होगा तो खुलेगा ही नहीं। कागज का हो तो भी नहीं खुलेगा। कैसे टूट गए 48 ताले। क्योंकि मानतुंग स्वामी की आत्म प्रदेशों से आत्मा से प्रार्थना निकली थी। आ. सिद्धसेन दिवाकर, कुमुदचंद्राचार्य के आत्म प्रदेशों से कल्याण मंदिर स्तोत्र रूपी प्रार्थना निकली थी। आ. वादिराज स्वामी के आत्म प्रदेशों से प्रार्थना निकली थी। आ. समन्तभद्र स्वामी के आत्म प्रदेशों से वृहद् स्वयंभू स्तोत्र नामक प्रार्थना निकली

थी इसलिए वह प्रार्थना जीवंत प्रार्थना हो गई। वह जीवंत प्रार्थना ही आत्मा को परमात्मा तक पहुँचा सकती है। कोई मृत प्रार्थना परमात्मा तक नहीं पहुँचा सकती।

अभ्यास उसी का, जो बनना है (Practise with positive thinking)

जैसे कोई भी खिलाड़ी खेलने के लिए जाता है उससे पहले अभ्यास करता है। कभी भी नाटक आदि का मंचन किया जाता है उसके पहले अभ्यास होता है। हमें भी अभ्यास करना है। किसका अभ्यास करना है। जो बनना है उसी का अभ्यास करना है। अब देखो क्या बनना है। जैसे एक माता-पिता कहते हैं कि हम तो अपने बालक को डॉक्टर बनाएँगें और पुन: चाहे प्लास्टिक के ही उपकरण लाकर रख दिए। देखो ये तुम्हारी बी.पी. नापने की मशीन है, ये स्टेटस्कोप है। एक कहता है मैं अपने बेटे को व्यापारी बनाऊँगा। छोटी हथौड़ी लाकर के उसे दी। एक कहता है कि मेरा बेटा तो बाबू बनेगा उसे वैसे आईटम लाकर दे दिए। चाहे प्लास्टिक के खिलौने ही सही एक कहता है मेरा बेटा तो पायलट बनेगा उसे प्लास्टिक का हैलीकोप्टर या हवाई जहाज लाकर दे दिया। तो व्यक्ति जो बनना चाहता है उसका ही अभ्यास करता है। हमें अभ्यास उसी का करना है जो बनना है।

एक बालक बचपन से ही आँख बन्द करके पैर पर पैर रख करके हाथ पर हाथ रख करके बैठा है। उसकी आत्मा कह रही है उसे ऐसा बनना है भगवान जैसा बनना है। भगवान को देखकर के भगवान जैसा बनने का वह प्रयास कर रहा है यह उसका अभ्यास चल रहा है। अभ्यास से सफलता मिलती है। यकायक कभी भाग्य से भीख में, भेंट में, वसीयत में ऐसे ही सफलता नहीं मिलती। परमात्मा ऐसा नहीं है कि तुम्हें कहीं चलते-फिरते कहीं रास्ते में पड़ा मिल जाए। परमात्मा की दशा ऐसी नहीं है कहीं तुम झोली फैला कर माँगो और परमात्मा की दशा तुम्हें भीख में मिल जाए। परमात्मा की दशा ऐसी

नहीं है कि तुम कहीं जाओ लोग तुम्हारा टीका कर दें माथे पर तिलक लगाएँ और परमात्मा तुम्हें दे दें। परमात्मा ऐसा नहीं है कि कहीं बाहर का पुरुषार्थ करने पर बाहर की खेती करने पर तुम्हें परमात्मा प्राप्त हो जाए।

महानुभाव ! बहुत कठिन है उस प्रकार का अभ्यास करना जिस प्रकार का व्यक्ति को बनना है। जिस व्यक्ति को नरक में जाना है उसका स्वरूप इस मनुष्य अवस्था में दिखाई दे जाता है। नरक में जाकर के क्या करेगा। किस प्रकार की हिंसा करेगा। कैसे वचनों का प्रयोग करेगा। उसे उस जीवन में दिखाई दे जायेगा की व्यक्ति ये नरक में जायेगा और जिसे स्वर्ग में जाना है उसका अभ्यास अभी से दिखाई दे जाएगा कि वह व्यक्ति स्वर्ग में जा सकता है। महानुभाव, अभ्यास तो दुनिया के बहुत सारे लोग करते हैं। किंतु अभ्यास में एक चीज बहुत आवश्यक है। जिसे मैं मानता हूँ वह चीज उस अभ्यास का प्राण है। क्या चीज है। वह अभ्यास तो हो किंतु positive thinking–सकारात्मक सोच के साथ हो। अभ्यास तो व्यक्ति करता जा रहा है कह नहीं सकते मैं सफल हो पाऊँगा या नहीं हो पाऊँगा। कह नहीं सकते कि मैं वहाँ पहुँच पाऊँगा या नहीं पहुँच पाऊँगा। कई बार ऐसा होता है कि किसी ने पूछा भैया ! कहाँ जा रहे हैं वह कहता है देख रहा हूँ मैं सोच रहा हूँ शिखरजी जाने का है। पहुँचता हूँ या नहीं पहुँचता हूँ। अब देख सोच क्या रहे हो। ये कहो न मेरा शिखर जी जाने का संकल्प है। चाहे कुछ भी हो जाए मैं शिखर जी जाकर के ही रहूँगा। तो संकल्प के साथ व्यक्ति आगे बढ़ता है तब निःसंदेह सफलता उसके पास स्वयं चलकर के आ जाती है। जब तक व्यक्ति पॉजिटिव थिंकिंग न लेकर के नगेटिव थिंकिंग लेकर के चलता है। तब आयी सफलता भी उसके हाथ से निकल जाती है।

प्रेक्टिस और प्रेक्टीकल दोनों में थोड़ा सा अंतर है। देखो अभ्यास बाहर से हो सकता है लेकिन प्रेक्टीकल दशा अंतरंग से होती है।

पॉजिटिव थिंकिंग नहीं होगी तो अंदर से अभ्यास नहीं हो सकता। व्यक्ति सोच लेगा कि मैं क्षमा भाव रखूँगा क्रोध नहीं करूँगा और जैसे ही क्रोध का निमित्त बना अपने आप को रोक नहीं पायेगा। इस प्रकार के भाव उसके हो जायेंगे।

महानुभाव ! क्रोध नहीं करना चाहिए, अहंकार नहीं करना चाहिए, मायाचारी नहीं करना चाहिए, लोभ नहीं करना चाहिए, पाप नहीं करना चाहिए ऐसे कहना बहुत सरल है किंतु वास्तव में प्रेक्टीकल जीवन में उतारना उसे बहुत कठिन है। कौन नहीं जानता कि पाप करके दु:ख होता है। कौन नहीं जानता पुण्य करना अच्छी बात है? कौन नहीं जानता धर्म के माध्यम से शांति मिलती है? व्यक्ति दूसरों को सुना सकता है किंतु प्रेक्टिकल अपने जीवन में करना बहुत कठिन है। अरे कोई बात नहीं जब क्रोध आये तब तुम मौन ले लो। दूसरों से कहना बड़ा सरल है। खुद मौन लेकर बताओ। जब क्रोध आये तो आँख बंद कर के चुपचाप वहाँ लेट जाओ सुनो ही मत वहाँ से अलग हो जाओ ऐसा हो सकता है क्या। व्यक्ति आँख बंद करके सो रहा है तो बैठ जायेगा। और बैठा होगा तो खड़ा हो जायेगा और हाथ बांध कर के बैठा है तो हाथ खुल जायेंगे कोई शस्त्र सामने होगा तो उठा लेगा, मुँह खुल जायेगा आँखें खुल जायेंगी सब खुलते चले जायेंगे बंद तो कुछ होना ही नहीं है। प्रेक्टीकल बात तो यह है जब भी क्रोध आता है वहाँ से हट जाना तो दूर, दूसरे व्यक्ति पकड़ कर ले भी जा रहे हैं तब भी मुड़-मुड़ कर देख रहा है तब भी गाली दे रहा है अरे छोड़ो मैं छोडूँगा नहीं तुझे।

अंदर से बदले बिना, बाह्य व्यक्तित्व निर्माण असंभवः

महानुभाव ! वास्तव में अपने व्यक्तित्व का विकास करना है तो ये बात अवश्य है कि अभ्यास करना है और पॉजिटिव थिंकिंग के साथ करना है। अभ्यास केवल दिखावटी नहीं करना है। एक नाटक

करने वाला व्यक्ति मंचन कर रहा है, प्रैक्टिस कर रहा है। एक व्यक्ति को स्पीच देनी है अपने कमरे में बैठकर स्पीच दे रहा है। मैं ऐसे बोलूँगा-ऐसा करूँगा तो ये अलग चीज है। ये शरीर की क्रियायें अलग प्रेक्टिस हो गई और अंतरंग से चेतना के परिणामों का उसमय हो जाना वो अलग चीज है। जब तक बदलाव अंदर से नहीं आता है तब तक व्यक्ति के बाह्य व्यक्तित्व का निर्माण नहीं हो सकता। बाह्य तो केवल नाटक किए जाते हैं, ढोंग रचा जाता है पर व्यक्त्वि का निर्माण तो अंदर से होता है।

महानुभाव ! प्रार्थना अंतरंग आत्मा की उपज है उसके लिए कभी आप ये नहीं सोचना की मैं भगवान पार्श्वनाथ की पूजा यदि जिनवाणी में से ही पढ़ूँगा तब पूजा होगी। अंदर से जो भी शब्द निकल रहे हैं वही प्रार्थना है। आप भले ही गाकर के पूजा न करो। आपके अन्दर से क्या शब्द निकलता है। ऐसा जरूरी नहीं है कि जो कवियों ने पूजा लिखी है उसे गाकर ही पूजा होगी। ऐसा जरूरी नहीं है जो आचार्यों ने पूजा लिखी उसे पढ़ोगे तभी पूजा होगी। उनकी आत्मा के प्रदेशों से वह निकली थी। तुम्हारी आत्मा के प्रदेशों से जो निकले वह तुम्हारी पूजा है। गौतम गणधर ने जो स्तुति लिखी है हो सकता है उसमें तुम्हारा मन लगे न लगे किंतु तुम्हारी आत्मा से निकले जो शब्द हैं वो तुम्हारी नियम से विशुद्धि बढ़ाने वाले होंगे। तुम्हारी पाप कर्म की निर्जरा नियम से करेंगे।

एक नदी किनारे छोटा सा गाँव था। उस गाँव में प्राय: करके ईसाई धर्म को मानने वाले लोग थे और वहाँ का एक पंडित था। वह प्राय: करके पूरे गाँव पर अपना शासन करता था। किस संबंध में-धार्मिक अनुष्ठानों के संबंध में। क्योंकि उससे बढ़कर के कोई व्यक्ति धर्म का अध्येता नहीं था, क्योंकि उससे बढ़कर के कोई राय देने वाला नहीं था इसलिए वह राजपुरोहित की तरह से बहुत

सम्मानीय भी था। संयोग की बात एक दिन वहाँ पर कोई तीन संत आए और तीनों संत साधना करने वाले थे। उन्होंने कोई उपदेश आदि नहीं दिया। कहीं नगर के बाहर ठहरे हुए थे। उन संतों की ऐसी विशुद्धि ऐसी सुगंधि गाँव में फैली कि सभी गाँवों के लोग वहाँ पर पहुँच गए। संयोग की बात यह थी उस दिन वह पुरोहित जी वहाँ नहीं थे। तब सभी गाँवों के लोग बहुत प्रभावित हुए, संतों ने कोई निमंत्रण पत्र भी नहीं दिया और बुलाया भी नहीं फिर भी लोग पहुँच गये जैसे मिठास को देखकर के चींटी पहुँच जाती है, पुष्प के पराग का अनुभव कर भ्रमर पहुँच जाते हैं, दीपक की ज्योति को देखकर के दीवाने पतंगे पहुँच जाते हैं, ऐसे संतों के पास सभी नगर के लोग पहुँच गए। उन्होंने देखा संत क्या प्रार्थना कर रहे हैं। हे भगवान् ! तू मुझे अपने पास बुला ले। तेरे जूते फट गए होंगे मैं उनकी सिलाई कर दूँगा। हे भगवान् ! तेरे सिर में जुएँ पड़ गए होंगे मैं जूएँ देख दूँगा। हे भगवान् ! तू एक बार बुलाकर तो देख, तेरे कपड़े गंदे हो गए होंगे मैं उनको साफ कर दूँगा। हे भगवान् ! तेरे बिना तो मेरा मन ही नहीं लगता, इस प्रकार की चर्चा हो रही थी। गाँव के लोगों ने देखा ये प्रार्थना तो नहीं है, ये क्या कर रहे हैं। फिर भी हमें क्या लेना देना उनकी प्रार्थना से, उनकी प्रार्थना का फल उनके लिए हमारी प्रार्थना का फल हमारे लिए। किंतु गाँव के सभी लोग प्रभावित बहुत हुए। जब वे संत वहाँ से विहार कर गए तो गाँव में वो पुरोहित जी आये तो उन्होंने पूछा क्या बात है। बोले तुम्हारी प्रार्थना हम नहीं पढ़ेंगे। हम तो ये पढ़ेंगे। हे भगवान् ! अपने पास बुला ले तेरे जूते साफ कर दूँगा। पुरोहित बोला

''क्या भगवान कोई जूते पहनते हैं?'' तेरे सिर में जूएँ पड़ गए होंगे तो जूएँ निकाल देंगे। क्या भगवान के सिर पर बाल हैं जो जूएँ पड़ेंगे? कपड़े गंदे हो गए होंगे भगवान कोई कपड़े पहनता है क्या। हमें नहीं मालूम पर हमने तो ऐसी प्रार्थना सुनी थी। अरे ! मैं पचासों साल

से तुम्हें प्रार्थना पढ़ा रहा हूँ, भूल गए हो क्या? नहीं भूले तो नहीं है किंतु आपकी प्रार्थना से वो प्रार्थना अच्छी लगी। हम तो संतों के दीवाने हो गए। पुरोहित ने कहा-कहाँ हैं संत ? बोले वो तो वहाँ चले गए। कहाँ ? नदी किनारे। नदी किनारे पहुँचे। देखा तो वे संत नदी के बीच में एक टापू है, उस टापू पर बैठे थे। ये पुरोहित अपने साथ में 10-20-50 व्यक्ति लेकर गया समझाने के लिए। इस प्रकार की अनगढ़ बातें क्यों समाज में फैलाई। उन्हें मालूम नहीं था ये स्थान मेरा है। नाव से वहाँ पहुँच गए। पहुँचने के उपरांत संतों ने कहा हम कोई संत साधु नहीं हैं। हम तो वैसे ही अपना टाईम पास कर रहे हैं। क्या प्रार्थना करते हो। बोले हम कुछ प्रार्थना करना नहीं जानते। बोले तो तुम सीखो। पुरोहित ने गाना प्रारंभ कर दिया। 2-4 काव्य सुना दिए। काव्य उन्होंने पढ़ लिए दुहरा लिए। उसके उपरांत पुरोहित लौटकर के आ गए।

वे तीनों आपस में कहने लगे कि पुरोहित ने प्रार्थना सिखाई थी वह कौन सी है ? बोला मैं तो भूल गया। दूसरा बोला मैं भी भूल गया। तू बता। मैं भी भूल गया। तीनों एक दूसरे को कोहनी मारे तू पढ़-तू पढ़ अब वो जो प्रार्थना थी तीनों भूल गये। बोले वो देखो पुरोहित वो जा रहा है जल्दी चलो, नहीं तो निकल जाएगा। उन्होंने टापू से दौड़ लगाई और दौड़ लगाकर वहाँ पर आ गए। पुरोहित रुका क्या बात है। बोले आपने जो प्रार्थना सिखाई थी वो प्रार्थना हम भूल गए। पुरोहित ने मुड़कर देखा तुम लोग यहाँ तक आये कैसे। बोले दौड़ते हुए आ गए। बोले पानी में दौड़ कर आ गए। मैं तो नाव में बैठकर गया और तुम पानी में कैसे दौड़ गए। बोले क्षमा करना हमने जो प्रार्थना पहले वाली थी उस प्रार्थना को पढ़ लिया था और दौड़ कर के आ गए। पानी हो चाहे अग्नि हम तो ऐसे ही आ जाते हैं। पुरोहित बोले क्षमा करना सच में वास्तविक प्रार्थना तो आपकी है। मेरी प्रार्थना सच्ची

नहीं है। मैं जिन्दगी भर प्रार्थना पढ़ता रहा किंतु अभी तक मैं तो कुछ कर नहीं सका। आप कहते हैं आकाश में चल देते हो, अग्नि पर चल देते हो, पानी पर चल देते हो वास्तव में प्रार्थना सच्ची तो आपकी है। आपकी प्रार्थना आत्मा के प्रदेशों से निकलती है।

तपस्या (**Penance**)

पर्सनैलिटि डिवलपमेंट करने का अगला सूत्र है इच्छा निरोध।

यदि व्यक्ति एक साथ हजार इच्छा लेकर जाएगा तो जीवन में अपने व्यक्तित्व का निर्माण न कर पायेगा। एक संकल्प के साथ आगे बढ़ता चला जाए उसका व्यक्तित्व निखरता चला जाएगा। एक-एक संकल्प लेकर के चले जब व्यक्ति के बहुत से संकल्प होते हैं तो वह संकल्प नहीं होते वे विकल्प कहलाते हैं। संकल्प तो केवल एक होता है और एक संकल्प हजारों विकल्पों को समाप्त करने वाला होता है। किन्तु एक से दो संकल्प हो जाते हैं वह संकल्प नहीं होता। क्या होता है-विकल्प। ऐसा करूँ वैसा करूँ और विकल्पों के माध्यम से कभी मंजिल की प्राप्ति नहीं होती।

''इच्छा निरोधः तपः'' शास्त्रों में कहा है यदि अपने जीवन में कुछ प्राप्त करना है तो समस्त इच्छाओं को रोकना ही पड़ेगा। ऐसा नहीं हो सकता कि एक साथ ही सब प्राप्त हो जाए। तुम चाहो हलुवा में से खीर निकाल ले और खीर में हलुवा। खीर में छोंक नहीं मिलेगा और हलवा में दूध नहीं मिलेगा। यदि सब्जी है तो सब्जी में मिठाई नहीं मिलेगी और मिठाई में सब्जी नहीं मिलेगी। सब अलग-अलग चीज है। किसी व्यक्ति के जीवन में किसी चीज की विशेषता होती है किसी के जीवन में किसी की विशेषता होती है। एक साथ सब कैसे मिल सकते हैं। तो एक-एक संकल्प के साथ आगे बढ़ोगे तो निःसंदेह उस मंजिल को प्राप्त करने में समर्थ हो जाओगे। किंतु व्यक्ति व्यक्तित्व के संबंध में भी लोभी लालची बन जाता है। उसकी तृष्णा बढ़ जाती है। मैं ऐसा भी हो जाऊँ, मैं वैसा भी हो जाऊँ तो वह

कैसा भी नहीं बन पाता जोकर बनकर रह जाता है। महानुभाव, चाहे एक गुण को पकड़ लें मुझे विनम्रता का पाठ सीखना है। विनम्र बनते जाना है तो विनम्रता के साथ सब गुण आ सकते हैं। मुझे श्रद्धावान् बनना है श्रद्धावान् बनने के साथ-साथ सब गुण आ सकते हैं। मुझे भक्त बनना है क्योंकि भक्ति के साथ सब गुण आ सकते हैं। मुझे उदारता से दानी बनना है एक गुण के साथ सब गुण आ सकते हैं।

तो महानुभाव ! व्यक्तित्व निर्माण का विषय ऐसा है यदि इस पर चर्चा महिनों-महिनों तक करें तब भी समय कम पड़ जाएगा संक्षेप में इतना ही है हमने चार-पाँच बातें कहीं, ये चार-पाँच बातें जीवन में बार-बार आप चिंतन करोगे तब निःसंदेह आपके जीवन में कुछ न कुछ परिवर्तन तो अवश्य आयेगा। किंतु ये बात आपके आत्म प्रदेशों से निष्पन्न होना चाहिए। क्योंकि बाहर से आप आरोपित करते रहोगे तब तक वह बातें उड़ जायेंगी। यदि बाहर से पानी के छीटें मारो तो पानी ज्यादा ठहरता नहीं है और नीचे से पानी निष्पन्न होता है। पानी का स्त्रोत फूटता है तो पानी कभी सूखता नहीं है।

राम की चुनरिया नहीं, नजरिया अपनाएँ

तो महानुभाव ! आपके जीवन में अंतरंग से ही आत्म परिणामों से सरलता सहजता में ये बातें बार-बार आना चाहिए आपको अंतरंग से लगे कि मुझे ऐसा करना चाहिए मुझे झूठ नहीं बोलना है। आपके अंतरंग में, मन में, चेतना में यह भाव प्रकट हो जाए तो आप सत्यता को प्राप्त हो जाओगे और ऊपरी शब्द में यदि सत्य बोलते हो, अंदर से असत्य छिपा है। गोबर की मिठाई पर यदि वरक लगा दिया तो वह मिठाई थोड़ी होगी। ऐसे ही अन्तरंग में यदि असत्य भरा पड़ा है सत्य की चादर ओढ़ ली तो सत्य थोड़े ही होगा। तो आपको अंदर से उत्पन्न करना है। अंदर से उत्पन्न जो होगा आपका, वह आपका स्वयं का होगा, बाहर से ओढ़ा हुआ होगा तो वह दूसरे का होगा कभी कोई छीन लेगा।

राम चुनरिया ओढ़ कर कोई राम भक्त नहीं कहलाता, राम भक्त बनने के लिए तो राम का नजरिया चाहिए। चुनरिया नहीं। चुनरिया महत्त्वपूर्ण नहीं है चुनरिया छीनी जा सकती है राम के नजरिया को कौन छीनेगा। तो आपके अंतरंग में यदि ये संकल्प पैदा हो जाएँ, अंतरंग में आपके भावना पैदा हो जाएँ उसे आप कर सकते हो आपके लिए वह कार्य असम्भव नहीं। चाहे दुनिया के लिए असम्भव हो आपके लिए असम्भव नहीं है। तो महानुभाव ये चार-पाँच बातें पहली बात क्या थी दृष्टि की निर्मलता Perception। दूसरी बात प्रार्थना Prayer कहाँ हो जो आत्मा के प्रदेशों से हो। जो आत्मा के प्रदेशों से निकलती है वही वास्तव में प्रार्थना कहलाती है। तीसरी बात अभ्यास Practise किंतु उसमें शर्त लगा दी थी सकारात्मक सोच के साथ। चौथी बात जीवन में प्रेक्टीकल भी करो। और अगली बात तप penance। हर कार्य के लिए संघर्ष का सामना करना पड़ता है। सहजता में कुछ नहीं मिलता। ये ध्यान रखो जिस व्यक्ति ने संघर्ष का सामना किया है उसने विजयश्री को नियम से प्राप्त किया है।

''चिंता न करो तुम दुखों की, ये यूँ ही कटते जाते हैं।
फूल सदा काँटों में खिलते, सेजों पर मुरझाते हैं।''

महानुभाव ! यदि संघर्ष का सामना करोगे तो तुम्हारी जिंदगी खिल जाएगी और यदि तुमने सब सुविधा को अपने गले लगा लिया तो नि:संदेह वह सुख सुविधा जीवन की दु:ख दुविधा बन जाएगी। इसलिए सुख-सुविधा में जिंदगी का आनंद नहीं मिल सकता। जिंदगी का आनंद तो संघर्ष में मिलता है। सोने में निखार जब भी आयेगा अग्नि में तपने पर ही आयेगा। बर्फ की सिल्ली के बीच में रखने पर नहीं आयेगा। तो ये कुछ बातें Perception, prayer, Practice with positive thinking, practical, penance-personality development के लिए कहीं। पुन: कभी और समय मिलेगा तब विस्तार से चर्चा करेंगे।

पाप बिना अपराधी

व्यक्ति का जन्म से लेकर मृत्यु तक का पुरुषार्थ प्राय: करके रोटी, कपड़ा और मकान के लिए होता है। पेट के लिए या पैसे के लिए, प्रजनन के लिए, प्रतिष्ठा के लिए, प्रतिस्पर्धा के लिए और प्रदर्शन के लिए होता है अथवा यूँ कहें व्यक्ति प्राय: अपने जितने भी कार्य करता है, जितनी भी क्रियायें करता है उनमें से अधिकांश क्रियायें या तो दाम के लिए होती हैं या नाम के लिए होती हैं या काम के लिए होती हैं और इन तीन के लिए जो क्रियायें होती हैं वह जीवन की शाम के लिए होती हैं। जो क्रिया केवल राम के लिए होती है, अपने आतम राम के लिए अथवा प्रभु राम के लिए, प्रभु राम से आशय एक विशेष व्यक्ति के लिए नहीं, राम से आशय प्रत्येक आत्मा में जो परमात्मा बनने की शक्ति है उस शक्ति को जाग्रत करने के लिए, राम से आशय ऐसा भी लगा सकते हैं 'रा' से ऋषभदेव, 'म' से महावीर। ऋषभदेव से महावीर पर्यंत चौबीस तीर्थंकर की भक्ति में जो क्रिया की जाती है या पंच परमेष्ठी की भक्ति के लिए जो क्रिया की जाती है अथवा नवदेवता की उपसना में जो क्रिया की जाती है, आत्मा के विभाव परिणाम को छोड़कर, स्वभाव को प्राप्त करने के लिए जो क्रिया की जाती है, वह क्रिया नि:संदेह जीवन को सफलता और सार्थकता प्रदान करने वाली होती है। महानुभाव ! अब हमें देखना यह है कि हमारी क्रियायें सिर्फ नाम के लिए हो रही हैं या हमारी क्रियायें दाम के लिए हो रही हैं या हमारी क्रियायें पंचेन्द्रिय के विषयों को प्राप्त करने के लिए हो रही हैं। यदि ऐसा है तब नि:संदेह उन क्रियाओं से पुण्य का आश्रव कम होता है और यदि हमारा उद्देश्य ''सकल कर्म क्षयार्थं'', हमारा उद्देश्य ''आत्म स्वभाव प्राप्त्यर्थं'' हमारा उद्देश्य संसार सागर से पार होने का है तब नि:संदेह उस उद्देश्य के बनते ही हमारी कोई भी क्रिया हो वह सब क्रिया पुण्य में परिवर्तित हो जाती है।

कर्मफल व्यवस्था शाश्वत है

आज आपके सामने विषय है-बिना पाप के अपराधी कैसे? हमने पाप किया नहीं, कोई अपराध किया नहीं फिर हम अपराधी कैसे बन गए? हमें बार-बार सजा क्यों मिलती है। कई बार लोग कहते हैं महाराज जी हमने जीवन में कोई पाप नहीं किया। भूतकाल की कहते नहीं, किंतु जबसे जन्म लिया है तब से इस जीवन में कोई पाप नहीं किया। फिर भी हमें इस प्रकार का दु:ख मिल रहा है। क्यों मिल रहा है? एक बार हम समीक्षा कर लें, क्या ये आपका कहना सही है। आपने जीवन में कोई पाप नहीं किया, फिर आपको पाप का फल क्यों मिल रहा है? ऐसा कैसे हो सकता है और आप इस बात को स्वीकार नहीं कर रहे कि आपने पाप किया है।

सिद्धांत कहता है कि बिना कार्य किए कोई फल की प्राप्ति नहीं होती। आप तो ऐसा कह रहे हैं कि मैंने खेत में कोई बीज नहीं बोया, फिर भी फसल आ गई। आप तो ऐसा कहते हैं मैंने ये कार्य नहीं किया फिर भी उसका फल मिल गया। आप ऐसा कहते हैं कि मैंने नमक नहीं खाया मेरा मुँह खारा हो गया। आप तो ऐसा कहते है मैंने शक्कर नहीं खाई मुँह मीठा हो गया। मेरा मुँह कड़वा हो रहा है हो सकता है बुखार से कड़वा हो गया हो। भले ही तुमने नमक नहीं खाया, मिर्च नहीं खायी ऐसे ही आत्मा में कोई न कोई कारण तो होगा जिसके कारण आपको दु:ख मिलता है पाप का फल मिल रहा है और आप अपराधी सिद्ध हो रहे हैं। अपराधी सिद्ध होने के लिए प्रमाण की आवश्यकता है यदि प्रूफ है तो अपराधी हैं चाहे आपने आज अपराध किया था या नहीं किया। पाप के लिए प्रूफ की आवश्यकता नहीं है, बस चित्त का जो परिणमन है, मन-वचन-काय का जो परिणमन है उतना ही पर्याप्त है चाहे कोई आपको पुण्यात्मा भले ही कहता रहे किंतु आपका परिणमन यदि पापमय है तब

नि:संदेह आपकी हमारी किसी की भी आत्मा हो वह पापिष्ठ ही कहलायेगी।

महानुभाव ! देखते हैं किस प्रकार हमें फल मिलता है। देखो कर्म के फल की एक व्यवस्था है वह व्यवस्था शाश्वत है। वह व्यवस्था किसी के द्वारा बनाई गई नहीं है, वह व्यवस्था नैसर्गिक है अनादिनिधन है, अपौरुषेय है। वह व्यवस्था स्वयं प्रकृति के हाथों है और वह व्यवस्था सभी के लिए एक समान है। उस व्यवस्था में कहीं किंचित् भी अंतर नहीं आता। वह व्यवस्था बहुत न्यायप्रिय है। मैं कई बार विचार करता हूँ संसार में जितने न्यायप्रिय कर्म होते हैं उतना न्यायप्रिय शायद ही कोई और हो पाये। कर्म कभी किसी को नहीं छोड़ते। अच्छे कर्म करने वाले को अच्छा फल देते हैं, बुरे कर्म करने वाले को बुरा फल भी देते हैं। चाहे तीर्थंकर जैसा महापुरुष हो, चाहे चक्रवर्ती जैसा कोई पुण्य पुरुष हो चाहे कोई और भी पुरुष हो इन्द्र, धरणेन्द्र, नागेन्द्र और भी नारायण, प्रतिनारायण कोई भी क्यों न हो जिसने जैसा कर्म बांधा उसे वैसा फल भोगना ही पड़ता है। चाहे कोई दीन दरिद्र दु:खी कैसा भी जीव हो यदि उसने पाप किया है तो पाप का फल भोगता है यदि पुण्य किया है तो वह उसका भी फल भोगता है।

भावों के अनुरूप बंधते हैं कर्म

संसार का कोई भी प्राणी किसी के पुण्य और पाप को छीन नहीं सकता। जिसका प्रारब्ध, भाग्य, जिसका कर्म, जिसकी होनहार जो भी शब्द आप कहना चाहें वह उसके साथ ही रहती है। इससे कभी अलग नहीं होते। आत्मा की परिणति कभी आत्मा से अलग नहीं होती। जैसे सोने का पीलापन सोने के साथ रहता है। चांदी की धवलता चांदी के साथ रहती है। जल की शीतलता जल के साथ रहती है अग्नि की विशुद्धता अग्नि के साथ रहती है। नमक का

खारापन, मिर्ची का चरपरा पन और शक्कर की मिठास उसके साथ ही रहती है। ऐसे आत्मा के द्वारा किया गया परिणमन और उस परिणमन से प्राप्त हुए कर्म वह भी उस आत्मा के साथ रहते हैं। एक क्षण के लिए भी आत्मा से अलग नहीं होते। किंतु ये बात भी सत्य है कि स्वयं के किए बिना कोई भी कर्म आत्मा के साथ चिपकते नहीं हैं। तीर्थंकर के सान्निध्य में बैठने से भी एक श्रावक या एक मुनि महाराज तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर रहा है और वहीं पर बैठा हुआ दूसरा जीव नरक आयु का बंध भी कर रहा है। सबके परिणाम अलग-अलग हैं।

बाहर के माहौल का प्रभाव तो पड़ सकता है दो व्यक्ति धूप में बैठे हैं और दोनों का शरीर तप रहा है किंतु अन्तरंग का भाव दूसरे प्रकार का होता है। एक व्यक्ति धूप में बैठकर के पुण्य कमा रहा है दूसरा व्यक्ति वहाँ पाप कमा रहा है। एक व्यक्ति मंदिर में बैठ कर के पुण्य कमा रहा है दूसरा व्यक्ति मंदिर में बैठकर के पाप कमा रहा है। एक व्यक्ति जिनवाणी के सामने बैठकर के पुण्य कमा रहा है दूसरा व्यक्ति पाप कमा रहा है। एक व्यक्ति धर्मात्मा की सेवा करके पुण्य कमा रहा है दूसरा निन्दा करके पाप कमा रहा है। एक ही स्थान पर बैठ करके चारों आयु का बंध किया जा सकता है। एक ही स्थान पर बैठ करके एक ही क्रिया करके चारों आयु का बंध संभव है। क्योंकि क्रिया भले ही चारों की एक जैसी हो किंतु चारों का परिणमन अलग-अलग होता है। युद्ध में गया हुआ शूरवीर यदि वह न्याय का पक्ष ले रहा है, युद्ध में मृत्यु को प्राप्त भी हो जाये तो वह देव गति में जाएगा। यदि युद्ध में गया हुआ वीर अन्याय का पक्ष ले रहा है, मृत्यु को प्राप्त करके वह नरक गति में जायेगा। यदि युद्ध में भेजा हुआ वीर युद्ध करते हुए डरता है सोचता है न्याय या अन्याय मैं नहीं जानता मैं तो राजा का आदेश मानता हूँ और अपने स्वामी की आज्ञा

का पालन कर रहा है। तो हो सकता है वह मनुष्य अवस्था को प्राप्त करे। एक व्यक्ति मायाचारी से युद्ध कर रहा है। युद्ध तो कर रहा है परन्तु मृत्यु से वो भाग रहा है वह चाहता है न्याय की नहीं अन्याय की विजय हो जाये तो तिर्यंच आयु का बंध कर लेगा मायाचारी के कारण।

चारों की क्रिया एक होते हुए भी चारों को चार प्रकार की आयु का बंध हो सकता है। यदि मंदिर में बैठे हैं तो वहाँ पर चारों व्यक्तियों को चार प्रकार की आयु का बंध हो सकता है। एक व्यक्ति भगवान को देखकर के परिणाम खराब कर रहा है। वह नरक आयु का बंध कर सकता है। दूसरा व्यक्ति परिणाम सुधार रहा है देव आयु का बंध कर सकता है। तीसरा व्यक्ति अपने सामान्य परिणाम रखता है तो मनुष्य आयु का बंध और चौथा व्यक्ति व्रतों से युक्त मायाचारी कर रहा है तो तिर्यंच आयु का बंध।

जैसे परिणाम वैसा परिणाम

प्राय: करके कर्म का बंध हम सोचते हैं क्रिया से होता है किंतु कर्म का बंध क्रिया से कम परिणामों से ज्यादा होता है। परिणमन परिणामों पर आधारित है और परिणाम परिणमन पर आधारित हैं। जैसे परिणाम (भाव) होते हैं उसका परिणाम (फल) वैसा ही निकल कर आता है। ऐसा कभी आज तक नहीं हुआ कि चेतना का परिणाम कुछ और हो और उसका परिणाम (प्रतिफल) कुछ और निकल कर आ जाए। महानुभाव ! पूर्वभव की बात तो छोड़ो, हम तो इसी भव की चर्चा लेकर चलते हैं। यद्यपि पूर्वभव में भी आप सिद्धांत लगा सकते हैं। समीकरण है 2 और 2 चार होते हैं। चाहे यहाँ पर जोड़ो, चाहे घर जाकर जोड़ो, चाहे कल जोड़ों, चाहे 100 साल के बाद जोड़ो 2 और 2 चार ही थे, चार होते हैं। ऐसे कर्म सिद्धांत भी समीकरण की तरह से, गणित के सवाल की तरह से हैं। उसमें किंचित् भी अंतर

नहीं आ सकता। जब कोई व्यक्ति अच्छा कार्य करता है अच्छे परिणाम करता है तो पुण्य का बंध, बुरा करता है तो पाप का बंध होता है। चाहे यहाँ करे चाहे कहीं और जगह करे, चाहे आज करे चाहे कल करे, चाहे बालक करे, युवा करे प्रौढ़ करे, या वृद्ध करे। जैसा परिणाम है वैसे ही कर्म का बंध होगा। यहाँ तक की यदि किसी व्यक्ति को स्वप्न भी आ रहा है तो स्वप्न देख रहा है, किसी की रक्षा का तो पुण्य का बंध हो गया। स्वप्न देख रहा है किसी को मारने का तो पाप का बंध हो गया। स्वप्न देख रहा है मायाचारी का तिर्यंच आयु का बंध हो गया, स्वप्न देख रहा है वह सरल परिणामों से युक्तता का तो मनुष्य आयु का बंध और यदि भद्र परिणाम हैं धर्म के साथ है तो देव आयु का बंध और यदि कषाय की तीव्रता है तो नरक आयु का बंध।

चाहे भले ही वह सो रहा है किंतु सोते-सोते भी कषाय के आधार से कर्म बंधता है यदि आयु बंध का काल आ गया तो वहाँ आयु बंध हो गया। आप कहेंगे महाराज जी व्यक्ति चारों सो रहे हैं और चारों को चार प्रकार की आयु का बंध कैसे हो गया। आपको लग रहा है सो रहे हैं किंतु वे अंतरंग में परिणाम तो कर रहे हैं। अरे महाराज कहाँ कर रहे वे बुद्धिपूर्वक। अब बुद्धि पूर्वक नहीं हैं दिन में तो बुद्धि पूर्वक किए। जैसा दिन में खाया था डकार वैसी ही आयेगी। मिठाई खाई है तो डकार मीठी-मीठी आयेगी और कोई खट्टी चीज खाई है तो डकार खट्टी आयेगी। जैसा खाया है उसी प्रकार का उसका भाव बनेगा।

करनी का फल

महानुभाव ! माना कि 200 फीट का एक लम्बा पाईप है। उस लम्बे पाईप में एक व्यक्ति ने ऊपर से कीप लगाकर बाल्टी से 2, 4, 6, 10 बाल्टी नाले का गंदा पानी डाल दिया। पाईप का मुख दूसरी

तरफ से बंद है। उसके बाद में उसने उस गंदे पानी के ऊपर लाल रंग का पानी डाल दिया। उसके ऊपर नीला पानी डाल दिया उसके ऊपर फिर हरा पानी डाल दिया पीला पानी डाल दिया फिर सफेद पानी उसके ऊपर डाल दिया, फिर दूध भर दिया फिर छाछ भर दिया फिर घी भर दिया। पाईप में ऐसा सिस्टम नहीं है सब मिक्स हो जाए। अब जो-जो पदार्थ वह डालता जा रहा है सब वहाँ भरते जा रहे हैं। और पुनः देखते-देखते पाईप पूरा भर गया।

अब वहाँ पाईप का ढक्कन खुलेगा तो सबसे पहले क्या निकलेगा। यहाँ से अभी ऊपर से घी भरा है पर वहाँ से क्या निकल रहा है-गंदा पानी। क्यों? क्योंकि जो पहले भर दिया है वह निकलेगा तो सही। चाहे आज निकले या कल निकले ढक्कन खुलते ही जब भी निकलेगा तो पहले वही निकलेगा जो पहले भरा हुआ है। यदि किसी व्यक्ति ने पहले पाईप में घी डाल दिया उसके बाद में दूध भर दिया, मट्ठा भर दिया दही भर दिया या जूस भर दिया उसके बाद में अन्त में जैसे आज वर्तमान काल में पाईप में गंदा पानी भरा रहा है कीचड़ भर रहा है गदंगी भर रहा है। भर रहा है गदंगी निकल रहा है घी। क्यों ? हमारे और आपके जीवन में कई बार ऐसा देखने में आता है कि एक व्यक्ति खूब पुण्य कर रहा है-भगवान की प्रतिदिन पूजा करता है, अभिषेक करता है, जाप लगाता है, स्वाध्याय करता है और वास्तव में सत्यता ये है बहुत भद्र परिणाम हैं। बड़ा सरल सहज है। कभी आज तक उसका जीवन में झगड़ा नहीं हुआ। कोई बात भी होती है पहले से हाथ जोड़ लेता है तब भी वह दु:खी है। फिर भी वह पाप कर्म का फल भोग रहा है। वर्तमान काल में खूब पुण्य कर रहा है तपस्या भी करता है व्रत उपवास भी करता है किंतु फिर भी वह दु:खी है क्यों ? क्योंकि अभी जो कर रहा है, अभी जो अपनी चेतना में घी और अमृत भर रहा है वह अभी नहीं निकलेगा। पहले

जो भर चुका है अभी तो वह निकल रहा है। अभी जो भर रहा है वह तो बाद में निकलेगा।

कई बार ऐसा भी होता है व्यक्ति खूब पाप में लगा है। उसने अपने नाम से कत्ल खाना खोल दिया। यहाँ तक कि वह चमड़े का व्यापार कर रहा है। अण्डा माँस का व्यापार कर रहा है या कोई और गंदे कार्य कर रहा है उसने ठेका ले लिया शराब का या वैश्यालय का या कोई ऐसा गंदा काम कर रहा है और करोड़ों का लाभ हो रहा है। लोग कहते हैं मरता भी नहीं है इतना पाप कर रहा है। फिर भी जी रहा है। लोग जय-जयकार कर रहे हैं बड़ी प्रतिष्ठा है। उसे आज फल नहीं मिल रहा। पहले उसने पाईप में घी भरा था, पुण्य किया था वह अभी निकल रहा है। गाँव देहात के व्यक्ति जानते होंगे गाँव की कहावत है कि आज के थापे कण्डे आज नहीं पलटे जाते। पहले कण्डे थापे जाते थे तो आज ही जो थापा गया है वह तुरंत नहीं पल्टे जाते। आज वह कण्डे पल्टे जायेंगे जो कल थापे थे और कल आज के थापे पलटे जाएंगे। कल के थापे परसों पलटे जायेंगे। ऐसे ही आज कर्म का फल आज नहीं दे सकते। जो आज भोग रहे हैं संभव है वह पहले का फल भोग रहे हों। कई बार ऐसा होता है 3, 4, 8, 9 दिन पहले के कण्डे थपे हैं उनको आज पलटा जा रहा है कब कौन से कर्म का उदय आ आए नहीं कह सकते। किंतु जिस आत्मा ने जैसा कर्म बांधा है वैसा ही फल भोगना पड़ेगा।

माना कि आज आप रहते हैं मदार में, कल रहते थे केसर गंज में। जब केसर गंज में रहते थे तब तुमने बैंक में पैसा जमा कर दिया तुम्हारी दुकान माना बहुत अच्छी चलती थी। आज मदार में भले ही तुम्हारा पता बदल गया किन्तु बैंक में से तुम्हें पैसे मिलेंगे ही। भले ही आज तुम गरीब हो। किन्तु जब अमीर थे तो जमा कर दिया था। तुम बैंक में जाओगे तो बैंक वाले तुमसे लोन न मांगेंगे। कहेंगे भैया !

तुम्हारा पैसा बैंक में जमा है ले जाओ और माना पहले तुम गरीब थे उस समय तुमने लोन ले लिया। आज अमीर हो बैंक में जाओगे तो बैंक वाले कहेंगे पैसे जमा करो। तुम कहो कि मैंने तो लोन लिया नहीं मेरे पास क्या कमी है। आज कमी नहीं है जिस समय कमी थी तब तुमने लोन लिया था। ऐसे ही जो व्यक्ति आज पुण्य कर रहा है किंतु पहले पाप कर चुका है उसका फल तो भोगना पड़ेगा। जो कर्ज लिया है वो तो चुकाना पड़ेगा। यहाँ पर हमने उदाहरण दिया कि केसरगंज से मदार भी आ गया उदाहरण ऐसे भी हो सकता है केवल पता नहीं बदला ड्रेस भी बदल गई। हमने आज पुण्य किया मनुष्य अवस्था में और कल पहुँच गए देव अवस्था में तो यह ड्रेस चेंज हो गई आत्मा तो वही है। जैसे केसरगंज में रहने वाला व्यक्ति वही है मदार में आ गया तो चेंज थोड़े ही गया। मकान चेंज हुआ है व्यक्ति चेंज थोड़े ही गया। ऐसे ही वह शरीर चेंज हुआ है आत्मा चेंज नहीं हुई। आत्मा तो वही है तो जिस आत्मा ने जैसा कर्म किया उसका फल वह वैसा ही प्राप्त करेगी। ये अवश्य हो सकता है कि शरीर बदलते चलें जाएँ। जैसे तुमने पैन्ट-शर्ट पहन कर कोई गलत काम किया और घर में आकर धोती दुपट्टा पहन लिया पुलिस वाले पकड़ने के लिए आयेंगे तो ये नहीं सोचेंगे कि पैन्ट शर्ट वाले ने काम किया है धोती-कुर्ता वाले को क्यों पकड़े क्योंकि व्यक्ति वही है अकेले ड्रेस चेंज करने से कुछ अंतर नहीं आता।

देखें अतीत में

महानुभाव ! ये जीव आत्मा जैसा भी कर्म करता है अच्छा या बुरा। उस कर्म का फल उसे नियम से वैसा ही भोगना पड़ता है और जैसा हम भोग रहे हैं ये बिल्कुल निश्चित तय है कि हमने वैसा ही कर्म किया है। सीता जी के जीव को ही देखो। जिस समय सीता जी हैं, उस समय उन्होंने कोई ऐसा कृत्य नहीं किया जिस कृत्य का

परिणाम उसकी निंदा हो शील में दोष लगाया जाए। परन्तु 10-20 भव पहले वह जीव जब वेदवती की पर्याय में था तब मुनि महाराज की निंदा की थी। सुदर्शन और सुदर्शना नाम के मुनि और आर्यिका थे, वे दोनों गृहस्थ जीवन में भाई बहन थे। एक ही कमरे में बैठे थे। वेदवती ने कहा मैंने एक मुनि महाराज को और आर्यिका को अकेले कमरे में देखा है इतना ही कहा था। लोग तो लोग हैं, बुराई को पहले पकड़ते हैं अच्छाई को बाद में और धर्म की निंदा होने लग गई। बाद में आकर के वेदवती ने प्रायश्चित भी लिया सब कुछ किया। किंतु वहाँ पर धर्म को दोष लगाया तो आज उसके शील को भी दोष लगा। वहाँ पर यदि किसी का वियोग किया है तो स्वयं को भी पतिवियोग सहन करना पड़ा। तो महानुभाव, चाहे वह रुक्मणी हो उसका पुत्र प्रद्युम्न कुमार यदि पूर्व में हंस के बच्चों का वियोग किया तो उसे भी पुत्र का वियोग सहन करना पड़ा। अंजना सती ने कनकोदरी की पर्याय में यदि 22 घड़ी के लिए भगवान की मूर्ति को छिपा दिया तो उसे भी 22 साल का पति वियोग सहन करना पड़ा। महानुभाव, एक नहीं ऐसे पचास सौ उदाहरण हैं।

वैदिक परम्परा में उदाहरण आता है भीष्म पिता जब शर शैया पर लेटे हुए थे। अर्जुन ने उनका शरीर बाणों से छलनी कर दिया था और कहते हैं उनके पिता शान्तनु ने उन्हें इच्छा मृत्यु का वरदान दे दिया था। इच्छा मृत्यु का वरदान होने से उन्होंने कहा कि सूर्य दक्षिणायन में है मैं मृत्यु को प्राप्त करना नहीं चाहता। जब उत्तरायण सूर्य होंगे तब मैं मृत्यु को प्राप्त करना चाहता हूँ। इसलिए छह महीने तक मैं अभी और नहीं मरना चाहता। तो जो अर्जुन ने शरशैय्या बनाई थी उस पर लेटे हुए सोच रहे हैं कि मैंने ऐसा कौनसा कृत्य किया और मुझे अपने पूर्व अतीत की भी याद है। मैं 100 जन्म से राजा होता हुआ आ रहा हूँ मैंने कोई ऐसा कृत्य नहीं किया जिसका परिणाम ये

हो कि छह महीने तक मुझे शर शैय्या पर लेटना पड़े। श्री कृष्ण नारायण से जब उनसे पूछा तब उन्होंने कहा तुम ठीक कहते हो तुम्हारा ज्ञान इसमें विशिष्ट है और तुमने जो ज्ञान लगाया है 100 जन्म तक तुम राजा थे। तुमने कोई ऐसा कृत्य नहीं किया जिसका परिणाम छह महीने तक बाणों की शैय्या पर लेटना पड़े। किंतु 101 वें जन्म के बारे में तुम नहीं जानते मैं जानता हूँ।

101 जन्म पहले भी आप राजा थे और आप जब शिकार खेलने जंगल में जा रहे थे घोड़े पर सवार होकर के। आपके घोड़े के सामने सर्प आ गया आपने तीर से सर्प को उछाल दिया और वह काँटों पर जाकर के गिरा। आप आगे घोड़े पर बैठकर के चले गए। जब लौटकर के आए छह घंटे बाद सर्प के शरीर में काँटे लगे थे खून बह रहा था। आपको दया आई। आपने सर्प को उठा करके नीचे रख दिया और काँटों से अलग किया। तब वह सर्प मृत्यु को प्राप्त हो गया। उस समय जो आपने कर्म बांध लिया था वह सौ भव में तो उदय में नहीं आया किंतु आयेगा अवश्य। जैन दर्शन की कोई भी क्रिया निरर्थक नहीं होती। जैन दर्शन की क्रिया कभी बांझ नहीं होती। वह तो नियम से फलवती होती ही होती है। यदि किसी ने स्वप्न में भी ॐ कह दिया तो स्वप्न में बोले गए ॐ का पुण्य भी मिलेगा। यदि किसी ने स्वप्न में किसी को गाली दी है तो उस गाली से पाप का बंध भी नियम से होगा।

जैसा करोगे वैसा भरोगे

महानुभाव ! कर्म सिद्धांत कहता है कि तुमने कर्म तो कहीं न कहीं किए हैं। जब किए है तो उसका फल भोगना ही पड़ेगा। आज आप जिस कर्म की सजा भोग रहे हैं वह कर्म पहले आपके द्वारा किया गया हैं हो सकता हैं आज आपने नहीं किया। ऐसा भी हो सकता है कि तुम गुनाहगार नहीं हो। किंतु तुम आज वर्तमान में

गुनाहगार की तकदीर लेकर के आये हो इसलिए उस समय किया गया गुनाह उसका फल आज आपको भोगना पड़ रहा है। गुनाहगार होना इस जन्म में जरूरी नहीं है। यहाँ गुनाहगार की तकदीर लेकर के आया है तो दण्ड भोगना पड़ेगा।

एक सेठ था वह पर्चा लिखकर के दे देता था दुकान से ले लेना। उसकी भाषा अलग थी कोड वर्ड की, हिन्दी वह नहीं लिखता था। उसका जो मुनीम बैठता था वह पढ़ लेता था। एक पर्चे वाले को घी दिया, एक को नमक दिया, किसी को तेल दिया, किसी को आटा दिया। एक व्यक्ति पर्चा लेकर के पहुँचा कि मुझे भी दे दो भाई घी दे दो, मिश्री दे दो। बोले तेरे पर्चे पर तो आटा और नमक लिखा है घी लिखा ही नहीं है। बोले अच्छा ऐसे मिलता है क्या। मुझे लगा पर्चा लेकर जो कुछ भी मांगो उससे मिल जाता है। ऐसे नहीं मिलेगा जो पर्चे पर लिखा होता है सो ही मिल जाता है मांगने वाला तो कुछ भी मांग सकता है। ऐसे ही हमारे हाथ में पर्चा है। जो हमारे भाग्य की लकीरों में लिखा है जो हमारे पर्चे में लिखा है वहीं हमें मिलता है।

एक व्यक्ति ऐसा है जो कुछ मांग नहीं रहा फिर भी उसे जीवन में अनुकूलता मिल रही है। उसने कभी नहीं कहा भगवान मुझे धन मिल जाए। बहुत सारा धन है संभाल नहीं पा रहा। जिसके तयखाने में नीचे कम से कम तीन-तीन फीट हीरों के ढेर लगे हैं जिसमें जाकर के देख नहीं सकता तीन पीढ़ी से देखा नहीं बड़े-बड़े सर्प और अजगर पल रहे हैं। ऐसा भी व्यक्ति है और एक ऐसा व्यक्ति है जिसके जीवन में खाने को लाले पड़ रहे हैं। तो महानुभाव तकदीर में जो है उसे तो भोगना ही पड़ेगा। चाहे तीर्थंकर का पद भी प्राप्त क्यों न हो जाए ! यदि कर्ज का पर्चा लेकर के आया है तो कर्ज चुकाना पड़ेगा। बैंक में पहुँच गया पर्चा लेकर के उसमें लिखा है लोन तो फिर लोन चुकाना है। और उसमें लिखा है कि डिपोजिट तो तुम भले छीन

लो पर्चा तुमने दिया तो फिर पैसे तुरंत निकलकर आ जायेंगे। तुम्हारे एकांउट में पैसा नहीं है और एटीएम में पासवर्ड डालकर के निकालते रहो तो पैसा कहाँ से आयेगा और पैसा है तो तुम्हें मिल जाएगा। है तो ही मिलेगा नहीं है तो नहीं मिलेगा चाहे तुम एक चक्कर काटो 100 चक्कर काटो। एक बार में निकालो चाहे 10 बार में निकालो। है तो मिलता जायेगा नहीं है तो फिर नहीं मिलेगा। महानुभाव, जीवन में जो कुछ मिल रहा है हमें अपने ही कर्म का फल मिलता है। अपराध हमने परभव में किए तब भी उसका फल इस भव में भोगना ही पड़ेगा। इस भव के भी इस भव में उदय में आ जाएँ तो भी भोगना ही पड़ेगा। महानुभाव, पूर्व जन्म में हम कहाँ थे। किस प्रकार की प्रवृत्ति करने वाले थे, कौन-सी पर्याय में थे, कौन-कौन से पाप किए या नहीं किए कुछ नहीं मालूम। पूर्व में नहीं जानते थे तो पाप कर लिया किंतु आज जानते हैं तो आज तो कम से कम पाप न करें। क्योंकि आज यदि पुण्य करेंगे तो उसका फल पुण्य रूप में हमें मिलेगा चाहे आज मिले या कल मिले अगले भव में मिले या 100 भव के बाद मिलेगा परंतु अवश्य। तो महानुभाव, बिना पाप के अपराधी कैसे? बिना पाप के अपराधी ऐसे हो सकते हैं कि पाप आपने इस भव में नहीं किया हो, पूर्व भव में किया हो।

पुण्य-पाप का बैलेंस

अब हम आते हैं इस वर्तमान काल के भव के ऊपर। इस भव में भी आपने कितने-कितने पाप किए उसे आप पाप मानते नहीं। ये आपकी भूल है आप पाप को भी पाप नहीं कह रहे। फिर मैं आपसे पूछूँगा आप पाप किसे कहेंगे। आपके जीवन में सही पूछा जाए तो पाप बहुत ज्यादा हैं। पुण्य कहीं थोड़ा सा करते हैं। कैसे करते हैं पुण्य-पाप ? बतायें आपकी पाप पुण्य की व्याख्या। एक लड़के की शादी होने वाली थी। लड़के के पिता ने लड़की वाले से सब तय कर

लिया था। इतना सोना चाहिए इतनी नकदी चाहिए भोजन में ये चाहिए, नाश्ता में ये चाहिए सब तरह की बात हो गई। ठीक है, अब वह बारात लेकर के पहुँचे। दोनों नम्बर 1 के कजूंस थे। यहाँ जब भोजन तैयार हुआ। लड़की के पिता ने बिल्कुल ऐसा भोजन दिया कि व्यक्ति खा ही नहीं पाये। लड़के का बाप था वो भी कजूंस था। उसने सोचा भोजन जैसा है ठीक है। अपने आप अच्छा खिलाएगा। किंतु सोने चाँदी में कमी नहीं, नकदी में कमी नहीं होनी चाहिए। सोने की व्यवस्था जमीन पर ही सुला दिया। टाट बिछा दिया, क्योंकि कजूंस था। लड़के का बाप सोच रहा था लड़की का बाप अपने आप व्यवस्था बनाएगा। लड़की का बाप भी नं. 1 का कजूंस था। बोले तेरे हाथ का पर्चा लिखा रखा है मेरे पास। तूने कहा भले ही जमीन पर सुला देना। बेटा तुझे जमीन पर ही सुलाऊँगा। भले पानी पिला देना। मैं तुझे पानी ही पिलाऊँगा ठण्डाई लस्सी पिलाऊँगा ही नहीं। चाहे भले ही तू मुझे सूखी पूड़ी खिला देना नमक से। वो भी खिला दूँगा। तूने ही लिखा है एक सब्जी पर्याप्त है दो सब्जी तो बिगड़ जाती हैं। कद्दू की और अंगूर की सब्जी अच्छी लगती थी उसने कहा अंगूर कद्दू की सब्जी बना देना, ठीक है।

अब क्या हुआ। लड़के का बाप भी झुंझला गया। बाराती लोग चढ़ बैठे उस सेठ पर। तुझे इतना माल मिल रहा है और खाने के लिए तूने पर्चा में लिख दिया ऐसा-ऐसा। सोने के लिए ऐसा लिखा। वह कहता है भाई मैंने ऐसा नहीं लिखा। मैंने तो सब्जी लिखी अंगूर की कद्दू की। उन्होंने नहीं बनाई तो मैं क्या करूँ। चलो उनसे शिकायत करो। उसने बनाई क्यों नहीं। पर्चा के मुताबिक वह काम क्यों नहीं कर रहा है। लड़की के पिता के पास सब पहुँचे उसने भी लिस्ट निकाल ली। बोले कौन-सी चीज में कमी है। वह बोला एक चीज में कमी आ रही है और सब तो ठीक है। इसमें सब्जी लिखी है कद्दू

की और अंगूर की। वह बोला तो बनाई तो है। उसने कहा-कहाँ है देखो। इसमें कद्दू-कद्दू हैं, अंगूर तो दिखाई नहीं देता। बोला मैंने कद्दू-अंगूर की सब्जी बनाई है। 50-50 प्रतिशत डाला है। 50 प्रतिशत कद्दू और 50 प्रतिशत अंगूर। लड़के का पिता बोला तुम कहते हो अंगूर 50 प्रतिशत डाला है। इसमें तो एक भी दिखाई नहीं दे रहा। तुम्हें नहीं दिखाई दे रहा तो मैं क्या करूँ हो सकता है तुम्हारी आँखें कमजोर हो गई हों। मैंने तो 50 प्रतिशत अंगूर डाला है। कैसे डाला है-कैसे क्या मैं बाजार से 1-1 क्विंटल के लगभग 20 कद्दू लाया और छोटे-छोटे 20 अंगूर लाया। चालीस नग हैं 20 नग अंगूर और 20 नग कद्दू हो गए 50-50 प्रतिशत। अब इसमें तुम्हें अंगूर नहीं मिल रहे तो मैं क्या करूँ।

महानुभाव ! तो आपका पुण्य पाप ऐसा चलता है कि आधा पुण्य आधा पाप। किंतु आधा पाप कैसे मानते हैं कि 20 कद्दू हैं 1-1 क्विंटल के उतना बड़ा तो तुम्हारा पाप हो गया और 20 अंगूर है मटर के दाने के बराबर उतना तुम्हारा पुण्य हो जाता है। किंतु फिर भी आप जीवन भर पुण्य की ढींग मारते हैं। महानुभाव, इस प्रकार का पुण्य रहेगा तो कद्दू के बराबर आपको पुण्य का फल नहीं मिलेगा। जीवन में पाप का आश्रव तो कद्दू के बराबर हो रहा है और पुण्य का आश्रव अंगूर के बराबर।

पृथ्वी पर भार: निंदक व विश्वासघाती

अब आप अपने जीवन की कहानी सुनें। आप देखते जाएँ कहाँ-कहाँ पर पाप करते हैं। देखो सप्त व्यसन महा-पाप होते हैं। जुआ एक बार भी खेला चाहे भूल से खेला महापाप है। यदि आपने किसी की वस्तु चुराई हो तो महापाप है। यदि जीवन में पर स्त्री सेवन किया है तो महापाप है। यदि आपने वेश्या की ओर दृष्टिपात किया हो तो महापाप है, यदि आपने और भी कोई ऐसा कार्य किया माँस

खाना शराब पीना तो वह भी महा पाप है। महानुभाव, इसके साथ-साथ पाँच पाप होते हैं हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह। अब देखिए, कहाँ-कहाँ पर आपसे पाप हो सकते हैं। देखते चले जाओ। पहले महापाप देखना चाहो तो देव, शास्त्र, गुरु, धर्म और श्रावक की निंदा करना ये महा-पाप हैं। अब आप अपने जीवन में देखिये आपने अपने जीवन में कभी जिनेंद्र भगवान की निंदा की है। भगवान के प्रति आपके परिणाम निंदा के आए यदि आए हैं एक सैकण्ड के लिए भी तो आपके जीवन में 70 कोड़ा-कोड़ी सागर का बंध करने वाला वह कर्म पर्याप्त है यदि आपने जिनवाणी की निंदा की है तो महापाप हो गया या गुरु के बारे में या अपने धर्म के बारे में या किसी श्रावक के बारे में यहाँ तक किसी पशु-पक्षी के बारे में अथवा यहाँ तक कि एक देव-नारकी के बारे में किसी भी संसारी प्राणी के बारे में यदि तुम्हारी जिह्वा से निंदा का शब्द निकला है तो तुमने नीच-गोत्र का बंध कर लिया। वह पाप का बंध हो गया और निंदा करना तो बहुत दूर की बात है सुनी भी है, अनुमोदना की है, आपने टोका नहीं निंदा करने वाले को और उसमें आनंद ले रहे हैं और हाँ में हाँ मिला रहे हैं तब भी वह पापी है। यदि आपने जीवन में कभी किसी के साथ विश्वासघात किया है तो विश्वासघाती महापापी होता है। नीतिकार कहते हैं-

न भारा पर्वता भारा, न भारा सप्त सागराः।
निंदका ही महाभारा, तथा विश्वास घातकाः॥

पृथ्वी कहती है मुझे पर्वतों का भार, भार नहीं लगता, सातों सागरो का भार, भार प्रतीत नहीं होता परंतु निंदक और विश्वास घातक मेरे अर्थात् पृथ्वी के लिए महाभार हैं। विश्वासघाती महापापी होता है।

तो किसे मानेंगे पाप ?

यदि आपने जीवन में अपनी आत्मा का घात करने का परिणाम किया है तो आत्मघात का परिणाम भी महापाप है। यदि आपने जीवन में अन्य किसी प्रकार से प्राणियों का वध करने का भाव किया है, वह भी महापाप है। यदि आपने भ्रूण हत्या की कृत कारित अनुमोदना की है तो महापाप है। यदि आपने किसी व्यक्ति को सरासर धोखा देने का विचार किया है तो वह भी महापाप है। महापापों की बात छोड़ें अब पाप की बात करें। केवल किसी की हत्या करना ही पाप नहीं कहलाता है। पाप तो मन से, वचन से, काय से तीनों से होता है। चाहे मन से भी आपने सोच लिया तब भी वह पाप का बंध हो जाएगा। वचनों से भी वह पाप का बंध हो जाएगा। वचनों से भी तुमने कह दिया मर जा तो यह भी पाप हो गया, हिंसा हो गयी और शरीर से आपने मारने का प्रयास किया चाहे वह मरा नहीं तब भी हिंसा हो गई वह भी पाप है।

महानुभाव ! आप अपनी समीक्षा करते जाओ आपने जीवन में कभी पाप किया या नहीं किया। आपकी गाड़ी आ गई है नई गाड़ी में बैठकर के आप शान से आ रहे हैं। चाहे इतना लंबा साँप मर गया, चाहे नेवला मर गया, चाहे गिलहरी मर गई, चाहे मेंढ़क मर गए, इतने जीव मर गए आप कहते हैं कि आपने कोई पाप नहीं किया। वे असंख्यात जीव रोड से चिपके पड़े हैं पाप किसने किए। तुम तो कोई पाप करते नहीं, किसे तुम पाप मानते हो। तुम जब जाते हो गाड़ी में बैठकर चौमासे में, चाहे ट्रेन से बस से जा रहे हो लाखों गिजाई का झुंड लगा है चींटियों का झुंड लगा है वे आपकी गाड़ी से, बस से मर गए तो पाप का फल किसे मिलेगा। क्या पाप आपने नहीं किया। यदि आप पृथ्वी को खोद रहें हैं एक इन्द्रिय जीव की हिंसा हुई। जल में नदी के पानी में नहा रहे हैं स्वीमिंग पुल में नहा रहे हैं तो किसको

पाप लगेगा। यदि अग्नि जला रहे हैं किसको पाप लगेगा। कौन है पापी? आप कहेंगे हमने तो कोई पाप किया ही नहीं। किसे पाप कहना चाहते हैं। अपने लड़के की शादी में आपने आतिशबाजी की और ऐसे बम पटाखे चलाए या फायरिंग की जिसके माध्यम से कई पक्षियों का तो गर्भपात हो गया किसने पाप किया। आपके लड़के की पक्की हुई पचासों बोतल पीछे से आ गई, पेमेंट आपने किया, किसने पाप किया। यदि किसी नेता के लिए आपने नाश्ता मंगाया उसने खाया पीया सब कुछ किया, किसने पाप किया, आप इसे पाप नहीं कहते तो किसे पाप कहोगे बताओ न। पाप क्या है?

यदि आप नहाते हैं, साबुन सोड़ा लगाकर कपड़ों को धोते हैं, वह पानी नाली में जा रहा हैं नाली में छोटे-छोटे जीव बिलबिला रहे हैं तड़प रहे हैं, प्राणों को छोड़ रहे हैं पाप किसको लगेगा। आप कहते हैं मैंने जीवन में जब से होश संभाला है तब से कोई पाप नहीं किया। अब मैं आपसे पूछना चाहता हूँ फिर पाप कहते किसे हैं। यदि इसे भी आप पाप नहीं मान रहे तो पाप किसे कहेंगे। ये सब महापाप हैं ये बहुत बड़े-बड़े पाप हैं जघन्य पाप हैं और मैं समझता हूँ कि इन पापों से बचना बहुत कठिन है। काजल की कोठरी में जा करके बचना मुश्किल होता है काला दाग लगता है। समुद्र में डूबा हुआ व्यक्ति न भींगे ऐसा हो ही नहीं सकता।

कितने सारे पाप हो रहे हैं और ऐसा नहीं कि आप जानते नहीं। आप जानते हैं। चाहे आपके घर में बहुत सारी लाईट जल रही हैं शादी विवाह का माहौल है चाहे कुछ भी है। उस लाईट पर हजारों पतंगे आकर जल रहे हैं मर रहे हैं किसको पाप लगेगा। यदि आपके घर में 500 बोरा गेहूँ रखे हैं उसमें घुन लगा हुआ है, उस गेहूँ में जीव पैदा हुए मर गए उसका पाप किसे लगेगा। यदि आपके खेत में, भूमि पर कोई जीव मृत्यु को प्राप्त हो रहा है, उसके स्वामी आप हैं, परिग्रह

वह आपका है उससे हिंसा हो रही है किसको पाप लगेगा। यदि हलवाई का काम करते हैं या आटा चक्की का काम करते हैं या और कोई निम्नतर काम करते हैं उसमें जो जीव हिंसा हो रही हैं उसका पाप किसको लगेगा। आप रात्रि में भोजन कर रहे हैं उसमें पाप हो रहा है वह पाप किसको लगेगा। आप जमीकंद को जानते हैं सूई की नोंक के बराबर जमीकंद में अनंत जीव होते हैं आप स्वाद में उसे खाए जा रहे हैं किसको पाप लगेगा। आप कहते हैं महाराज जी, जब से मैंने होश संभाला है तब से मैंने कोई पाप नहीं किया। फिर मुझे दु:ख परेशान क्यों कर रहे हैं? अब मैं आपसे पूछना चाहता हूँ कि बताओ पाप किसे कहते हैं? यदि हिंसा को तुम पाप नहीं मान रहे तो पाप कहते किसे हैं। बिना पाप के अपराधी, महाराज हमने पाप नहीं किया मैं अपराधी क्यों बन गया ? अपनी आत्मा से पूछो कि तुमने पाप किया है या नहीं। यदि किए हैं तो पापी हैं। ये तो नियम है कर्म सिद्धांत का, बिना किए कभी किसी को कुछ मिलता ही नहीं।

ऐसी बेईमानी

जो तुमने किया है वही मिलेगा, अन्यथा नहीं मिलेगा। जब भी कोई कर्म का उदय आए, तब कहना भगवान पाप तो मैंने ही किया इसलिये मुझे फल मिल रहा है। लेकिन व्यक्ति की आदत ये है व्यक्ति इतना बेईमान हो गया है कि पाप करके तो स्वीकार करता नहीं और पुण्य किए बिना ही कहता है, यह तो मैंने किया है। कभी तुमने भगवान के सामने ऐसा कहा भगवान मैंने पुण्य तो किया नहीं, आपने मुझ पर कृपा दृष्टि कैसे कर दी। मैं तो उसी लायक था मुझे तो दु:ख मिलना चाहिए। आपने मेरी कोठी बना दी, बंगला बना दिया, महल बना दिया, मैं सुखी हूँ मेरे पास कोई दु:ख नहीं है, आपकी बड़ी कृपा है ऐसा तो कहते नहीं। ये कहते हैं भगवान कौन से जन्म की सजा दे रहा है। मैंने कभी पाप नहीं किया। तू बड़ा अन्यायी है।

तूने मेरे साथ ऐसा किया है। अन्यायी भगवान है या अन्यायी तुम हो। अन्यायी कौन है ? भगवान के पास शुक्रिया अदा करने तो गया नहीं, धन्यवाद देने तो गए नहीं जब भी गए तो गालियाँ देने गए। कल से मैं मंदिर नहीं जाऊँगा, मैं शिखर जी नहीं आऊँगा। क्यों ? शिखरजी जब आया था तो मेरा एक्सीडेंट हो गया। मेरा शिखरजी जाने का त्याग। ये नहीं कहते कि रोटी खाने से कब्ज हो जाती है मेरा रोटी खाने का त्याग। ऐसा क्यों नहीं कहते ?

व्यक्ति बेईमान हो गया है। श्रेय स्वयं लेना चाहता है पाप का फल दूसरों को देना चाहता है। एक व्यक्ति था पाप कर्म के उदय से जन्म के पूर्व ही उसके पिता की मृत्यु हो गई और जन्म देने के कुछ महिनों बाद उसकी माँ की मृत्यु हो गई। वह अकेला ही था रिश्तेदारों ने पाल पोस के बड़ा किया उसके उपरांत रिश्तेदारों ने भी निकाल दिया वह मौहल्ले पड़ोस के लोगों से उनकी करुणा का पात्र बन करके भोजन पानी करके जीवित रहा। यौवन अवस्था को प्राप्त हुआ। उसने थोड़ी मेहनत मजदूरी करना प्रारंभ किया। अब छोटा सा उसका खेत था। खेत में वह रखवाली करता और अपनी पत्नी और दोनों बच्चों का पालन-पोषण करता। एक दिन रात्रि में एक गाय चरती-चरती उसके खेत पर आ गई। उसने देखा गाय बार-बार क्यों आ जाती है। कई बार आई उसने कई बार भगाया। उसे गुस्सा आया लाठी लेकर के गाय को कसकर मार दी और गाय वहीं खेत पर मर गई। प्रातः काल हुआ गाँव के लोग आए देखा कि गाय इसके खेत में मरी पड़ी है। तो गाँव वालों ने कहा तू गाय का हत्यारा है। हमारी जाति से समाज से बाहर रह चला जा गाँव छोड़ के बेचारा रोने लगा। कहता है भई मैंने गाय नहीं मारी। तो गाय किसने मारी। राम ने गाय मारी। लोगों ने कहा-यहाँ राम कब आये। बोले राम आये थे रात्रि में गाय मारकर चले गए।

लोगो ने कहा हमारे गाँव का नियम है, पंचायत कहती है गाय की पूँछ लेकर गंगा स्नान करने जा। प्रायश्चित कर-सोने की गाय तो तू दान कर नहीं पायेगा। इतना ही कर ले। तब तू गाय के पाप से मुक्त हो जायेगा। वह रोने लगा मैंने गाय नहीं मारी। लोग कहते हैं-फिर किसने मारी। जिसने मारी है पूँछ उसको देकर के आ। पत्नी बच्चे सब कहते हैं कि तुम गाय के हत्यारे हो, निकलो घर से। उसे घर से निकाल दिया। बेचारा गाय की पूँछ लेकर के गंगा जी नहाने चला गया। अब जा रहा है रास्ते में जंगल में सोचता है क्या करूँ। हे भगवान तू ही सबका कर्ता-धर्ता है तू ही सब करने वाला है हम तो केवल निमित्त हैं। तो जब हम निमित्त हैं तो गाय तो तुमने ही मारी। मेरी बुद्धि अच्छी कर देते। लाठी का वार आगे-पीछे कर देते गाय निकल जाती तो गाय बच जाती। इसलिए गाय मैंने नहीं मारी मैं गाय का हत्यारा नहीं, ये गाय की पूँछ तो आप पकड़ो।

जंगल में रोते-रोते 3 दिन बीत गए अब संयोग की बात जंगल के देवता ने सोचा ये व्यक्ति गरीब दीन दु:खी है चलो इसे माफ कर दो मुक्त कर दो। वह राम का भेष बनाकर के आया और उससे गाय की पूँछ ले ली। चल तू जा, मैं गाय की पूँछ लेकर गंगा जी नहाकर आ जाऊँगा, मैं प्रायश्चित ले लूँगा। तेरी श्रद्धा ऐसी है तो कोई बात नहीं। वह कहता है घर लौटकर भी क्या जाऊँ। पत्नी ने बच्चों ने धक्का देकर निकाल दिया तू गाय का हत्यारा, जा चल तू यहाँ से। मैं घर लौटकर नहीं जाऊँगा साधु सन्यासी बन गया। जंगल में रहकर तपस्या करने लगा। बहुत तपस्या की। नगर में, गाँव में कहीं नहीं जाता। वहीं झरनों का पानी पीता, पेड़ों के पत्ते खाता, फल खाता। उसकी तपस्या से पुण्य बढ़ने लगा। आस-पास के लोग भक्त आने लगे। उसके पास भीड़ लगने लगी। बाबाजी हमारे नगर में यहाँ भागवत् होगी, यहाँ कथा होगी यहाँ ऐसा होगा। भण्डारे होने लगे। अब उस महात्मा के पास सैकड़ों हजारों की संख्या में लोग आने लगे।

अब महात्मा जी कभी इस नगर में, कभी उस नगर में, अब उसकी बहुत प्रभावना बढ़ी। हजारों लाखों व्यक्ति आने लगे। एक दिन की बात कि बाबाजी किसी भण्डारे में गए हुए थे। वहाँ लम्बी लाईन लग गई। भक्त भी हजारों की तादात में हो गए। अब तो बाबाजी का सब जगह जयकारा होता चला गया। बहुत बड़ी भीड़ लगभग 1 लाख व्यक्ति सभा में बैठे थे। बाबाजी मंदिर में बैठे। उनके प्रवचन का समय तीन बजे का था। बाबाजी मंदिर से निकलकर आने वाले थे। तभी एक व्यक्ति भीड़ को चीरता हुआ पहुँचा। लोगों से पूछने लगा भईया ये यज्ञ कौन करा रहा है। लोगों ने कहा आकाश से टपका है। इतने बड़े बाबाजी का नाम दुनिया जानती है। क्या जमीन में से पैदा हुआ है। सब लोग जानते हैं। सब तो जानते हैं पर मैं तुमसे पूछ रहा हूँ। अरे फलाने-फलाने बाबाजी करा रहे हैं। अच्छा, कहाँ हैं बाबाजी ? मंदिर में हैं। भीड़ ने उसे रोका, वह रुका ही नहीं। सबको धक्का देते हुए मंच पर पहुँच गया। बाबाजी मंच पर आए इसके पहले ही पहुँच गया। मंदिर में बाबाजी थे उसके चेले सब घेर के बैठे थे। पूछा ये व्यक्ति यहाँ मंच पर कैसे आ गया। भगाओ उसे। उसे भगाने का प्रयास किया वह अड़ गया। मुझे बाबा जी से चर्चा करनी है बोले महात्मा जी अभी मंच पर आते हैं। पर तुझे क्या चर्चा करनी है पहले हमसे पूछ। ये पूछना है यज्ञ के बारे में कि यज्ञ कौन करा रहा है। बोले तेरा दिमाग तो ठीक है न। इतने लोगों से पूछ ले कोई भी बता देगा। बाबाजी का रहस्य सब दुनिया जानती है। अरे मैं दुनिया से नहीं बाबाजी से पूछूँगा।

तब तक बाबाजी मंच पर आ गए। अपने सोने के सिंहासन पर बैठे। हजारों-लाखों व्यक्तियों ने जयकारे से आकाश को गुंजायमान कर दिया। वह आकर के मंच के सामने खड़ा हो गया। व्यवस्थापकों ने खूब उसको हटाने का प्रयास किया किंतु इतना बलवान वो तो हिले ही नहीं। बाबाजी प्रवचन बाद में सुनूँगा। पहले मेरी जिज्ञासा का

समाधान करो। ये बताओ ये यज्ञ कौन करा रहा है। बाबाजी ने उसे देखा ऊपर से नीचे तक। कैसा व्यक्ति है अरे किसी से भी पूछ लो कौन यज्ञ करा रहा है। मैं अपने मुँह से क्या कहूँ। नहीं मैं तो आपके मुँह से सुनना चाहता हूँ। सब लोगों की बात नहीं मानता। यज्ञ करा रहा हूँ मैं समझे। कहाँ से आया है तू। बोल क्या करेगा? अच्छा, ''बस ये ही पूछना था कि यज्ञ आप करा रहे हैं। तो गैया को मारने के लिए लाठी लेकर मैं कब गया जिसने पहले राम का रूप बनाया था ये वो ही देव शक्ति थी। निकाली पूँछ और उस बाबा से कहा पकड़ पहले गंगा जी नहा कर आ। यज्ञ करा रहा है बाबा और गैया मारी मैंने। गैया मारी राम ने यज्ञ कराई बाबा ने। लो पुण्य का श्रेय खुद लूटना चाहते हो और गैया मारने मैं वहाँ गया था। पकड़ पूँछ। हट यहाँ से, जा ये गाय का हत्यारा है कोई बाबा नहीं है। इसे पहले गंगा जी नहाने के लिए भेजो। सभा में सन्नाटा छा गया। कब गैया मारी। बाबा ने हाथ जोड़े। ठीक है मुझसे भूल हो गई। गैया यदि राम ने मारी है तो यज्ञ भी राम ही करा रहे हैं मैं नहीं करा सकता। किंतु व्यक्ति बेईमान इतना है पाप कर्म यदि हो जाए तो भगवान ने किया है अच्छा कार्य होने पर महाराज जी, ये मंदिर मैंने बनवाया है। ये मूर्ति मैंने रखवाई है, ये काम मैंने करवाया है, ये शास्त्र मैंने छपवाया है, ये चौमासा मैंने करवाया, ये विहार मैंने करवाया। लम्बी-लम्बी ड़ींग मार करके, ये काम मैंने करवाया और बुरा काम हो गया तो, महाराज जी क्या बतायें भगवान रुष्ट हो गए। भगवान ने व्यापार में घाटा दे दिया भगवान ने ऐसा कर दिया तो व्यक्ति यदि दोहरी चाल में चलेगा तो जीवन में कभी भी सफल न हो सकेगा।

प्रत्येक घटनाक्रम के पीछे खोजें, अपनी गलती

महानुभाव ! जीवन का सबसे बड़ा सत्य तो यही है कि व्यक्ति या तो स्वयं को कर्ता स्वीकारे अच्छे का भी और बुरे का भी। यदि

भगवान को श्रेय देना चाहता है तो केवल बुरे-बुरे का श्रेय न दे। पेड़ पर कच्चे फल भी आते हैं पके फल भी आते हैं। ऐसे कोई बँटवारा नहीं होता। मीठे-मीठे फल मेरे और खट्टे-खट्टे फल तेरे। ऐसे कौन बँटवारा करेगा। अरे जब बँटता है तो आधा-आधा। और यदि पूरा है तो पूरा। भगवान के खाते में पूरा ही दे दो। भगवान सब आपकी कृपा है। यदि आज जो कुछ भी मुझे अच्छा मिल रहा है वह सब भगवान की कृपा से और भला आदमी तो वह है जो यह कहे कि जो कोई भी मुझे दु:ख मिला है मेरे पाप कर्म के उदय से मिला है। किसी ने मुझे दु:ख नहीं दिया। महाराज जी किसी का दोष नहीं। जो व्यक्ति किसी भी घटनाक्रम के पीछे अपनी गलती खोज लेता है उस व्यक्ति की गलती कोई दुनिया में बताता नहीं। वह स्वयं भी संक्लेशता से बच जाता है, क्रोध नहीं आता और प्रतिफल को स्वीकार कर आगे सुधार का प्रयास करता है। तो महानुभाव, बिना पाप के अपराधी कैसे। बिना पाप के अपराधी तो होते ही नहीं। जब भी कोई अपराधी होता है तो वह पाप करने पर होता है। ये बात ठीक है अपराध आपने आज नहीं किया पूर्व में किया हो।

एक व्यक्ति बहुत धनी था धन कमाकर ला रहा था रत्नद्वीप से। उसके पास बहुत रत्न थे। वह रात्रि में एक सराय में ठहरा। घोड़ा अपना दे दिया सराय के व्यवस्थापक को। इसको रात में दाना पानी खिलाओ प्रात:काल मैं यहाँ से जाऊँगा। सराय के व्यवस्थापक ने घोड़े की अच्छी व्यवस्था कर दी और उस सेठ की व्यवस्था भी कर दी। उसी सराय में कोई दूसरा व्यक्ति भी आकर के ठहरा। उसके बाद एक तीसरा व्यक्ति और आ गया वह भी वहाँ आकर ठहरा। तीनों व्यक्ति ठहरे। रात्रि में जो दूसरा व्यक्ति आया था। वह सेठ का पीछा कर रहा था रात्रि में सेठ के कमरे में जाता है सेठ सो रहा था। उस व्यक्ति ने कटारी निकाली और सेठ का गला काट दिया। उसका जो धन, उसका

रत्नों से भरा हुआ थैला पोटली लेकर के चम्पत हो जाता है और करता क्या है वह जो खून से भरी कटारी थी उसे जो तीसरा व्यक्ति आया था उसके बैग में छिपाकर के रख आता है और चला जाता है।

प्रात:काल सराय का मालिक आया कि सेठ जी ने कहा था मैं सुबह जल्दी जाऊँगा घोड़ा तैयार है उनका। कहाँ हैं सेठ जी उनके कमरे में गया दंग रह गया। वहाँ तो पूरा खून पड़ा हुआ है। देखा क्या हुआ। सराय में तो केवल दो व्यक्ति ठहरे हैं। जो तीसरा व्यक्ति बीच में आया था वह सराय के व्यवस्थापक को मालूम नहीं कब आया कैसे आया। हुआ क्या बाद में खोजबीन हुई सराय के मालिक ने कहा दो व्यक्ति ठहरे थे-एक सेठ और एक व्यक्ति और। देखो खोज बीन करो। वो व्यक्ति तो निश्‍ंचित था, उसको जगाया। बोले जग नाटक करता है। उसने छानबीन की और खून से सनी हुई कटार उसके बैग में से निकली। राजा के पास केस पहुँचा और उसे कारागृह में डाल दिया गया। व्यक्ति सोचता है कि मैंने हत्या नहीं की फिर भी मुझे जीवन भर कारावास की सजा क्यों। हत्या तो मैंने की नहीं और जिसने हत्या की है वास्तव में वह तो भाग गया मैं सजा भोग रहा हूँ। कुछ समय बाद जो सजा भोग रहा था जेल में उसकी दाड़ी सफेद हो गई, बाल सफेद हो गए बूढ़ा हो गया। उसके उपरांत एक कैदी उसी कारागार में आया और कैदियों से पूछने लगा तुम कब से हो यहाँ पर। फिर उस बूढ़े बाबा से पूछता है तुम बताओ तुमने क्या किया। बोले बेटा मैंने तो जीवन में कुछ नहीं किया। नहीं बाबा ऐसा हो नहीं सकता। झूठ बोलने से क्या तुम्हारी सजा पूरी होने वाली है। जिदंगी पूरी होने को है। कम-से-कम झूठ तो मत बोलो। बताओ क्या किया तुमने।

बेटा सत्यता तो यही है। फलाने जगह की सराय में मैं ठहरा हुआ था। वहाँ कोई एक सेठ भी ठहरा हुआ था और सेठ का किसी ने

कत्ल किया। रत्नों की पोटरी लेकर के चम्पत हो गया और मेरे बैग में वह खून से सनी कटारी रख करके चला गया और मैं पकड़ा गया। अब मुझे यहाँ सजा भोगनी पड़ रही है। अच्छा अब तू बता तूने क्या किया? उसने कहा, ''मैंने तो कुछ नहीं किया। राजा का घोड़ा चोरी चला गया और मैं वृक्ष के नीचे बैठा था मुझे नींद आ गई, सो गया। राजा ने घोषणा करवा दी जिसने घोड़ा लिया हो, देखा हो तो वह यहाँ पर भिजवा दे, नहीं तो उसे मृत्युदण्ड दिया जायेगा। कोई व्यक्ति आकर के उसी वृक्ष से घोड़ा बांध गया जंगल में कोई नहीं था। राजा के कर्मचारी आये उन्होंने मुझे पकड़ लिया घोड़े सहित और राजा ने मुझे दण्ड दिया। मृत्यु दण्ड तो नहीं दिया किंतु आजीवन कारावास दिया। पर वास्तव में ईमानदारी ये है कि मैंने घोड़ा चोरी किया ही नहीं तो और क्या किया तुमने। किंतु हाँ ये बात अवश्य है कि उस सराय में जो हत्या की थी वो मैंने की थी। उस समय तो मैं नहीं पकड़ा गया किंतु आज घोड़े की चोरी नहीं की तब भी पकड़ा गया। उस हत्या का फल यहाँ मिला। वो बूढ़ा बाबा कहता है मैंने हत्या नहीं की थी। आज नहीं की। जैसे तूने घोड़ा चोरी नहीं किया फिर भी तुझे दण्ड मिला। ऐसे मैंने भी पहले किसी की हत्या की होगी। उसका परिणाम मैं वहाँ तो नहीं भोग पाया। इस भव में भोग रहा हूँ।

महानुभाव ! सत्यता जीवन की यही है कि देर सवेर हो सकती है किंतु अंधेर नहीं है। व्यक्ति जैसा भी करता है उसका फल वह नियम से भोगता ही भोगता है। अत: प्रत्येक व्यक्ति को घटनाक्रम के पीछे अपनी गलती खोज लेना चाहिए। क्योंकि आज नहीं तो पूर्व में परंतु गलती तो उससे हुई है।

हे भगवन् ! मुझसे पाप न हो

महानुभाव ! मैं समझता हूँ शायद आपकी समझ में ये बात अवश्य आई होगी कि ''बिना पाप के अपराधी कैसे?'' समझ में

आता होगा कि बिना पाप के तो कोई अपराधी होता ही नहीं। हमने हिंसा की बात की परंतु प्राय: करके झूठ भी कितना जीवन में बोलते हैं। कई बार तो व्यक्ति मजाक में झूठ बोलता जा रहा है। जिसमें कोई तथ्य नहीं। वस्तु की चोरी की हो या नहीं की हो किंतु भावों की चोरी बहुत की है। कर्तव्य की चोरी बहुत की है। चाहे शरीर से कुशील सेवन किया हो या न किया हो। मन से कितनी बार कुशील सेवन किया अपनी आत्मा में झाँककर के देखो। परिग्रह का संचय चाहे परिग्रह आपको मिला हो या न मिला हो किंतु परिग्रह की भावना कितनी भाई है। भिखारी भी बहुत परिग्रहवान् हो सकता है और चक्रवर्ती भी अल्प परिग्रही हो सकता है क्योंकि परिग्रह तो परिणामों से चलता है। मूर्च्छा परिग्रह है जिसकी जितनी तीव्र लालसा है। उतना पाप का आश्रव बंध होता है।

महानुभाव ! शरीर से पापों के साथ-साथ वचन से भी कितने पाप होते हैं, मन से कितने पाप होते हैं। यदि ईमानदारी से 1 घंटे में हुए पापों को तुम लिख लोगे तो घबरा जाओगे। मन से 85 प्रतिशत आश्रव होता है। वचन से 12 प्रतिशत और शरीर से मात्र 3 प्रतिशत का आश्रव होता है। तो मन कितने पाप करता है। ये सरकार तो केवल अपराध की सजा दे सकती है। शरीर से जो तुमने पाप किया है, अपराध कहलाता है। सजा भी तब मिलती है जब वह प्रमाणित हो जाए अन्यथा और सभी पाप कहलाते हैं जो मन से किए, वचन से किए, शरीर से किए हैं। जिसे कोई नहीं जानता है, किंतु आपकी आत्मा जानती है परमात्मा जानता है। खुद और खुदा जिसे जानता है वह सब पाप है। जिसे सरकार भी जानती हो शासन भी जानता हो जिसका कोई प्रमाण हो वह सब अपराध है आपकी न्याय पालिका तो केवल अपराध की सजा दे सकती है। पाप की सजा नहीं दे सकती। वो तो कर्म ही देते हैं।

तो महानुभाव ! जीवन में पापों से बचने का प्रयास करें। अपनी साक्षी में सुबह और शाम आँख बंद करके केवल एक मिनट के लिए अपने प्रभु परमात्मा से कहो हे भगवान् ! मुझसे आज पाप नहीं हो। मुझसे आज पाप नहीं कराना भगवान मैं आपके चरणों में रोकर के ये ही माँगता हूँ यदि मेरे मन से वचन से काय से पुण्य नहीं करा सको तो कम से कम पाप नहीं कराना मेरी बुद्धि ठीक कर देना जिससे मैं पाप नहीं करूँ। मेरे वचन पुण्य के हित में निकलें। पाप के कार्य में मेरे वचन न निकलें। मेरे शरीर से पुण्य की क्रिया हो जाए हे भगवान् ! पाप की क्रिया न हो। मेरे निमित्त से किसी प्राणी की रक्षा तो हो जाए परन्तु मेरे निमित्त से किसी प्राणी की हत्या न हो। हे भगवान् ! मैं पाप से बच जाऊँ। इस प्रकार सुबह शाम केवल 1-1 मिनट आँख बंद करके प्रभु-परमात्मा के सामने ध्यान लगाकर के उनके चरणों में कहते रहोगे तो मुझे विश्वास है आज नहीं तो कल तुम पाप से बच जाओगे और जो व्यक्ति पाप से बच जाता है वह पुण्य के फल को पाने में समर्थ हो जाता है। आपने ये बातें बड़े ध्यान से सुनीं। केवल सुनीं ही नहीं मुझे विश्वास है गुनोगे भी। अब प्रयास करना है जिन पापों से बच सकता हूँ उनसे बचने का प्रयास करूँगा और जिन पापों से नहीं बच पा रहा तो भगवान से प्रार्थना करूँगा कि हे भगवान् मुझे ऐसी शक्ति दे दो जिससे मेरे हाथों से कुछ पुण्य का काम हो जाये। ऐसी भावना भाने से हो सकता है आपके हाथ से बड़े-बड़े पुण्य के कार्य हो जायें।

सहज पके सो मीठो होए

संसार में जितने भी प्राणी हैं उन सभी प्राणियों में सिर्फ दो प्रकार का परिणमन होता है। जिस द्रव्य में भी संसार में परिणमन हो रहा है वह सिर्फ दो प्रकार का हो सकता है एक स्वाभाविक दूसरा वैभाविक। एक प्राकृतिक रूप में एक विकृत रूप में, एक सहज एक बनावट से युक्त। हर द्रव्य का स्वभाव परिणमन करना होता है। यदि पानी गतिशील है तो उसकी दो गति होती हैं या तो पानी नीचे की ओर जा सकता है या ऊपर की ओर जो ठहरा हुआ पानी है संभव है कहीं न जाए। कोई व्यक्ति सीढ़ियों पर है तो उसकी दो क्रिया हो सकती हैं या तो चढ़ सकता है ऊपर की ओर या उतर सकता है नीचे की ओर। यदि गमन कर रहा है तो-दो उसकी गति होंगी। यदि ठहरा हुआ तो वह एक सीढ़ी पर बैठ भी सकता है।

अप्प दीवो भव

महानुभाव ! दो प्रकार की दशाएँ प्रत्येक द्रव्य की, प्रत्येक प्राणी की, प्रत्येक जीव की होती हैं। संसार का कोई भी प्राणी पतन की ओर जाना नहीं चाहता। संसार का कोई भी प्राणी गिरना नहीं चाहता। संसार का कोई भी प्राणी विभाव में डूबना नहीं चाहता। संसार का कोई भी प्राणी दु:ख, अज्ञानता, अदर्शन, मूर्खता इत्यादि वैभाविक परिणामों को प्राप्त करना नहीं चाहता। संसार का हर प्राणी सुख चाहता है, शांति चाहता है, अनंतज्ञान चाहता है। कोई भी प्राणी ऐसा नहीं है पूरे संसार में देख लेना जो प्राणी अनंत दु:ख चाहता हो, जो प्राणी अनंत अशांति चाहता हो, जो प्राणी अनंत अज्ञानता चाहता हो, जो प्राणी अनंत दौर्बल्य चाहता हो, जो प्राणी अनंत अन्य वैभाविक गुणों को चाहता हो। जैसे संसार में सभी प्राणियों का भाव रहता है कि वे प्रकाश में जिए। प्रकाश में जीना उसका स्वभाव है। चेतना में भी

दिव्य आलोक होता है कोई भी चेतना अंधकार में भटकना नहीं चाहती। किसी भी चेतना का अंधकार में भटकना स्वभाव नहीं है। प्रत्येक चेतना प्रकाश में रहना चाहती है प्रत्येक चेतना अपने आपको स्वयं दीपक बनाकर के रहना चाहती है। भगवान महावीर स्वामी ने कहा ''अप्प दीवो भव'' अपनी आत्मा को दीपक बनाओ। बाहर के दीपक आत्मा में विद्यमान वैभव को नहीं दिखा सकेंगे। घर का दीपक घर की वस्तु को दिखा सकता है। घर के बाहर रखे हुए दीपक से घर की वस्तुएँ नहीं देखी जा सकतीं। घर में घर का दीपक जलाना होता है। बाहर जलने वाली ट्यूब लाईट स्ट्रीट लाईट जो बाहर लगी हुई है उसके प्रकाश में घर में रखी वस्तुएँ नहीं खोजी जा सकतीं। घर में छोटा सही, टिमटिमाता सही घर का दीपक ही होना चाहिए क्योंकि बाहर का दीपक कभी घर नहीं आ सकता। बिजली के खम्बे को उखाड़ कर के घर नहीं ले आओगे और घर का दीपक ऐसा है जो घर के वैभव को भी दिखाता है और देहरी पर रख दें तो बाहर का वैभव भी दिखाता है।

अपनी आत्मा को दीपक बनाओ। जिस व्यक्ति ने अपनी आत्मा को दीपक बनाया है उस महापुरुष ने, परमपुरुष ने, परमात्मा ने, सर्वज्ञ ने अपनी आत्मा के समग्र वैभव को जान लिया देख लिया, प्राप्त कर लिया और संसार के प्राणियों के लिए भी उसका वैभव दिखाने में समर्थ हो गए चाहे भगवान ऋषभदेव स्वामी चाहे कोई भी भगवान क्यों न हो जिस किसी परमात्मा ने परमपुरुष ने अपनी आत्मा को दीपक बना लिया जो बाहर के दीपक के प्रकाश में नहीं चला खुद की आत्मा को दीपक बनाकर के खुद मोमबत्ती बन करके जला है स्वयं मार्ग में चला है तो उसे मंजिल की प्राप्ति हुई है और वही फिर ऐसा फला है उसके फल उन महापुरुष के मोक्ष जाने पर संसार आज उनका नाम लेकर के मिष्ट फल खा रहे हैं। उनका नाम लेने मात्र से

पापों का नाश हो जाता है। उनका नाम लेने मात्र से चित्त को शांति की प्राप्ति होती है। उनका नाम लेने मात्र से व्यक्ति के मन में वह कामना भावना जाग्रत होती है कि मेरा रास्ता भी यही है मुझे भी इसी मार्ग पर चलना चाहिए।

वातावरण का प्रभाव

यदि महान पुरुषों की संगति न की जाए, यदि महापुरुषों के वचन चित्त में धारण न किए जाएँ यदि महापुरुषों का चिंतन न किया जाए तो संसार का कोई भी व्यक्ति महापुरुष नहीं बन सकता। महापुरुष बनने की प्रेरणा महापुरुष की दिव्य छवि देती है, महापुरुष बनने की प्रेरणा महापुरुष का दिव्य संदेश देता है। महापुरुष बनने की प्रेरणा महापुरुष के बारे में किया गया सद्चिंतन देता है अन्यथा दुष्टों के बीच में रहकर के शिष्ट रह पाना बड़ा कठिन है। जो व्यक्ति धूप में बैठा हुआ है उस व्यक्ति के शरीर का शीतल होना बड़ा कठिन है और जो व्यक्ति किसी आईसक्रीम की फैक्ट्री के पास बैठा है या किसी नदी के किनारे पर बैठा है, किसी वृक्ष की शीतल छाया में बैठा है उसका शरीर अपने आप ही शीतल होता चला जाता है। जैसा बाहर का वातावरण होता है अपने अंदर का वातावरण भी शनै:-शनै: वैसा बदलता चला जाता है। बाहर के वातावरण पर हमारे अंदर का वातावरण बहुत कुछ आधारित है। ऐसा नहीं है कि बाहर का वातावरण हमारे विपरीत हो और अपने अंदर के वातावरण को संभाल लें।

संसार के मध्यम वर्गीय जितने भी जीव हैं, जो उत्कृष्ट नहीं हैं और बिल्कुल जघन्य नहीं हैं उन सभी पर निमित्तों का प्रभाव पड़ता है। किंतु जो सबसे ज्यादा उत्कृष्ट हो गए उसके ऊपर निमित्त का प्रभाव नहीं पड़ता और जो सबसे निकृष्ट हैं उन पर भी निमित्त का प्रभाव नहीं पड़ता। किंतु मध्यम सोच रखने वाले हर व्यक्ति पर

निमित्त का प्रभाव पड़ता है। जैसे जो प्रभु परमात्मा बन गए उनके पास दुष्ट पहुँच जाएँ कितने भी दुष्ट पहुँच जाएँ तो प्रभु परमात्मा की भगवत्ता नष्ट नहीं हो जाएगी, प्रभु परमात्मा में दुष्टपना नहीं आ जाएगा और कोई बहुत ज्यादा दुष्ट है उसकी संगति में कोई भला आदमी पहुँच जाए तो दुष्टों की मंडली में पहुँच करके कोई भला आदमी भी दुष्ट हो जाता है। यदि 10 व्यक्ति शराब पीने वाले हैं एक भला आदमी उसकी संगति में आ गया धीरे-धीरे वह भी शराब पीना सीख जाएगा। यदि 10 व्यक्ति जूआ खेलने वाले हैं उससे मित्रता कर ली तो आज नहीं तो कल मन में जूआ खेलने का भाव आ जाएगा। सामान्य व्यक्ति उन व्यक्तियों को नहीं सुधार सकता। सामान्य व्यक्ति की पॉवर कम है और जो विशेष व्यक्ति है उसकी पॉवर अधिक है। इसलिए वो तो सुधर सकता है। एक महात्मा अपनी विशुद्ध वर्गणाओं से 50 व्यक्तियों को सुधार सकता है। 50 व्यक्तियों की ऊर्जा शक्ति कमजोर है इसलिए महात्मा को बिगाड़ नहीं सकते हैं। तो महानुभाव, कहने का अभिप्राय ये है कि व्यक्ति प्राय: करके वातावरण से प्रभावित होता है। जो जैसे वातावरण में रहता है उसमें उस प्रकार के परिणाम भी होते हैं।

जो व्यक्ति नदी किनारे रहता है उसके मन में नदी किनारे की छवि बस जाती है। जो व्यक्ति जंगल में रहता है उसे जंगल के वृक्षों की जानकारी होती है। जंगल में चलना, पेड़ों पर चढ़ना, दौड़ना, उछलना, कूदना उसका प्रकृति के साथ सामंजस्य हो जाता है। नदी किनारे बैठने वाला व्यक्ति नदी की आवाज बता देता है कि नदी इस समय हँस रही है या विकृत रूप धारण करके रो रही है इस कलकल ध्वनि में अनेक प्रकार के रस होते हैं। जो नहीं जानता है वह कहता है कलकल की ध्वनि आ रही है। किन्तु कलकल ध्वनि में भी अलग रस है। कभी वह शांत रस में भी रहती है कभी रौद्र रूप भी धारण करती है कभी वह घृणा की दृष्टि से भी देखती है।

तो ये सब बातें वही जान सकता है जिसने नदी किनारे रह करके नदी का अनुभव किया हो। नदी की पीड़ा को समझा हो, नदी के सुख में शरीक हुआ हो। जो पक्षियों के बीच में रहता है वह पक्षियों की मनोभावना समझ जाता है। पक्षी उसके पास आ जाते हैं और कोई दुष्ट व्यक्ति हो तो पक्षी देखकर के भाग जाते हैं। जो ग्वाल पशुओं को चलाता है पशुओं को बुलाता है तो पशु पास में आ जाते है और जब डांटता है तो पशु भी चला जाता है। क्यों? उनके बीच में रहकर के उनके भाव और भाषा को वह सीख रहा है, समझ रहा है और पशु पक्षी भी उसकी भाषा को भावना को समझ जाते हैं। तो जो व्यक्ति जैसे माहौल में रहता है उस प्रकार का अंदर का माहौल बनने लगता है। बाहर के माहौल से मध्यम विचार वाले व्यक्ति के अंदर का माहौल बदल जाता है। जैसे घी की कटोरी धूप में रख दी जाए, धूप को देखकर के वह कटोरी में रखा हुआ घी या डिब्बे में रखा हुआ घी अंदर से पिघलने लगता है क्यों? क्योंकि उसके अंदर पिघलने की शक्ति है। वही घी का डिब्बा यदि बर्फ की सिल्ली पर रख दिया जाए तो पिघला हुआ घी पुन: जम जाता है। बाहर के माहौल से उसके अंदर का माहौल बदल गया। किंतु पत्थर को धूप में रख दें तो पिघलेगा नहीं। पत्थर को बर्फ पर रख दिया जाए तो असर नहीं होगा हाँ असर होगा इतना असर होगा धूप में रखा हुआ पत्थर गर्म हो गया और पुन: यदि बर्फ के ऊपर रखा है तो पत्थर जमेगा भी नहीं किन्तु पत्थर ठण्डा अवश्य हो जाएगा।

गुण, गुणी से दूर नहीं

महानुभाव ! तो व्यक्ति के जीवन में दो प्रकार का परिणमन है एक विकृत और दूसरा प्राकृत। विकृत परिणमन ज्यादा देर तक नहीं ठहरता। व्यक्ति को आज नहीं तो कल, सुबह नहीं तो शाम, इस भव में नहीं तो अगले भव में, उसे प्राकृत रूप में आना ही पड़ता है।

संसार का ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है जो सदा सर्वदा विकृत रूप में जी सके। जैसे जल का स्वभाव शीतलता है उसका प्राकृत रूप शीतलता है वह जल शीतल ही रहेगा, ठंडा ही रहेगा यदि गर्म करना है तो अग्नि का संयोग आवश्यक है अग्नि के संयोग से जल गर्म हो गया किंतु गर्म हमेशा रहेगा नहीं। अग्नि का संयोग यदि वियोग को प्राप्त हो जाए तो वह जल पुनः ठण्डा हो जायेगा। यहाँ तक की अग्नि के संयोग में रखा हुआ जल चाहे कितना ही गर्म हो जाए उबलने लगे फिर भी जल ने अपनी शीतलता नहीं छोड़ी। आप कहेंगे महाराज जी उबलते जल में शीतलता कहाँ, उसमें यदि हाथ भी डाल दिया जाए तो वह जल जाए फोला आ जाए यदि उसकी एक बूंद उछलकर शरीर पर पड़ जाए तो फोला आ जाए और आप कहते हैं कि उबलते जल में भी शीतलता है। है तो सही। कैसे है? यदि उबलते जल को भी अग्नि के ऊपर डाल दिया जाए तो क्या होगा अग्नि बढ़ेगी की बुझ जाएगी। यदि जल में शीतलता नहीं थी तो अग्नि को बुझा कैसे दिया। कहीं न कहीं शीतलता तो थी।

अग्नि चाहे कितनी भी बड़ी ज्वाला का रूप ले ले चाहे अग्नि की चिंगारी उसमें गर्मी है जलाने का गुण है। एक छोटी सी माचिस की तिल्ली से पूरा का पूरा जंगल जलाया जा सकता है। दो बाँसों की रगड़ से चिंगारी पैदा हो जाए तो पूरे के पूरे जंगल स्वाहा हो सकते हैं। चाहे चिंगारी छोटी-सी है किंतु रूई के पूरे ढेर को जलाने में समर्थ है। उसका गुण नष्ट नहीं हो गया। बहुत बड़ा अंगारा था और उस पर अग्नि है उस अग्नि को राख नहीं कह सकते। राख-राख है अग्नि-अग्नि है। हवा चली राख उड़ गई परन्तु चिंगारी अभी जलाने में समर्थ है। तो गुण उसने अपना छोड़ा नहीं है। ऐसे ही हमारी आत्मा का गुण है ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य, शांति, अमन, चैन। दूसरों को सुख देना, दूसरों को कष्ट देना हमारी आत्मा का गुण नहीं है। चोरी करना,

कुशील सेवन करना, परिग्रह का संचय करना, बेईमानी छल कपट करना, क्रोध, मान, मायाचारी, लोभ करना हमारी आत्मा का गुण नहीं है। ये सभी आत्मा के दुर्गुण विभाव हैं।

महानुभाव ! शांति के साथ यावज्जीवन जी सकता है क्रोध में व्यक्ति ज्यादा जी नहीं सकता। 48 मिनट का क्रोध भी कर लेगा तो वह पागल हो जाएगा। कोई न कोई नस भ्रष्ट हो जाएगी। क्रोध में व्यक्ति क्षण भर रह सकता है और शांति में जीवन भर रह सकता है। व्यक्ति जीवन में झूठ 24 घंटे में से 24 घंटे नहीं बोल सकता। घंटे-दो-घंटे झूठ बोल सकता है। मायाचारी जीवन भर नहीं कर सकता। कितना भी मायाचारी करने वाला हो किंतु कभी ना कभी तो सत्य बोलेगा ही जब भी शांति से बैठेगा उसके परिणाम सरल और सहज हो जाएँगे। व्यक्ति हमेशा लोभ की अग्नि में नहीं जल सकता कभी-कभी शांति से बैठता है तो संतोष की सांस भी लेता है। फिर उसके मन से निकलता है भगवान मेरे भाग्य में जो कुछ है मुझे प्राप्त हो गया। जो मेरे भाग्य में नहीं है उसे मुझे कौन दे सकता है।

पुण्यात्मा ही भोक्ता होता है

जो मेरे भाग्य में है तो वह वस्तु यदि सात समुद्र पार भी हो, तो वहाँ से चलकर मेरे पास आ जाएगी। चाहे देवों के पास हो तो चाहे पताल में रहने वाले धरणेन्द्र के पास हो वहाँ से वह मेरे पास आ जाएगी। जो मेरी वस्तु है मेरे भाग्य की है मेरे पुण्य की है उसे कोई छीन नहीं सकता। जो मेरी नहीं है उसे तुम प्राप्त भले ही कर लो किंतु जीवन में भोग नहीं सकते। व्यक्ति जीवन में कुछ नहीं कमाता है किंतु भोगने के लिए उसे बहुत सारा मिलता है। उसका पुण्य है। एक मुख्य अतिथि आपके यहाँ पर आया जो वस्तु आपके घर में रखी है उसे आपने खाई नहीं उसे अतिथि के लिए खिला दी। पुण्यात्मा अतिथि था वस्तु तो उसके भाग्य की थी। चाहे भले ही कितने समय से रखी हो वह भोग ही नहीं सकता जिसका पुण्य है वह ही भोगेगा।

वस्तु की रखवाली कोई भी करे किंतु भोग पुण्यात्मा ही करेगा। किसान ने खेत की खेती करके फसल उगाई फल, सब्जी उगाई, अनाज पैदा किया, जो उसके भाग्य का है उतना वह भोगेगा बाकी उसके पास पहुँच जाएगी भोगने का पुण्य जिसके पास है। कई वस्तुएँ जीवन में नई-नई आती हैं किंतु जो उस वस्तु का निर्माता है उसका मालिक है वह वस्तु को भोग नहीं पाता। हो सकता है भोगने वाला कोई दूसरा हो। करने वाला कोई है भोगने वाला कोई और है। यदि कर्ता का पुण्य होता है तो निःसंदेह वह भोगता ही भोगता है और कर्ता का पुण्य नहीं होता है तो कर्ता कोई और होता है भोक्ता कोई और होता है।

सहजता या बनावट

महानुभाव ! प्राकृत रूप में व्यक्ति यावज्जीवन रह सकता है। विकृत रूप में नहीं रह सकता। सहजता के मायने है स ह ज-'स' कहता है जीवन में सरलता, सरसता, समरसता, समन्वयता, संतोष, समता और साहस ये 'स' अक्षर कह रहा है। 'ह' अक्षर कह रहा है हर्ष, हरियाली और 'ज' अक्षर कहता है जीवन में जय। जिसके पास सहजता है उसके पास सरलता है, जिसके पास सहजता है वह सलिल की तरह से सब जगह स्थान पाने में समर्थ है। जिसके पास सहजता है उसके पास हर्ष ही हर्ष है और जिसके पास सहजता है वह सहजता जय देने वाली होती है और सहजता संसार से तारने वाली होती है। ''सहज पके सो मीठा होए''। मीठा कौन सा होता है। संसार में दो प्रकार की दशा होती है। पहले तो पके शब्द को समझ लें। पकना किसे कहते हैं? पकना मतलब पूर्णता। जिस वस्तु की जो अवधि है उसके बाद ही वह प्राप्त करे तो वह सहजता में प्राप्त होती है और यदि हम सहजता में नहीं रहते हैं धैर्य से काम नहीं लेते हैं उतावले बन जाते हैं तब वस्तु का सही उपयोग हम कर नहीं पाते हैं।

यदि खीर 15 मिनट में बनती है और तुमने 10 मिनट में जल्दी से खीर बनाने का प्रयास किया आधे चावल जल जाएँगे और ऊपर के चावल कच्चे रह जाएँगे। सही खीर न बन पायेगी। यदि आपने फिर उसे जल्दी खाने का प्रयास किया तो हाथ जल जाएगा और यदि आपने जल्दी फ्रीजर में रख करके ठण्डी भी की तो वह रोग का कारण बन जाएगी। गर्म को तुरंत ठण्डा किया जाएगा तो वह स्वास्थ्य के लिए बहुत घातक हो जायेगा इसलिए सहजता में सब चीज भली लगती है।

पकना दो प्रकार का होता है एक सहज पकना और एक कृत्रिमरूप से पकाना। पकी वस्तु अच्छी होती है कच्ची वस्तु अच्छी नहीं होती विकार पैदा करने वाली होती है। रोटी आप कच्ची खाओगे तो पेट में जाकर के आटा चिपक जाएगा। आँतें खराब हो जाएँगी। यदि पूरी सिकी हुई रोटी है तब निःसंदेह आपके लिए हानिकारक नहीं होगी। कोई भी भोजन अपक्व है तो 'अजीर्णे विषं' तो वह अपक्व भोजन विष के समान है। और वह पूरा पका हुआ है तो आपके लिए स्वास्थ्य वर्धक है, आरोग्य वर्धक है, आपको दीर्घ जीवन देने वाला है और यदि जल गया सहज पका रहे हैं और ज्यादा ही पका लिया तो वह सड़ जाएगा। पेड़ पर लगे हुए फल प्रायः करके सड़ते नहीं हैं और टूट गया फिर आपने ताजी फल को नहीं खाया, 2-4 दिन के लिए घर में रख दिया तो जल्दी सड़ जाएगा। पेड़ पर लगा हुआ फल जल्दी सहजता में पकेगा धूप और लू को सहन करते हुए फल पकेगा उसमें मिठास आएगी। जब तक उस फल को धूप नहीं लगे, जब तक उस फल को लू नहीं लगे तब तक मिठास नहीं आती है शक्ति नहीं आती है।

जीओ प्रकृति के साथ

तुम किसी आम के फल को पाल में लगा करके पका तो सकते हो उसका आम का छिलका पीला पड़ जाएगा और खट्टेपन में थोड़ा

सा अंतर आ जाएगा मिठास भी थोड़ी आ सकती है किंतु जो मिठास पेड़ पर लगे हुए आम में है वह मिठास उसमें नहीं आ सकती। और दूसरी बात यह है हर फल को पाल में पका नहीं सकते। कोई 2-4 प्रकार के फल ऐसे हैं जिन्हें पकाया जा सकता है अन्यथा सब फल प्राय:कर के वृक्ष पर ही पकते हैं तभी मिठास आती है। यदि किसी फल को आपने लगा दिया पाल में। पाल में लगा करके गर्मी तो आप दे दो किंतु सहजता में नहीं पकेगा, विकृति में पकेगा। तो महानुभाव, सहज पका हुआ चाहे केला है सेब है, अनार है, आम है, अंगूर है कोई भी है जो सहजता में पका है उसका स्वाद अलग ही होता है। जो विकृति से पकाया गया है उसमें स्वाद आ ही नहीं सकता। एक सहज रूप है, एक बनावटी रूप है। तुम्हारे चेहरे की जो सहज मुस्कुराहट है जो सहज अंतरंग से आनंद आ रहा है नाभि से फूट रहा है उस मुस्कुराहट, आनंद और आपकी हँसी की फोटो लिया जाए विडियो बनाया जाए और आपसे कहा मुस्कराइये-फोटो वाला बार-बार कहता है मुस्कराइये आप कहते हो कितना मुस्कराएँ जल्दी खींच। मेरा तो मुंह दर्द करने लगा गाल दर्द कर गए कहाँ तक मुस्कराऊँ मैं। उसको झुंझलाहट आ जाएगी। दोनों का मिलान करें सहज मुस्कराहट का फोटो सुंदर होगा।

व्यक्ति प्रकृति के साथ जिये, नेचुरल रहे, सहज रहे। सहज पके सो मीठे होए। जो सहज नहीं पकता है वह तो झेलना पड़ता है। क्योंकि सहज पकाने के लिए धैर्य चाहिए तभी सहजता से वस्तु उपलब्ध हो सकती है। जो अधीर हो जाते हैं वह सहजता का फल नहीं ले सकते। आप रसोई बनाते हैं तो चाहते हैं जल्दी बन जाए। बस ऐसी मशीन आ जाए आटा गूंथना नहीं पड़े। पहले आटे को गूंथा जाता था आटे को गूंथ करके पानी भर कर रख दिया जिससे आटे की गर्मी निकल जाती थी आटे में लोंच आ जाती थी। खींचने से रबड़ सा

खिंचता था उस आटे की रोटी बनती थी मोटी-मोटी रोटी। मध्यम अग्नि में सिक रही हैं फूल कर बनती थीं और फिर घी डाल दिया और 2 रोटी खाकर के शाम तक उसकी क्षुधा नष्ट हो जाती। वह रोग को नष्ट करने वाली होती थी किंतु अब सोचते हैं आटा भी कौन गूंथे कोई मशीन आ जाए सूखा आटा डाल दें पानी डाल दें निकल करके लोई भी न बनानी पड़े रोटी सिककर स्वयं बाहर आ जाए।

भगवान् कम से कम भोजन चबाने की मशीन न आ जाए नहीं तो तुम दाँत निकलवा दोगे और यदि पचाने की मशीन आ गई तो वेट कम करने के चक्कर में आँत निकलवा दोगे। इसलिए भगवान से प्रार्थना है कि अब आगे कहीं रोटी चबाने की या पचाने की मशीन न आ जाए, ये बड़ा खतरा है वैज्ञानिक आगे बढ़ते जाएंगे भौतिक विकास इतना होता जाएगा आध्यात्मिक विद्या नष्ट होती चली जाएगी, व्यक्ति का प्राकृत रूप सहज रूप नष्ट होता चला जाएगा।

सब्जी यदि लोहे की कड़ाही में आप बनाएँ उस लोहे की कड़ाही में बनाने में भाप पिघल रही है और लोह तत्त्व भी जा रहा है। कूकर में तो ऐसा है किसी सब्जी को उबाल लिया हो उसमें क्या है उसकी भाप नहीं निकल पाती। जितने भी बैक्टीरिया हैं चाहे घातक हैं चाहे रोग रोधक क्षमता को बढ़ाने वाले हैं सब उसमें ही कैद होते चले गए। तो वह सब्जी लाभदायक कैसे हो सकती है? इसलिए भारतीय संस्कृति में जमीकंद को भक्ष्य नहीं बताया क्योंकि वहाँ पर मिश्र प्रकृति हो जाती है वह स्वास्थ्य के लिए घातक हो जाता है।

भोजनः अंदर बैठे परमात्मा को समर्पित अर्घ

मैं क्षत्रिय हूँ इसलिए प्याज नहीं खाऊँगा, आलू नहीं खाऊँगा, शलगम, गाजर, मूली नहीं खाऊँगा। ये पहले क्षत्रिय के कर्त्तव्य रहे। अब तो व्यक्ति ने इसको कचरा खाना बना लिया है जो है सब डालते जाओ। पहले ऐसे मानते थे कि प्रभु परमात्मा की वेदी है मेरे अंदर भी

आत्मा बैठा है जो परमात्मा है, मैं भगवान की वेदी के सामने अभक्ष्य पदार्थ नहीं चढ़ा सकता। शुद्ध घी जल चढ़ाऊँगा, फूल, फल, पत्ती चढ़ाऊँगा, मुट्ठी भर चावल चढ़ाऊँगा। गंदी चीज कोई भी अपने परमात्मा को नहीं चढ़ाता। यहाँ तक कि कोई माँसाहारी भी होगा वह अपने प्रभु परमात्मा पर माँस नहीं चढ़ाता। वह भी शुद्ध चीज चढ़ाएगा, फल चढ़ाएगा, नारियल चढ़ाएगा, गोला चढ़ाएगा। यदि उस परमात्मा के सामने गंदी चीज नहीं चढ़ाते तो इस परमात्मा के सामने गंदी चीज क्यों चढ़ाते हो? यदि उसके (मंदिर में बैठे परमात्मा के) सामने चढ़ाओगे तो पाप लगेगा और इसके (अपने अंदर बैठे परमात्मा के) सामने चढ़ाओगे तो पुण्य लगेगा क्या? यहाँ भी तो पाप लगेगा वहाँ पाप लगे न लगे यहाँ तो महापाप लगेगा। तुम अपने प्रभु परमात्मा को धोखा दे रहे हो अपने ही प्रभु परमात्मा की तौहीन कर रहे हो अपमान कर रहे हो इसलिए आचार्यों ने लिखा है जीवन में वही वस्तु खानी चाहिए जो वस्तु सहज पके। सहज में जो बन रही है वो तुम्हारे लिए बहुत लाभदायक है। आयुर्वेदाचार्य से मिलिए वह कहेंगे सहज कच्ची वस्तु खाओ तो स्वास्थ्य ठीक रहेगा और यदि आप विकृत रूप खाओगे तो आप स्वस्थ रह नहीं पाओगे।

महानुभाव ! पहले रोटी बनाई जाती थी मिट्टी के तवे पर तो मिट्टी का अंश भी आता था, लवण आता था। लोहे की कड़ाही होती थी लोह तत्त्व भी आ गया पहले कांसे के बर्तन होते थे या सोने चांदी के बर्तन होते थे तो सोने चांदी का तत्त्व भी आ गया। सोने का पानी व्यक्ति पी ले तो झूठ नहीं बोल पायेगा व्यक्ति सोने जैसा हो जाए। किंतु आज तो लोहे के बर्तन लाकर रख दिए और लोहा सबसे निकृष्ट धातु है या एल्युमीनियम के बर्तन पहले आ गए थे और आप जानते हैं कहीं पानी में डाल दो, उसमें फफोले से आ जाते हैं। जब बर्तन में फफोले आ रहे हैं उसमें रखा भोजन खाने से क्या होगा पेट

में फफोले नहीं आयेंगे क्या। इसलिए ये धातु निकृष्ट है उनका उपयोग भोजन आदि में नहीं लेना चाहिए। पहले पूजा के बर्तन सब तांबे के होते थे या जो व्यक्ति श्रीमान् होता था तो बर्तन चांदी या सोने के होते थे किंतु लोहे के बर्तन कभी काम नहीं आते थे। कभी भी पीतल के बर्तन, कांसे के बर्तन पूजा के काम में नहीं आते थे। पहले व्यक्ति सोने के कलश से अभिषेक करता था चांदी के कलश से अभिषेक करता था अब चाहे मंदिर बना दिया 100 करोड़ या 50 करोड़ का। लोग लोहे के कलशों से अभिषेक कर रहे हैं। स्टील क्या है? लोहे का सुधरा रूप ही तो है और लोहा निकृष्ट धातु है। गंदा लोहा नियम से दरिद्रता लाता है और जो लोहा शुद्ध है वह लोह पुरुष बनाता है।

विकृति नहीं, प्रकृति

महानुभाव ! व्यक्ति विकृत को अच्छा मानता है। गुड़ स्वाभाविक है और चीनी विकृत रूप है तो स्वास्थ्य के लिए जितना लाभदायक गुड़ है चीनी उतनी ही हानिकारक है किंतु व्यक्ति सोचता है गुड़ भी खायेगा तो कौन सा खायेगा? पीला वाला खायेगा। काला वाला नहीं खायेगा। जितना काला खायेगा स्वास्थ्य उतना ही अच्छा रहेगा। किंतु व्यक्ति तो बाहरी चमक पर रीझता है गोरे व्यक्ति को देखकर के व्यक्ति रीझ जाता है और सामान्य व्यक्ति को देखकर के व्यक्ति इतना पसंद नहीं करता है। किंतु ध्यान रखना जितना श्याम वर्ण का व्यक्ति है उसका प्रेम जितना गहरा हो सकता है प्रकृति कहती है स्वर्ण जैसे चमकने वाले व्यक्ति का प्रेम उतना गहरा हो ही नहीं सकता। जितना समर्पण का भाव उस व्यक्ति में हो सकता है उतना समर्पण का भाव अन्य व्यक्ति में नहीं होता है। वह श्याम वर्ण गहराई का प्रतीक है। वह एक बार लीन हो गया तो धोखा नहीं देगा। किंतु स्वर्ण जैसा वर्ण वह चंचलता का प्रतीक है। खैर विषय चल रहा है

सहज पके सो मीठो होए। अपना जैन शास्त्र भी कहता है वैदिक परंपरा भी कहती है कि वृक्ष से फल तोड़ कर के खाना वृक्ष को कष्ट देना है। जब वृक्ष स्वयं ही अनावश्यक समझेगा फल पक जाएगा तोड़कर के तुम्हें भेंट कर देगा उसे तुम खाओगे तो तुम्हें बहुत मिठास आएगी।

जो व्यक्ति सहजता में नहीं जीता उसे धोखा उठाना पड़ता है। संघर्ष का सामना करना पड़ता है। प्रकृति ने बालक के लिए गर्भ अवस्था में 9 महीने दिए। गर्भ अवस्था में 9 महिने रहता है सहजता में होगा तो बालक निरोगी होगा और जन्म यदि किसी ने जल्दी करा दिया तो वह बालक हष्ट पुष्ट और निरोगी नहीं हो सकता। तो महानुभाव, जीवन के हर पहलू पर देखो सहजता। मिट्टी तपती है खेत में तपने वाली मिट्टी किसान तो जानते होंगे। जिसने चैत्र के महिने में फसल काट करके और चैत्र के महिने में जुताई कर दी उसका तो सब नष्ट हो गया। चैत्र, बैसाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ चार महिने मिट्टी तृप्त रही। लू आदि झेली है उस मिट्टी में उर्वरा शक्ति बढ़ गई। उसमें यदि जंगली जानवर और पशुओं ने मूत्र और गोबर किया है उसकी उर्वरा शक्ति बढ़ गई। जब मिट्टी में उर्वरा शक्ति आ गई तब उस खेत में पैदा हुई फसल का अनाज खाईये फल और सब्जी खाईये उसमें स्वाद आयेगा स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होगी। किंतु जिस खेत में आपने यूरिया या अन्य कृत्रिम पदार्थ डालकर के खेती की है फिर उस अनाज को खाना उस अनाज का स्वाद भूसा जैसा हो जाएगा। यदि आपने इंजेंक्शन लगाकर के लौकी शाम को छोटी थी उसमें इंजेक्शन लगा दिया सुबह इतनी बड़ी तो हो गई फूल गई किंतु उसका सत्व नष्ट हो गया। वह अब खाने के योग्य नहीं बची। उसकी जो शक्तियाँ थीं नष्ट हो गईं और बैक्टीरिया ऐसे आ गए जो स्वास्थ्य के लिए घातक हैं।

विकृति देती है विकार

जीवन में प्राय: करके बहुत सारे मनुष्य ऐसे होते हैं जो सहजता में जी नहीं पाते वह प्राय: करके विकृति में जीने के आदि हो जाते हैं यदि विकृति नहीं मिले तो बैचेन हो जाते हैं। उनका जीवन जीना मुश्किल हो जाता है। पहले व्यक्ति जब सहजता से जीता था जब तुम्हारे यहाँ लाईट नहीं थी उस समय व्यक्ति जीता था चैन से, पंखे नहीं थे कूलर नहीं थे ए.सी. नहीं थे पहले कोई कृत्रिम चीज नहीं थी। आपकी न कोई आटा चक्की थी न कोई और मशीनें थीं। पहले सहजता में कुएँ से पानी निकलता था व्यक्ति स्वस्थ रहता था। पहले अपने हाथ से आटा पीसा जाता था व्यक्ति स्वस्थ रहता था। आज सबकी मशीन आती जा रही है। पहले जितने भी काम करते थे सब अपने हाथ से करते थे इसलिए व्यक्ति स्वस्थ रहता था आज सब काम मशीन के आधार पर हो रहा है। इसलिए व्यक्ति मशीन के बीच में फंस गया है। बच्चे का जन्म होते ही सबसे पहले मशीन में रखते हैं क्योंकि मशीन से सब काम चल रहा है। पहले किसान घास खोदता था फसल काटता था बैलों के द्वारा अनाज को निकालता था सब काम हाथ से करता था स्वस्थ रहता था।

महिलाएँ घर की सफाई स्वयं करती थीं वह आटा भी पीसती थीं पानी भी खींच कर लाती थीं भोजन भी बनाती थीं अपने सब काम करती थीं तो हाथ के पॉइन्ट जितने भी थे सब दबते थे और एक्यूप्रेशर से वह स्वस्थ रहती थीं। जब वह कपड़े धोती थीं तो एक्सरसाईज उसमें अपने आप हो जाती थी। झाड़ू लगाने में एक्सरसाईज अपने आप हो गई। चटनी पीसने में एक्सरसाईज अपने आप हो गई। बेलन चला रहे हैं एक्सरसाईज अपने आप हो रही है। किंतु अब, अब तो सब मशीन से मसाले पिस रहे हैं। आटा पिस रहा है, मशीन में कपड़े धुल रहे हैं और सफाई के लिए अब झुकने की आवश्यकता

नहीं है बस अब तो काँच लगा दिए काँच चमक रहा है गंदा तो कुछ होता ही नहीं है हुआ तो बस एक वाइपर लगा ली पोछा लगा दिया। पहले कच्चे मकान रहते थे उसमें से जो ऊर्जा शक्ति आती थी अब पक्के मकानों में ऊर्जा शक्ति कहाँ है। वह तो शरीर की शक्ति को खींचने वाली है। जो पाषाण है वह शक्ति देने वाला नहीं खींचने वाला है।जो व्यक्ति मारबल पर बैठा है मारबल पर बैठने से वह अंदर की शक्ति को बांटने वाला है। ये टाईल्स भले ही आपको चमकती दिखाई देती हैं किंतु अंदर से विकृत परिणाम पैदा करने वाली होती हैं जो भी टाईल्स के मकान में बैठता है उसके परिणाम सुकृत हो ही नहीं सकते, प्रकृत रूप में हो ही नहीं सकते।

मन को साध ना ही साधना है

सहजता जीवन को जीवंतता देने वाली होती है। और विकृति जीवन में विकार देने वाली होती है। ''सहज पके सो मीठो होए'' जो सहजता में चीज पकती है वह मीठी होती है और तुमने पकने नहीं दिया कच्चा ही तोड़ लिया तो वो मुँह कड़वा होगा खट्टा होगा खा न पाओगे कसैला रहेगा और इतना ही नहीं उल्टी भी आ सकती है और जो सहज पकी चीज है उसे ग्रहण करोगे तो प्राय: करके वह सहज चीज आपको आनंद देने वाली होती है। इसलिए प्राय: करके शब्द आता है या योगियों का नाम आता है-सहज आनंद। आपने पढ़ा किसी महाराज का नाम या किसी भगवान का नाम विकृतानंद, घमण्डानंद, झगड़ालुनंद, लोभानंद, ये तो आपने सुना होगा ये सहजानंद हैं, क्षमानंद हैं, ये ज्ञानानंद हैं, ये निजानंद हैं, ये जिनानंद हैं, ये आत्मानंद हैं। साधु सहज आनंद में ही जीता है विकृत आनंद में जो जीता है उसे साधु कहते ही नहीं। साधु तो प्रकृत्यानंद होता है प्रकृति में आनंद लेता है यदि विकृति में आनंद लेता है तो वह साधु नहीं है। साधु तो सरलता में जीता है सहजता में जीता है।

साधु वह है जो अपने आप को साध ले और साधना क्या है मन को साधना, साधना है-मन का बैंलेस सही हो जाना चाहिए तराजू की तरह से। तुम लोग बनिया लोग तराजू को पकड़ते हो मन के तराजू को नहीं पकड़ पाए आश्चर्य होता है। मन को साधना नहीं सीख पाए तो मन को साधने का जो सिद्धांत है वह तराजू से सीखा जा सकता है। तराजू सीख देती है। जीवन भर तराजू पकड़ कर काँटे की नौक को देखते रहे। एक बार तो अपने मन की नोंक को देख लें कहाँ झुक रहा है। संसार की ओर झुक रहा है या मोक्ष की ओर झुक रहा है। विकृति में जा रहा है या प्रकृति में जा रहा है। राग की ओर जा रहा है या द्वेष की ओर जा रहा है।

सीखो, सहजप्रवृत्ति में बहना

नदी जब सहज बहती है तो सृजग हो जाती है वो उद्धारक हो जाती है। उद्धार का उत्थान का प्रतीक बनती है किंतु जब नदी सहजता को छोड़ करके विकृत रूप में बहती है तो बाढ़ का रूप ले लेती है और गाँव के गाँव उजाड़ देती है। यदि विकृता के रूप में सूख जाए तो आस-पास किनारे पर रहने वाले व्यक्ति भूखे मर जाए प्यासे मर जाए। और सहजता की है तो वह सतत् प्रवाही नदी जीवन भर बहे तो वह सब प्राणियों को जीवन देने वाली होती है। सहजता स्वयं के लिए और दूसरों के लिए सुखद है और विकृति स्वयं के लिए और दूसरों के लिए नियम से दु:खद ही दु:खद है।

एक व्यक्ति लंगड़ा कर चल रहा था पूछा क्या बात हो गई भाई। दो डॉक्टर आपस में चर्चा कर रहे थे बैठे थे वे सामने। दोनों ने चर्चा की ये व्यक्ति लंगड़ा कर के आ रहा है तो ऐसा लगता है उसके घुटने में कोई दर्द है इसलिए लंगड़ा कर चल रहा है। दूसरा डॉक्टर कहता है नहीं इसकी कमर की हड्डी टूटी है। नहीं-नहीं घुटने में दर्द होना चाहिए दूसरा बोला कमर में दर्द होना चाहिए दोनों डॉक्टर में बहस हो

गई बोले शर्त लगा ले। शर्त लगा ली। वह व्यक्ति लंगड़ाता हुआ वहाँ तक आया उससे पूछा कि तेरी रीढ़ की हड्डी टूटी है या कमर की। बोला कमर की तेरी हड्डी टूटी है मेरी क्यों टूटी है तो दूसरा डॉक्टर बोला मैंने पहले ही कहा था इसके घुटने की हड्डी टूटी है बोले घुटने की टूटी होगी तेरी मेरी कहाँ टूटी है। तो लंगड़ा कर क्यों चल रहा है बोले मेरी चप्पल टूटी है। इसलिए ऐसे पैर लंगड़ा कर चल रहा हूँ।

तो विकृति जरा भी हो तो दु:खदायी होती है। इसीलिए व्यक्ति सहजता में रहे, सहजवृत्ति में बहे। देखो तुम्हारे पास दो नेत्र हैं। प्रभु परमात्मा के पास अनन्त नेत्र हैं। तुम्हारे पास थोड़ी सी बुद्धि है उसके पास अनंत बुद्धि है। तुम अपनी थोड़ी सी बुद्धि से होशियारी से चालाकी से बेईमानी से ज्यादा प्राप्त करना चाहते हो। किंतु प्रभु उतना ही प्रेम देगा जितना तुम्हारे भाग्य में है। सहजता हर क्षेत्र में कार्यकारी होती है। हर क्षेत्र में लेकर के चलो, कहीं भी लेकर चलो कहीं भी जाओगे तो तुम्हें भी आराम मिलेगा और दूसरों को भी आराम मिलेगा और यदि विकृति में आपने जीना प्रारंभ कर दिया तो जीवन भर असंतुष्ट रहोगे और तुम्हें मिलेगा उतना ही। सहजता से भी उतना मिलेगा और विकृति में भी नहीं मिलेगा। बेटा सोचता है कि माँ से 2 लड्डू ले लूँ। माँ क्या करती है लड्डू बहुत सारे बने हों किंतु माँ एक लड्डू देती है। वह जब नहीं मानता है लड्डू फेंक देता है तो माँ कहती है चल कोई बात नहीं। एक लड्डू और ले ले। तो माँ का लड्डू बड़ा वाला था बेटा के सामने क्या किया लड्डू ले लिया और उसी के 2 लड्डू बना कर ले आयी। ले अब तो 2 लड्डू ले ले और वह लड़का खुश हो जाता है कहता है मुझे 2 लड्डू मिल गए। लड्डू 2 तुझे दिखाई दे रहे हैं, है तो वो एक ही।

मिलेगा वही जो है भाग्य में

ऐसे ही व्यक्ति अपने मन को समझाने का प्रयास करता है मैंने दुगना कर लिया। क्या भगवान से ज्यादा चतुर तुम हो। अरे अपने

भाग्य के लिखे को तुम नहीं पढ़ पा रहे भगवान पढ़ रहे हैं तो तुम भगवान से ज्यादा होशियार हो गए जो अपने भाग्य को भी चेंज कर लिया। भगवान ने जो तुम्हें दिया है क्या गलत किया है क्या। तू बदलना चाहता है तो बदल ले। पर मिलेगा उतना ही जितना तेरे भाग्य में है। कथानक है वैदिक परंपरा का। महादेव और पार्वती भ्रमण करते हुए कहीं से आ रहे थे तभी कुछ भक्त लोग सामने खड़े दिखायी दिये वहाँ अनाज का ढेर लगा हुआ था। एक भक्त ने पूछा प्रभु ये तो बताओ ये अनाज का ढेर कितना है? बोले पूरा 100 मन है। बोले अच्छा। दूसरी जगह गए वहाँ भी अनाज का ढेर लगा था वह भी लगभग उतना ही था। तो उसने पूछा प्रभु बताओ ये अनाज का ढेर कितना है बोले 100 मन है। संध्याकाल का समय था बोला प्रात:काल इन्हें बोरों में भर कर ले जाएँगे। रात्रि हुई, जो पहले वाला व्यक्ति था वो तो चैन से सोया। मुझे 100 मन मिलना है ज्यादा मिल नहीं सकता। भगवान की वाणी झूठी नहीं होती है।

वह दूसरा व्यक्ति था वो चालाक था उसने कहा 100 मन ढेर तो बता ही दिया भगवान ने मेरा यदि इसे मैं और ले जाऊँगा तो बढ़ता चला जायेगा। रात भर वह उस ढेर में से पीछे से भर भर कर बोरा बांध-बांध कर अपने ढेर में डालता गया। प्रात: काल दोनों ढेर तुले तो दोनों का वजन 100-100 मन ही निकला। रात भर उस ढेर में से वह डालता रहा फिर भी वजन 100 मन। अब उसने सोचा हो सकता है भगवान की बात झूठी निकल जाए मेरा तो 100 मन हो गया इसका तो 50 मन रह जाएगा। अब ये भी तुला तो 100 मन निकला, 50 मन नहीं निकला। संयोग की बात दोपहर को पुन: महादेव जी और पार्वती जी वहाँ से निकल कर आते हैं। उसने उलाहने की भाषा में कहा भगवान आप भी झूठ बोलते हैं क्या। आपकी बात मुझे सत्य दिखाई नहीं देती। बोले क्यों क्या हो गया ? अरे तुम कहकर गए थे ये अनाज

तो 100 मन है तो वह 100 मन नहीं था क्या। 100 ही मन था। अरे मैं ये रात भर वहाँ से ढोकर के अपने खेत में डालता रहा वो कहाँ चला गया। बोले तू क्या सोचता है, तू इधर से डालता रहा मैं उधर से डालता रहा। बैलेंस बराबर रहा।

सहज व्यक्ति का गणितः

जो सहजता में पकता है वो मीठा होता है जो विकृत में पकता है वह मीठा नहीं होता। सहजता क्या है क्या कहते हैं शास्त्र ? एक राजा वन विहार के लिए गया। वन विहार में जाते-जाते वह रास्ता भटक गया। तो वह किसी दूसरे देश की सीमा पर पहुँच गया। किसान को खेत में हल चलाकर देखते हुए उसका मन हुआ ये क्या विज्ञान है मैं देखूँ तो सही। तो उसने किसान को बुलाया किसान आकर छाया में बैठ गया राजा भी बैठ गया। राजा को पानी पिलाया और ताजा अनार का जूस निकाल के पिलाया राजा को शांति मिली। बोले भैया, यहाँ तो स्वर्ग जैसा आनंद है। ये चीज तो मेरे महलों में भी नहीं है। बरगद की छाँव में तालाब के किनारे जो आनंद आ रहा है तेरे खेत में मिट्टी में बैठने से ये तो मुझे अपने सिंहासन पर बैठने पर भी नहीं आ रहा है। वह सिंहासन मेरा सोने का है उस पर आनंद नहीं आ रहा।

वह व्यक्ति बोला प्रभो! ये सब भगवान की कृपा है आपकी कृपा है। राजा ने पूछा तू क्या करता है? प्रभु मैं खेती करता हूँ और खेती के माध्यम से जो मिलता है तो उससे मैं अपना गुजारा करता हूँ। कैसे करता है खर्च, कैसे गुजारा करता है। तो वो ऐसा है जो भी आता है जो मैं कमाता हूँ उसका एक आना, 25 प्रतिशत तो मैं कर्ज चुका देता हूँ और 25 प्रतिशत मैं दूसरों को कर्ज देता हूँ और 25 प्रतिशत जो है उसको मिट्टी कर देता हूँ और 25 प्रतिशत जो है उसे कुएँ में डाल देता हूँ। राजा ने कहा, ''तेरी बात समझ में नहीं आई। तू गाँव का किसान अनपढ़ तू ऐसी पहेली बता रहा है जो मेरे पल्ले ही नहीं

पड़ रही। राजा ने कहा बता तो सही तू 25 प्रतिशत कह रहा है 16 आने में से 4 आने तो मैं कर्ज को चुका देता हूँ ठीक है जिससे तूने कर्ज लिया होगा उसे चुका रहा होगा और 4 आने का तू कह रहा है कर्ज दूसरे को दे रहा है इतना धनवान (आदमी) सेठ हो गया कि चुका नहीं पाया पूरा, देना शुरू कर दिया। चल ठीक है दे भी रहा हो फिर कह रहा है 4 आने को मैं मिट्टी में डाल देता हूँ। आश्चर्य है और 4 आने को मैं कुएँ में डाल देता हूँ। तेरी बात समझ में नहीं आ रही।

तो वह किसान कहता है, महाराज आपको क्या समझाऊँ। आप तो स्वयं समझदार हैं। फिर भी मेरी छोटी बुद्धि कहती है कि मैं जो कमाता हूँ उसमें से 4 आने भर अर्थात् मैंने यदि 1 रुपया कमाया तो 4 आने मैं वृद्ध माता-पिता की सेवा में खर्च करता हूँ। वह तो मैं चुका रहा हूँ कर्ज। उन्होंने यदि पाल पोस कर बड़ा किया उनका मेरे ऊपर कर्ज है। तो 4 आने तो मैं उनकी सेवा में खर्च करता हूँ ईमानदारी से। और 4 आने मेरे खुद भी बाल-बच्चे हैं, 4 आने मैं उन पर खर्च करता हूँ। तो बेटों के लिए कर्ज वो तो मेरा आगे है बेटे मेरी सेवा करेंगे। मैं कर्ज दे रहा हूँ। जो अपने लिए खर्च कर रहा हूँ भोग में वह मिट्टी में मिला रहा हूँ और जो पुण्य कार्य में लगाता हूँ 4 आने धन के कार्य में वह कुएँ में डाल रहा हूँ। नेकी कर कुएँ में डाल। उसका फल क्या मिलेगा मैं सोचता नहीं जो मिलेगा बाद की बात है। अभी तो मैं कुएँ डालता जा रहा हूँ। यह होता है सहजता में जीने वाले व्यक्ति का गणित।

प्रभु के सामने हो शिशु जैसी निश्छलता

10 लाख वहाँ से आयेंगे, 20 लाख वहाँ से आयेंगे 25 लाख वहाँ से आयेंगे और यह सब जोड़ कर के 60 लाख हो गए और मार्किट का भाव अच्छा हो गया तो बस 2 महिने में डेढ़ करोड़ हो

जाएँगे। यदि इसे प्रोपर्टी में लगा लिया तो 4 करोड़ हो जायेंगे। किसी और के लिए कहाँ लगाऊँ कैसे पैसा बढ़ जाए। और तुमने लगा कर के 50 करोड़ भी कर लिए तो एक ही झटका लगेगा कि 60 करोड़ निकल जाएँगे। एमसीएक्स वाले जो कमा रहे हैं न, ये पाई-पाई करके कमाते हैं और जब जाते हैं ढाई, सैंकड़ा, हजार, लाख सब चले जाते हैं फिर वे चौराहे पर जाकर आत्म-हत्या कर लेते हैं। वे भगवान से ज्यादा होशियार बनना चाहते है! इसलिए भगवान से ज्यादा जीवन में होशियार बनने का प्रयत्न मत करना भगवान के सामने कहो, जो कुछ भी है आज तुम्हारे सामने है। मैं अच्छा हूँ या बुरा हूँ सब तुम्हारे सामने हूँ। तेरा हूँ, हे प्रभु परमात्मा चाहे तो मुझे स्वीकार कर ले और चाहे मुझे ठुकरा दे मैं तुझे छोड़कर नहीं जाऊँगा, मैं तो यहीं रहूँगा।

भगवान ने आज तक किसी को ठुकराया नहीं है, गले से ही लगाया है किंतु जो सिर पर चढ़ने का प्रयास करता है वह नीचे टपक जाता है। यदि बेटा चरणों में बैठता है तो उसे माँ बाप भी उठाकर गोदी में बिठा लेते है और यदि बेटा सिर पर बैठने का प्रयास करे सिर पर चढ़े तो कह देते हैं उतर जा नीचे बैठ। उसे डाँट कर नीचे बिठा दिया जाएगा और यदि नीचे बैठा होगा तो उसे गोदी में ले लेंगे सिर पर बिठाकर कंधे पर बिठा लेंगे और यदि ऊपर चढ़ने का प्रयास करे तो नीचे उतार देंगे। ये प्रकृति का नियम है जो किसी पर चढ़ना चाहता है उसे नीचे उतारा जाता है और जो नीचे बैठना चाहता है उसे ऊपर बिठाया जाता है। तो महानुभाव, प्रभु परमात्मा के सामने ज्यादा होशियारी मत दिखाओ। सहजता में जीओ और कहीं सहज बनो या न बनो, ग्राहक के सामने सहज बनो न बनो कम से कम प्रभु या गुरु के सामने तो सहज बन जाओ कभी प्रभु के सामने मायाचारी मत करो, कभी गुरु के सामने मायाचारी मत करो। प्रभु और गुरु के सामने की हुई मायाचारी भव-भव तक दु:ख देती है वह किसी भी प्राणी को सुख नहीं देती।

गुरु से कपट, मित्र से चोरी के होय निर्धन, के होय कोडी।

महानुभाव ! जीवन में मायाचारी का, धोखे का भाव तभी आता है जब व्यक्ति अपनी बुद्धिमानी को ज्यादा दिखाना चाहता है और जो व्यक्ति सहजता में जीता है, वह कहता है जो है सो है। मेरा कोई छीन नहीं सकता और मुझे किसी का चाहिए नहीं। हे भगवान् ! मेरे भाग्य में सूखी रोटी है तो मैं सूखी रोटी ही खाऊँगा। मुझे किसी की घी की चुपड़ी रोटी छीननी नहीं है और यदि मेरे सामने कोई आ जायेगा तो मैं उसे खिलाए बिना खाऊँगा नहीं। पहले उसे खिलाऊँगा फिर मैं खाऊँगा बचेगी तो नहीं तो, पानी पीकर सो जाऊँगा ऐसे प्रभु परमात्मा के सामने कहकर सोता है, वह व्यक्ति जीवन में कभी भूखा नहीं सोता है। जो दूसरे को खिलाकर के खाने का भाव रखता है ऐसा व्यक्ति जीवन में कभी भूखा नहीं सोता। जो दूसरे की रोटी को छीनकर खाना चाहता है वह स्वयं नहीं खा पाता।

आपने एक कहानी पड़ी होगी लालची कुत्ते की। वो नदी किनारे जा रहा था मुँह में रोटी का टुकड़ा था नीचे झाँककर के देखा उसे लगा नीचे भी एक कुत्ता है उसके मुँह में रोटी है वह नीचे वाले कुत्ते की रोटी छीनने के लिए भौंकता है और उसकी रोटी छीनने के लिए प्रयास किया मुँह की रोटी चली जाती है। ये कहानी बचपन में पढ़ी थी किन्तु बचपन में समझ में आये या न आये किंतु पचपन में समझ लेना चाहिए। यदि पचपन में भी समझ में आ जाए तो जीवन सफल और सार्थक बन सकता है।

कहो नहीं, सहो-

तो सहज का आशय क्या होता है?-स्वाभाविक, नैसर्गिक। सहजता में जीओगे तो आनंद ज्यादा आएगा और सहजता के आनंद से ही अविपाक निर्जरा होती है। कृत्रिम तपस्या, कृत्रिम आनंद से निर्जरा नहीं होती। नैसर्गिक, स्वाभाविक और प्राकृतिक रूप से जीने

का प्रयास करो। वही शाश्वत सुख की कुंजी है। देखो तीन शब्द हैं जैसे कभी बच्चों में झगड़ा हो जाए तो वृद्ध माता-पिता बाबा दादा क्या कहते थे चल बेटा कोई बात नहीं सह ले... क्या कहते थे सह जा, सहन कर ले। उसे तो ये था मैं उसे पीटूँगा। चल कोई बात नहीं सह जा। जब सहन कर लेगा वह जिदंगी भर जीयेगा। और जो कहता है कह जा, तो कह करके व्यक्ति जल्दी भाग जाएगा एक बालक-दूसरे बालक को जल्दी से मारकर भाग जाऐगा, पीटकर भाग जायेगा ठहर नहीं सकता। यदि सह जा तो रह जा और कह जा तो भाग जा।

प्रभु परमात्मा के चरणों में रहना है तो सह जा जितना सहन करता जाएगा तू धर्म की छत्र-छाया में परमात्मा के चरणों में रह जायेगा। सह जा तो यहाँ पर रह जा और यदि तू कहना जानता है तो कह जा जल्दी से कह जा। नहीं तो फिर तेरी क्या दशा हो जायेगी तू सोच भी मत। तो जल्दी से भाग यहाँ से। तो सहन करने वाला व्यक्ति दीर्घ जीवी होता है शाश्वत अवस्था को प्राप्त करता है और विकृति में जीने वाला व्यक्ति वह पिटता ही पिटता है। देखो एक दूसरी बात आपको चलते-चलते कहें। ठण्डा लोहा ठण्डे लोहे को भी काटता है गर्म लोहे को भी काटता है। गर्म लोहा न गर्म लोहे को काटता है न ठण्डे को काटता है। गर्मी आना ये हमारा विकृत पना है और सहजता में जीना ठण्डा रहना हमारा स्वभाविक सा है। लोहे को गर्म किया जाता है अग्नि में डाल करके विकृत दशा है विकृत दशा कभी भी समर्थ नहीं होती। वह तो असमर्थ होती है और लोहे की जो सहज दशा है ठण्डा होना वह ठण्डा लोहा ठण्डे और गर्म दोनों को काट देगा ऐसे ही जो व्यक्ति सहजता में ठण्डे पन में जीता है वह विजय प्राप्त करने में सफल हो जाता है और जो विकृति में जीता है वह स्वयं अपना पतन कर लेता है। इसलिए इस सूत्र को आज गाँठ बांध लो अपनी चेतना की डायरी पर लिख लो, मस्तक की डायरी में नहीं,

कण्ठ की डायरी में नहीं चेतना की डायरी में लिख लो कि मैं सहजता में जीने का प्रयास करूँगा और लोभ नहीं करूँगा। मैं सहजता में जीऊँगा। व्यक्ति जितना सहज हो जाता है वह सहजानंद प्रभु परमात्मा के पास पहुँच जाता है। आप सभी भी भविष्य के परमात्मा हैं आपकी आत्मा में भी परमात्मा छिपा हुआ है। वह आपकी आत्मा शीघ्र परमात्मा के रूप में आ जाए ऐसी आपके प्रति अच्छी भावना भाता हूँ।

प्रेय से श्रेय

संसारी प्राणी का ये स्वभाव बन गया है कि वह विभाव से प्रेम करने लगा है। वह विभाव की ओर ज्यों-ज्यों बढ़ता जाता है त्यों-त्यों उसे कुछ विशेष आनंद की अनुभूति होती है ऐसा उसे लगता है यद्यपि ये केवल मिथ्या धारणा है। जैसे कोई छोटा बालक थाली में भरे हुये जल में चन्द्रमा को देख करके ये मान लेता है कि चन्द्रमा थाली में है। जैसे उस बालक की ये धारणा मिथ्या है वैसे ही संसार के पदार्थों में सुख शांति की कल्पना, धारणा और मान्यता मिथ्या है। महानुभाव, ये विभाव हमारी आत्मा के लिए कभी भी सुखद नहीं हो सकते। ये विभाव आत्मा का हित कभी भी नहीं कर सकते। ये विभाव परिणाम कभी भी आत्मा के कल्याण का कारण नहीं हो सकता ये विभाव हमारी आत्मा के साथ खिलवाड़ करता है हमारी आत्मा का कल्याण नहीं करता। संसारी प्राणी जो विभाव से प्रीति करता है, इसलिए कभी आत्मा की प्रतीति और अनुभूति नहीं करता। जब स्वभाव के प्रति प्रीति हो, विभाव से भीति हो तब चेतना को अपने स्वयं की अनुभूति और प्रतीति हो सकती है।

प्रेय और श्रेय :-

महानुभाव ! आज का विषय जिस पर थोड़ी सी हम चर्चा करेंगे ''प्रेय से श्रेय'' की ओर। व्यक्ति को जो प्रेय है वही आज श्रेय लग रहा है। प्रेय और श्रेय दो शब्द हैं इन दोनों के अर्थ आप जानते हैं। 'प्रेय' का अर्थ है ''प्रेम करने के योग्य'' और ''श्रेय'' का अर्थ होता है ''कल्याण के योग्य।'' प्रेय क्या है संसारी प्राणी के लिए प्रेय है ''वासना''। तो श्रेय क्या है-''उपासना''। प्रेय क्या है? ''विषय कषाय''। और श्रेय क्या है आत्मा का बोध। प्रेय क्या है? मान, तो श्रेय क्या है ''आत्मा का ध्यान''। प्रेय क्या है? ''अज्ञान'' और श्रेय

क्या है? ''सम्यक् ज्ञान, तत्त्व ज्ञान, आत्म ज्ञान''। प्रेय क्या है? इन्द्रियों के विषय और श्रेय क्या है–अतीन्द्रिय अवस्था। प्रेय क्या है-पर और श्रेय क्या है-स्व। प्रेय क्या है-लोभ और श्रेय क्या है-संतोष। जीवन में जितने भी विकारी भाव हैं वे सभी जीव को प्रिय लगते हैं जिनके माध्यम से तन की संतुष्टि होती है जिनके माध्यम से मन की संतुष्टि होती है। जिनके माध्यम से इन्द्रियों की संतुष्टि होती है वे सभी पदार्थ जीव को प्रेय लगते हैं। किंतु जिसके माध्यम से आत्मा की संतुष्टि होती है, गुणों की तुष्टि और पुष्टि होती है वे सभी कारण और साधन सब श्रेय हैं।

साधन इस जीव को अनादिकाल से प्रेय लगे हैं किंतु साधना हमेशा श्रेय रही है। आत्मा का कल्याण साधनों का संग्रह करने से नहीं, आत्मा का कल्याण तो साधना करने से है। प्राय: करके प्राणी साधना करना नहीं चाहता वह भविष्य को सुखी बनाने के लिए वस्तु का संग्रह करता है किंतु व्यक्तित्व का निखार नहीं करता। वस्तु का संग्रह आज नहीं तो कल नियम से दु:ख का ही कारण बनेगा। व्यक्तित्व का निखार आज और कल हमेशा ही सुख और शांति को देने वाला होगा। किंतु जिस व्यक्ति की धारणा विपरीत हो गई है उस व्यक्ति को जो आत्मा का शत्रु है वह अच्छा लगता है। आतम के अहित विषय कषाय भी अच्छे लगते हैं और जो आत्मा के सच्चे मित्र हैं वैराग्य और संयम ये व्यक्ति को दु:खदायी लगते हैं। दरअसल बात ये है इस व्यक्ति को राग से भी राग हो गया है द्वेष से भी राग हो गया है यह व्यक्ति जब तक वैराग्य भाव को स्वीकार न करेगा, जब तक वह मोह को, मूढ़ता को, अज्ञानता को छोड़कर के सद्बुद्धि विवेक को स्वीकार न करेगा तब तक उसके जीवन में श्रेय का रास्ता प्रारंभ ही नहीं हो सकता।

महानुभाव ! उसे जीवन में नाश्ता प्रिय लगता है। प्रात: काल नाश्ता देखकर के चेहरा खिल जाता है किंतु उसे अपना शास्ता प्रिय

नहीं लगता। शास्ता श्रेय है और नाश्ता प्रेय है। जिस व्यक्ति या वस्तु से उसका प्रयोजन सिद्ध होता है स्वार्थ सिद्ध होता है उसका वास्ता उसके लिए प्रेय है और आस्था उसके लिए श्रेय है, ये सम्यक् श्रद्धा इसके लिए श्रेय है और जो मुर्दा से प्रेम करता है मिट्टी से प्रेम करता है यह मुर्दा उसके लिए प्रेय है। व्यक्ति के लिए शव तो प्रेय है चाहे अर्थी भी उठ रही हो परन्तु शव श्रेय नहीं हो सकता श्रेय तो शिव होता है। जल प्रेय हो सकता है किन्तु श्रेय जिन होता है। जन वाणी आपको प्रेय हो सकती है किंतु श्रेय नहीं, श्रेय तो जिनवाणी हो सकती है, सर्वज्ञ की वाणी हो सकती है, किसी संत, अर्हंत, भगवंत, मुनि और ऋषि की वाणी भी कल्याण करने में सक्षम और समर्थ हो सकती है।

जीवन में प्रेय, मान लिए हैं पाप

महानुभाव ! संसार में जो वस्तु प्रेय हैं वे सभी संसार की वर्धक हैं क्योंकि आज तक हमारी ये धारणा उल्टी रही जिन पदार्थों को हम प्रेय मानते हैं अंतरंग में कहीं ये धारणा बनाकर बैठे हैं इनके माध्यम से हमारा कल्याण होगा, वही अच्छी लगती हैं।

कई बार व्यक्ति को बुराई भी अच्छी लगती है। अपनी बुराई को कोई व्यक्ति बुराई नहीं कहता। जब व्यक्ति को अपनी बुराई बुरी लगने लगे तब समझ लेना उसके जीवन में श्रेय का रास्ता प्रारंभ होने वाला है। जब तक व्यक्ति को बुराई अच्छी लगती है और अच्छाई उसे खराब लगती है, अच्छाई को देखकर ऐसा लगता है जैसे ये जलाने के लिए आ रही हो, अच्छाई से वह दूर भाग रहा है और बुराई को गले लगाकर के उसे छोड़ने का साहस नहीं करता, समझ लेना वह संसार का संवर्धन कर रहा है।

महानुभाव ! अनादिकाल से हमने प्रेय वस्तु को कल्याणकारक माना है और जो श्रेय वस्तु थी उससे द्वेष किया उसे अप्रिय मानकर

जीते रहे। अब थोड़ी सी नजर डालें कि ऐसे कौन-कौन से पदार्थ हैं, कौन-कौन सी वस्तुएँ हैं जिनको आप आज तक प्रेय मानते रहे किंतु जिनको आज तक प्रेय मानते रहे वह वास्तव में श्रेय नहीं है। आज तक प्रेय माना हमने पाप को। सबसे पहला प्रेय हमारे जीवन में पाप रहा, पाप अच्छा लगता है।

जब अज्ञानी थे धर्म का बोध नहीं था धर्म का स्वाद नहीं लिया तो दूसरों को सताने में बड़ा आनंद आता था। चाहे किसी के बच्चों को सता रहे हों, चाहे पशु पक्षियों को सता रहे हों। दूसरों को सताओ, दूसरों को परेशान करो तो बड़ा आनंद आता था। पहले राजा महाराजा शिकार खेलने के लिए जाते थे, शिकार खेलने में आनंद आता था पशु पक्षियों को मारने में बड़ा आनंद आता था। वही राजा जब धर्म की भावना से प्रेरित हुआ तो पशु पक्षियों की रक्षा करने के लिए समर्पित हो गया। महाराज मेघरथ कबूतर की रक्षा करने के लिए जिसका पीछा बाज पक्षी कर रहा था अपनी जंघा का माँस काट कर रख देते हैं। कब, जब उनके जीवन में धर्म का दीपक जल गया उनके जीवन में सम्पूर्ण श्रद्धा हो गई उनका धर्म के प्रति एक लगाव हुआ, झुकाव हुआ धर्म का उन्होंने स्वाद लिया तब लगा इसकी रक्षा करने के लिए अपना पूरा शरीर भी तराजू पर रखा जा सकता है और रख ही दिया।

तो महानुभाव ! जीवन में पाप बहुत प्रेय है। चाहे वह हिंसा हो, चाहे वह झूठ हो, चाहे वह चोरी हो, चाहे वह कुशील सेवन हो चाहे वह परिग्रह का संचय हो। सबसे परम प्रीति यदि रहती है इन संसारी प्राणी की तो वह पाप के प्रति प्रीति रहती है। इसे पाप बहुत अच्छा लगा है। यहाँ तक की इतना अच्छा उसे अपने जीवन में बाप भी नहीं लगा है। जिसने जन्म दिया पाल पोस कर बड़ा किया वह बाप बाद में और पाप पहले है। हो सकता है अपने पिता की आज्ञा का उल्लंघन

कर दे किंतु मन पाप की ओर जा रहा है तो पापी मन को रोकने में असमर्थ हो जाता है।

पुण्य भी श्रेय नहीं:

महानुभाव ! यदि कदाचित् कोई व्यक्ति और ऊँचा उठ गया तो उसके जीवन में पुण्य प्रेय लगने लगा। पुण्य किसी एक सीमा तक वह श्रेय है किंतु प्रेय तो वह यावज्जीवन होता है। वास्तव में देखा जाए तो यथार्थ में पुण्य भी श्रेय नहीं है। पुण्य भी एक कर्म है। वह पुण्य कर्म भी आत्मा को बाँधने वाला है। व्यक्ति सोचता है कि पुण्य मोक्ष को देगा पुण्य मोक्ष के द्वार तक पहुँचा तो सकता है मोक्ष नहीं दे सकता। ''असुहं होय कुसीलं, सुह भावं पि होय कुसीलं''। आचार्य कुंदकुंद स्वामी ने कहा अशुभ भाव तो कुशील है ही किंतु शुभ भाव भी कुशील है। वह भी हमारी आत्मा का शील नहीं है स्वभाव नहीं है। जो वीतरागी बन जाते हैं उनके जीवन में पुण्य और पाप दोनों ही एक समान छूट जाते हैं। महानुभाव ! फल की प्राप्ति करने का इच्छित व्यक्ति काँटों की ओर तो दृष्टि रखता ही नहीं काँटों को तो बाहर निकाल कर फेंकता ही है किंतु जब तक पुण्य रहता है तब तक भी फल नहीं मिलता। पुष्प झड़ जाता है तब फल की प्राप्ति होती है। शिवफल की प्राप्ति, मोक्षफल की प्राप्ति, मुक्ति की प्राप्ति तभी होती है जब व्यक्ति के जीवन में से पाप और पुण्य दोनों ही छूट जाएँ।

महानुभाव ! चाहे काँटा छोटा हो या बड़ा, काँटा-काँटा है चाहे पुष्प छोटा हो या बड़ा पुष्प-पुष्प है और चाहे पत्ता छोटा हो या बड़ा हरा हो या पीला उसे गिरना ही गिरना है। काँटे का फल से कोई संबंध नहीं। तो जीवन में प्रेय बन गया है पुण्य और पाप प्रमाद जीव का महाशत्रु आज व्यक्ति को प्रमाद भी प्रेय है। व्यक्ति प्रमाद में जीता है, आलस में जीता है उसे आलस बहुत प्रिय हो गया है। वह ऐसा आलसी हो गया सोचता है कुछ करना न पड़े। भारतीय लोग इसलिये

गरीब हैं क्योंकि वे प्राय: करके प्रमाद में जीते हैं। यदि निरंतर सक्रिय रहें तो, न तो ये अस्वस्थ रहें और न ही इतने दरिद्र। जो व्यक्ति आलसी होता है वह निसंदेह दरिद्र रहता है। जो व्यक्ति निरंतर किसी काम में लगा रहता है व्यस्त रहता है वह स्वस्थ रहता है जो व्यस्त नहीं रहता है वह लस्त पस्त हो जाता है, अस्त व्यस्त हो जाता है, अस्वस्थ हो जाता है। तो आलस ही जीव का महाशत्रु है, जीव का पतन करने वाला है। चाहे कोई व्यक्ति कितना भी पुण्यात्मा हो किंतु आलस के सदन में वास करता है तब नि:संदेह उसे नरक आदि की अवस्था का प्रवास मिलता है।

महानुभाव ! आलस व्यक्ति को प्रेय लगता है व्यक्ति चाहता है बिना काम किए काम चल जाए तो कौन काम करे। ये आलस चाहे पुरुष हो, चाहे महिला, चाहे बालक हो, चाहे प्रौढ़, चाहे वृद्ध हो, चाहे युवा सभी के जीवन में आलस ऐसे घुसता चला जा रहा है जैसे किसी कंकड़ पत्थर के ढेर के पास पानी बहता हुआ अपना स्थान जमा लेता है। उन कंकड पत्थरों के बीच में पानी पहुँच जाता है। ऐसे ही आलस प्राणी के प्राणों के बीच में जा रहा है जाकर के व्यक्ति को आलसी बना रहा है और हमारे डॉ. महाराज तो और आलसी बनाने में निपुण हैं। कोई भी तुम्हें रोग हो जाए तो सबसे पहले कहेंगे बेड रेस्ट। इनके जीवन में गुड रेस्ट तो कोई चीज ही नहीं है। ये नहीं कहेंगे कि गुड रेस्ट करो हमेशा बेड रेस्ट करो। उनका रेस्ट जब भी होगा तो बेड ही होगा वे कभी गुड की बात कर ही नहीं सकते और पड़े रहो पलंग पर आलसी बन जाओ और जब काम करना शुरू करोगे तो चक्कर आयेंगे शरीर दर्द करेगा फिर मेरे पास आ जाना। दवा लेने के लिए और कहेंगे खूब खाओ दबा कर के।

आयुर्वेद जब था तब कहते थे, देखो कहीं स्वास्थ्य खराब हो रहा है तो लंघन करो। लंघनं लघु भोजनं। लंघन क्या है लघु भोजन

करना। महात्मा गांधी जी भी कहते थे कि सप्ताह में एक बार उपवास करना चाहिए। जैन शासन में अष्टमी और चौदस जो पर्व आते हैं उसमें कहा व्यक्ति को उपवास करना चाहिए। सर्वथा नहीं तो जल लेना चाहिए जिससे वह रोगी न बने। किंतु आज डॉक्टर क्या कहेंगे। वह कहेंगे खूब खाओ चिंता न करो खूब दबा-दबा कर खाओ। यदि तुम दबा-दबा कर नहीं खाओगे तो मेरे यहाँ दवा खाने क्यों आओगे। जब दबा-दबा कर खाओगे तभी तो दवा खाने आओगे अस्पताल आओगे और यदि तुमने अल्प खाया तो बीमार ही नहीं पड़ोगे। यदि तुम परिश्रम करते रहोगे पसीना बहाते रहोगे तो बीमार ही नहीं पड़ोगे इसलिए परिश्रम नहीं करना है। जो महिला गर्भवती होती है डॉक्टर कहता है बस कुछ काम नहीं करना पड़े रहो बेड पर किंतु पहले जो महिला गर्भवती होती थी उनकी सास कहती थी बेटा चक्की चला। इससे प्रसूति के समय भी कष्ट नहीं होता। पहले प्रसूति ऑपरेशन से नहीं होती थी सहजता से होती थी। किंतु अब तो बिस्तर पर पड़े रहते हैं कई बार तो इतनी प्रतिकूलता हो जाती है कि खतरा हो जाता है माँ और बच्चे को। कभी माँ चली जाती है कभी बच्चा चला जाता है। कभी दोनों ही चले जाते हैं।

तो ये रेस्ट अच्छा नहीं है बेड रेस्ट है। गुड रेस्ट कौन सा कहलाता है? गुड रेस्ट वह कहलाता है जब आँख बंद करके प्रभु की भक्ति स्तुति की जाती है ध्यान लगाया जाता है वह गुड रेस्ट है। वह आपके जीवन में नई ऊर्जा देने वाला होता है। जो प्रभु परमात्मा, गुरु के सामने किया जाता है वह गुड रेस्ट है और जो पलंग पर पड़े रहकर किया जाता है वह बेड रेस्ट है। तो महानुभाव प्रमाद जीवन में प्रेय है। प्रमाद को कौन व्यक्ति नहीं चाहता। सब सोचते हैं मुझे खड़ा न होना पड़े बैठकर काम चल जाए तो कौन खड़ा हो? सोचता है यदि यहाँ बैठे-बैठे काम चल जाए फोन से, तो वहाँ तक कौन जाए? फोन कर

दे तो चाय होटल से आ जाएगी अब चाय कौन बनाए घर में, भोजन भी कौन बनाए बस फोन कर दो। श्रीमती जी कहती है आज मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं है, होटल से भोजन आ जाएगा। प्रमाद इतना छाता जा रहा है इतने तो बरसात में बादल भी नहीं छाते हैं उससे ज्यादा समाज में अब प्रमाद छाता चला जा रहा है। इसलिए प्रमाद व्यक्ति को प्रेय होता चला जा रहा है। इसके अलावा और क्या प्रेय है व्यक्ति को?

प्रदर्शन भी प्रेय है

प्रदर्शन व्यक्ति को प्रेय है। यदि कोई व्यक्ति अच्छा काम कर ले तो उसे पचा नहीं सकता, किसी न किसी को बताएगा अवश्य। वह बिना बताए, बिना दिखाए रह ही नहीं सकता। यहाँ तक कि आपने कोई नया आभूषण बनवाया उस आभूषण को पहनकर आप घर में नहीं रहेंगे घर में तो आभूषण आप उतार ही देंगे कहीं घिस न जाए और बाहर जब चार व्यक्तियों के बीच में बैठेंगे तो उसे दिखाएँगे अवश्य। किसी महिला का एक प्रसंग आता है उसने नई सोने की बड़ी-बड़ी चूड़ियाँ बनवाईं। वह मंदिर में भी गई, चौराहे पर भी गई, यहाँ-वहाँ सब जगह गई, पर किसी ने पूछा ही नहीं कि सोने की चूड़ियाँ कितने की बनवाईं, कब बनवाईं, कहाँ से बनवाईं। बेचारी वह तो घबरा गई मैंने इतना पैसा खर्च किया किसी ने पूछा ही नहीं। चूड़ियाँ उतार करके तोड़ने का मन किया चूड़ियाँ तो नहीं तोड़ीं किंतु उसने क्या किया अपने घर में आग लगा दी। झोंपड़ी में आग लगी गाँव के नगर के लोग इकट्ठे हुए वह वृद्धा जो चूड़ियाँ पहने थी वह आगे हाथ कर रही है। देखो भईया बचाओ-आग लग रही है बचाओ। एक महिला कहती है अम्मा जी ये तो बताओ ये तुमने चूड़ियाँ कब बनवाईं थीं। अरी भाग्यवान यदि पहले कह देती तो मेरी झोपड़ी क्यों जलती।

तो बात ये है व्यक्ति दिखाने का प्रयास करता है प्रदर्शन करता है। वह चीज दिखाना चाहता है कोई भी चीज हो, यहाँ तक कि आपकी शिक्षा के क्षेत्र में, चाहे ज्ञान के क्षेत्र में, चाहे तपस्या के क्षेत्र में, चाहे आपके अर्थव्यवस्था में कहीं भी आपने कोई भी उपलब्धि की है, उसे व्यक्ति पचा नहीं सकता दिखाता जरूर है और संसार के अधिकांश प्राणी वही काम करते हैं जिस काम के फल को दूसरों को दिखाया जा सके। जिस कार्य के फल को दूसरों को दिखाया नहीं जा सकता ऐसे गुप्त रूप से कार्य करने वाले व्यक्ति बहुत कम मिलेंगे। यदि वे हैं तो वे श्रेय मार्ग के पथिक हैं।

प्रतिस्पर्धा से भी प्रेम

प्रतिस्पर्धा के क्षेत्र में जो आना चाहता है वह सोचता है कि मैं द्वन्दयुद्ध जीत लूँगा तो निःसंदेह प्रसिद्ध हो जाऊँगा। एक जगह एक व्यक्ति इलैक्शन में खड़ा हुआ। हमारे पास आया महाराज जी आशीर्वाद दे दो हमने कहा–हमारा तो सबके लिए आशीर्वाद है। फिर बोले आशीर्वाद दे दो, मैंने कहा लोग तो कहते हैं कि तुम जीत न पाओगे। बोले ठीक कहते हैं मुझे भी मालूम है कि मैं जीत न पाऊँगा क्योंकि मुझे मेरे मौहल्ले के लोग तो जानते नहीं नगर के लोग कहाँ से जानेंगे। कहाँ से वोट करेंगे। मैं तो इसलिये खड़ा हो रहा हूँ जिससे लोग पहली बार में जान तो जाएँ। दूसरी बार में जीतने के लिए कोशिश करूँगा।

तो व्यक्ति अपने आपको दिखाना चाहता है। नगर का सबसे अच्छा पहलवान हो, प्रसिद्ध योद्धा हो, जो आखिरी कुर्सी हमेशा लेता रहा उसके सामने जाकर के ताल ठोक दे हारना तो है ही। मेरी हार तो होनी है पर कहने को तो हो जायेगा किससे टक्कर ली थी। किसी मरियल से अगर हार गया तो मुँह भी न दिखा पाऊँगा यदि हारना भी है तो किसी बलवान से जाकर के हारूँगा। तो बात ये है कि व्यक्ति

प्रतिस्पर्धा के इस युद्ध में द्वन्द भी करना चाहता है प्रतिस्पर्धा करना चाहता है तो उस व्यक्ति के साथ जिससे प्रसिद्ध हो जाए। व्यक्ति को प्रतिस्पर्धा भी प्रिय है। व्यक्ति को प्रेय है पैसा। पैसे के लिए वह अपने प्राण भी दे सकता है किंतु पैसा नहीं देता और जो व्यक्ति अपने प्राण दे सकता है पैसे की खातिर वह व्यक्ति प्रेय मार्ग का पथिक है। वह श्रेय मार्ग का पथिक नहीं हो सकता। दाम को चाहने वाला व्यक्ति प्रेय मार्गी है और राम को चाहने वाला व्यक्ति श्रेय मार्गी है। पैसे के लिए व्यक्ति क्या नहीं करता सुबह से लेकर शाम तक लगा रहता है सिर का पसीना एड़ी तक पहुँचा देता है। व्यक्ति को पैसे की जो भूख लगती है, वह सोचता है न्याय से आये चाहे अन्याय से आए, नीति से आए चाहे अनीति से आए, अहिंसा से आए चाहे हिंसा से आए, ईमानदारी से आए चाहे बेईमानी से आए, कैसे भी आए, कैसा भी हो पैसा हो, शुभ हो चाहे अशुभ हो किसी प्रकार से पैसा प्राप्त होना चाहिए। जो व्यक्ति पैसे के लिए लगे हैं उन्हें पैसे से प्रीति हो गई है। तो पैसा ही प्रीति का कारण है प्रेय का कारण है।

इसके अलावा 'पत्नी' प्रेय है। पुत्र भी प्रिय होता है। व्यक्ति कहता है मैं तो अपनी जिंदगी चाहे जैसे पार कर लूँगा किंतु मेरे बेटे का क्या होगा। मैंने अपने बेटे के लिए इकट्ठा कर रखा है। मैं न्याय अन्याय जो कुछ भी कर रहा हूँ अपने बेटे के लिए रहा हूँ पुत्र-पुत्री के लिए कर रहा हूँ, परिवार के लिए कर रहा हूँ। मेरे लिए क्या कमी है मेरे पिता तो इतना छोड़कर गए हैं कि मैं कुछ भी न करूँ तो भी काम चल जाएगा। वे प्रिय हैं इसलिए तो पाप में लिप्त हो गया, वह प्रिय हैं इसलिए प्रदर्शन में लिप्त है, प्रतिष्ठा में, प्रतिस्पर्धा में लिप्त होता जा रहा है। महानुभाव ये प्रियों के जाल से जब तक व्यक्ति छूटता नहीं है तब तक वह श्रेय के मार्ग पर जाता नहीं है। प्रतिग्रह से प्रीति, छोड़ो ये रीति। व्यक्ति को परिग्रह से कितनी प्रीति है। अपने

परिग्रह को छोड़ना नहीं चाहता। यहाँ तक कि उसके पास जो वस्तु है भले ही जीवन भर काम में न आए परन्तु फिर भी वह छूट नहीं सकती। तो परिग्रह एक ऐसा ग्रह है नौ ग्रह मिलकर भी इतनी पीड़ा नहीं दे सकते जो कष्ट और पीड़ा परिग्रह दे सकता है। और दूसरी बात यह है जो परिग्रही है उसे नौ ग्रह सता सकते हैं जो परिग्रह से रहित है उसे नौ ग्रह क्या पीड़ा देंगे। वह तो अपने आपमें मस्त है उसे कोई परेशान नहीं कर सकता। व्यक्ति परेशान कब होता है? परे-दूसरे में, शान-जो दूसरे में अपनी शान दिखाना चाहता है वह परेशान होता है। जो ईशान होता है स्वशान होता है वह स्वयं में ही अपनी शान बनाकर के चले। अपनी आन अपनी बान अपनी शान अपने में ही लेकर चले तो जीवन में कभी परेशान नहीं होता। वह पर में ही शान दिखाना चाहता है पर को दिखाना चाहता है कि मैं ऐसा हूँ, मैं इस प्रकार का हूँ तो व्यक्ति परेशान होता है जिसकी शान दूसरों पर आध ारित है वह व्यक्ति जिदंगी भर परेशान रहता है। जिसकी शान स्वयं के गुणों पर स्वयं के व्यक्तित्व पर स्वयं के स्वभाव पर स्वयं पर आधारित है ऐसा व्यक्ति जीवन में कभी परेशान नहीं होता। तो व्यक्ति इन सभी को प्रेय मानता रहा है अनादि काल से।

प्रेय को छोड़-बढ़ो श्रेय की ओर

तो महानुभाव ! इतनी सभी चीजें आपको गिनाईं। ये सभी क्या हैं? ये प्रेय हैं और अपनी आत्मा में झाँककर के आप देखना कि वास्तव में आपकी आत्मा की प्रवृत्ति आत्मा की परिणति इन प्रेय में है या नहीं। इन चीजों से तुम्हारा प्रेम है या नहीं। मुश्किल है कोई व्यक्ति एक बार खड़ा होकर ये कह पाये कि मेरा इनके प्रति या किसी के भी प्रति प्रेम नहीं है। तो ऐसा व्यक्ति श्रेय मार्ग का अधिकारी हो जाता है और जो व्यक्ति इनसे जितना बचता चला जाता है उतना श्रेय की ओर चला जाता है श्रेय का आशय क्या होता है?

श्रेय का आशय होता है श्रेय शब्द श्री से बना है। श्री का अर्थ होता है-लक्ष्मी और श्रेय का अर्थ होता है कल्याण। कल्याण का मार्ग, हित का मार्ग और विशुद्धि का मार्ग मुक्ति का मार्ग ये सब श्रेय कहलाते हैं। श्रेय शब्द का उपयोग आप उस रूप में भी करते हैं। उन्होंने ये कार्य करने में बहुत अहम भूमिका निभाई है इसलिए ये उसके अधिकारी हैं इसका जो क्रेडिट है इसका जो श्रेय है वह उनके खाते में चला जाएगा। तो श्रेय शब्द का रूढ़ी अर्थ है कल्याण।

महानुभाव ! प्रेय को छोड़कर के श्रेय की ओर जाना है। कैसे जाएेंगे। उसके जाने का एक ही उपाय है कि जिसको आपने आज तक श्रेय मानकर के प्रेय बना लिया था, अब उस प्रेय को अश्रेय मान कर के छोड़ दो और जो श्रेय है उसे प्रेय बना लो। जो व्यक्ति श्रेय की प्रेयर करता है उसको प्रेम करता है, प्रीति करता है, प्रार्थना करता है नि:संदेह वह श्रेय को प्राप्त कर लेता है। जो श्रेय को अपना पाहुना नहीं बना पाता वह जीवन में कभी श्रेय का पाहुना नहीं बन सकता। जो अच्छी बातों को सदाचार आदि को अपना अतिथि नहीं बना सकता वह कल्याण के सदन का पाहुना कभी बन नहीं सकता, मुक्ति महल का अतिथि कभी बन नहीं सकता। पहले श्रेय को अपना पाहुना बनाए, अतिथि बनाए, देव बनाए सम्मानीय बनाए तब तो वह हमें अपना कल्याणकारक बनाता है और यदि हमने पाप को ही अपना अतिथि बनाया है तो बस पाप के सदन में ही हमारा सम्मान हो सकता है अर्थात् पाप का फल पाने के लिए हमें पाप के सदन में प्रवेश करना पड़ेगा। किंतु वहाँ हमें प्रेय के या स्वर्ग के या मोक्ष के धरातल के दर्शन न हो सकेंगे।

श्रेय का आधार : श्रद्धा, संयम सदाचार

जीवन में श्रेय क्या-क्या है ? चलते हैं कुछ श्रेय वस्तुओं की चर्चा करने के लिए। पहला है 'श्रद्धा' जिसे जिनशासन की भाषा में

कहें सम्यक दर्शन, सच्ची दृष्टि, सही सोच। पहली चीज है व्यक्ति के जीवन में सच्ची श्रद्धा। उसकी अगर सोच सही है तो कोई उसे उसके पथ से विचलित नहीं कर सकता। जब भी व्यक्ति पथ से विचलित होता है तो केवल दो प्रकार से होता है या तो पथ पर चलने में असमर्थ हो, चारित्र मोहनीय कर्म का उदय हो अथवा उसकी श्रद्धा डगमगा गई हो तभी व्यक्ति पथ से च्युत होता है और श्रद्धा डगमगाने का आशय है अज्ञानता। दो ही कारण हैं अश्रद्धा और असंयम ये व्यक्ति को सत्य पथ से दूर कर देते हैं। तो महानुभाव, श्रेय मार्ग का पहला साधन है सम्यक् दर्शन। दूसरा साधन है, सुविवेक, सुबोध। यदि तुम्हें सम्यक् दर्शन से प्रीति हो जाए बिना सम्यक् श्रद्धा के एक क्षण भी न जीयो तो निःसंदेह तुम्हारा कल्याण नियामक है। यदि तुम्हें सुबोध से प्रीति हो गई है, सुबोध का आशय किसी व्यक्ति का नाम नहीं, सुबोध का आशय है सही ज्ञान, सच्चा ज्ञान, तत्व ज्ञान, आत्म ज्ञान, भेद विज्ञान। सर्वज्ञ के द्वारा प्रदत्त ज्ञान वह सुबोध है। शास्त्रों में जो निहित है उसको प्राप्त कर लिया है तब श्रेयो मार्ग के आप अधिकारी हो सकते हैं। अगला है सदाचार। सदाचार सुयोग्य मार्ग की ओर ले जाता है।

सदाचार के मायने आप जानते ही हैं–जिस आचार में सब अच्छाई हैं जो अच्छा आचार है। सदाचार शाकाहारी हो सकता है और जो सदाचारी नहीं है वह शाकाहारी नहीं है। सदाचारी शिष्टाचारी ही हो सकता है जो शिष्टाचारी नहीं है वह सदाचारी नहीं हो सकता है। संस्कृति का पालन करने वाला सुसंस्कारी हो सकता है लेकिन जो कुसंस्कारी है वह सदाचारी नहीं हो सकता। सदाचारी शिष्ट होता है, सभ्य होता है, सुसंस्कृत होता है, संस्कारवान् होता है और सदाचार के आगे बढ़ो तो पुनः संयम।

संयम का मार्ग श्रेयो मार्ग है। जो अपने मन वचन काय पर नियंत्रण करता है जो पाँचों इन्द्रियों पर नियत्रंण रखता है। जो कोई भी

प्रवृत्ति असंयमित नहीं करता वह व्यक्ति कल्याण के मार्ग का पथिक है। जो संयम नहीं रख सकता अपनी वाणी, अपनी इन्द्रियों पर अपने मन पर ऐसा व्यक्ति पतित हो जाता है। घोड़े पर सवार होने वाला व्यक्ति घोड़े की लगाम को कस के न पकड़े तो वह घोड़ा मंजिल पर न पहुँचाएगा रास्ते में कहीं गिरा सकता है। ऐसे ही मन रूपी घोड़े पर सवार होने से पहले लगाम हाथ में ले लो मन पर संयम करो। इन्द्रिय रूपी पाँच घोड़े की बग्गी पर बैठने के पहले लगाम अपने हाथ में पकड़ लो यदि संयम तुम्हारा है इन्द्रियों पर नियंत्रण है तो तुम्हें कोई दु:खी नहीं कर सकता और तुमने इन्द्रियों का कहा मान लिया जैसे इन्द्रिय कहती हैं वैसे चलते चले गए तब नि:संदेह आज नहीं तो कल तुम्हें रोना पड़ेगा। तो संयम सुख का कारण है चाहे वाणी का संयम हो और चाहे इन्द्रियों का संयम हो, चाहे मन का संयम हो, चाहे खान-पान का संयम हो कहीं भी संयम आप रखते हों तो संयम का पालन करने वाला व्यक्ति आत्मानुशासक कहलाता है और जो आत्मानुशासक है वही विश्व में शासन करने का अधिकारी होता है। जो व्यक्ति आत्मानुशासक नहीं है वह दूसरे पर शासन करने का अधिकारी नहीं है। यदि शासन करता भी है तो धिक्कारने के योग्य होता है।

समीचीन तोष:-संतोष

श्रेय मार्ग और क्या है? 'संतोष'। ''संतोष'' का आशय होता है समीचीन, तोष माने तुष्टि, जिसे समीचीन तुष्टि है कोई कहे मुझे संतोष जब मिलेगा जब मैं उसकी हत्या कर दूँगा, उससे प्रतिशोध बदला ले लूँगा। वह संतोष नहीं है वह क्या है वितोष है कुतोष है, संतोष तो वह है जो समीचीनता में संतुष्ट होता है, अच्छाई में संतुष्ट होता है, संयम से संतुष्ट होता है, सम्यक् ज्ञान से संतुष्ट होता है, सदाचार से संतुष्ट होता है, सरलता, सहजता से संतुष्ट होता है, संवेग

से संतुष्ट होता है, जो समता भाव से संतुष्ट है तभी तो उसका संतोष है। ऐसा संतोषी व्यक्ति ही शांति का अनुभव कर सकता है। ऐसा संतोषी व्यक्ति ही सुख का अनुभव कर सकता है।

गौधन गजधन-बाज धन और रतन धन खान।
जब आवे संतोष धन सब धन धूलि समान।

संतोष धन श्रेष्ठ है उसके आगे संसार का सभी धन मिट्टी है। मिट्टी से ज्यादा कुछ भी नहीं। जो व्यक्ति आध्यात्मिक दृष्टि को लेकर के चलते हैं, वे संसार की वस्तुओं को एक शब्द में कहते हैं, ये सब पुद्गल है मैं चेतना हूँ या चेतना के अलावा सब अजीव है, मैं जीव हूँ। आत्मा में ज्ञान है, दर्शन है, सुख है, शक्ति है इत्यादि बहुत सारी चीजें देखता है।

श्रेयो मार्ग के अंग

जीवन में श्रेय मार्ग है संवेग। जीवन में आवेग बहुत आते हैं, दुर्वेग आते हैं, कुवेग आते हैं और कभी-कभी निर्वेग व्यक्ति हो जाता है। सभी वेगों को शांत कर दें किंतु निर्वेग से भी जीवन का लक्ष्य प्राप्त नहीं होता, आवेग से भी जीवन का लक्ष्य प्राप्त नहीं होता, दुर्वेग से और कुवेग से भी प्राप्त नहीं होता। जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सरिता जैसा संवेग चाहिए तभी समुद्र जैसे परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है, सिद्ध जैसे परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है इसलिए जीवन में संवेग बहुत आवश्यक है। तो क्या देखा आपने सम्यक्त्व देखा, सुबोध देखा, सदाचार देखा, संयम देखा, संतोष देखा और उसके साथ-साथ सरलता, सहजता, समरसता, समन्वयता, स्याद्वाद नीति ये सब श्रेयो मार्ग के अंग हैं। श्रेयो मार्ग सकार से प्रारंभ हो रहा है इसलिए हम सकार वाले शब्द आपको बता रहे हैं और प्रेय मार्ग पकार से प्रारंभ हो रहा है तो 'प'कार वाले शब्द बताए थे।

महानुभाव ! श्रेय मार्ग है समता-समता भाव के मायने होते हैं, संसार के किसी भी पदार्थ के प्रति न राग है न द्वेष है। समता उसी के जीवन में आ सकती है जिसके जीवन में साक्षी भाव हो। साक्षी भाव के मायने क्या होता है? तराजू का जो बैंलेस आप देखते हैं बीच में काँटा होता है चाहे कोई भी चीज तोलो वो बीच में आ जाता है, उसका साक्षी भाव है इधर झुकेगा, उधर झुकेगा तो साक्षी भाव नहीं है, जो दोनों के प्रति तटस्थ रहे वह साक्षी भाव है जैसे तट, तटस्थ है मध्यस्थ है जो मध्य में रहता है वह मध्यस्थ है। साक्षी भाव का आशय होता है कि केवल हमें देखना और जानना है, करना कुछ नहीं है जानो और देखो। जानना और देखना हमारी आत्मा का स्वभाव है। तो स्वभाव ही श्रेय मार्ग का कारण है विभाव नहीं। जानना, देखना स्वभाव है, करना, बोलना, कहना हमारा स्वभाव नहीं है। यदि तुम कुछ भी करोगे तो हो सकता है कर्म का बंध हो तुम कुछ भी कहोगे उससे कर्म का बंध हो सकता है।

श्रेय मार्ग का कारण है स्वभाव में ठहर जाना। सुभाव और सद्‌भाव दोनों का अर्थ अलग-अलग है। सुभाव अच्छा भाव भी श्रेय मार्ग का कारण है और सद्‌भाव समीचीनता का भाव हमारी आत्मा में समीचीनता की उत्पत्ति यह भी श्रेयोमार्ग का कारण है। किंतु ये स्वभाव की प्राप्ति ऐसे नहीं होती है। इसके पहले आवश्यक है सत्संगति। जब तक जीवन में सत्संगति प्रारंभ नहीं होती है तब तक श्रेय मार्ग का प्रारंभ ही नहीं होता। सत्य से साक्षात्कार भी सत्संगति से ही हो सकता है। कुसंगति में रहकर किसी ने भी सत्य से साक्षात्कार नहीं किया। तो महानुभाव, यदि जीवन में सुख और शांति की अभिलाषा है, यदि जीवन में सत्य और शाश्वत गुणों को प्राप्त करने की अभिलाषा है, यदि जीवन में सुगुण और स्वभाव को प्राप्त करने की मनोकांक्षा है तब निःसंदेह हमें श्रेय मार्ग की ओर बढ़ना ही

पड़ेगा। श्रेय मार्ग की ओर उठाया गया एक भी कदम हमें संसार से दूर ले जाता है।

समय रहते पहचानें स्वसमय को

महानुभाव ! जीवन में श्रेय मार्ग के जितने भी साधन हैं इनको एक बार तो चिंतन जरूर करना है और देखना है इनसे हमारे जीवन में कितना प्रेम है। हमारे जीवन में सद्‌गुरु के प्रति कितनी प्रीति है, हमारे जीवन में शास्ता, देवता के प्रति कितना प्रेम है, हमारे जीवन में शास्त्र के प्रति कितना प्रेम है। इतना प्रेम तुम्हारा इनके प्रति हो जाए जितना प्रेम तुम अपनी श्वाँस से रखते हो आपको मालूम है कि मैं श्वाँस के बिना जी नहीं सकता ऐसे ही इससे ज्यादा प्रीति तुम्हारी अपनी शास्ता के प्रति हो जाए, शास्त्रों के प्रति हो जाए और अपने सद्‌गुरु के प्रति हो जाए तो तुम्हारी सत्य दशा उत्पन्न होने में देर न लगेगी। जैसे एक शूरवीर अपने शस्त्रों से प्रीति रखता है यदि शूरवीर शस्त्रों की उपेक्षा कर दे तो कभी भी धराशाही हो सकता है कभी भी पराजित हो सकता है वह जयश्री को प्राप्त नहीं हो सकता है वह लक्ष्मी को प्राप्त नहीं कर सकता वह सम्मान को प्राप्त नहीं कर सकता, वह सुयोग्यता को प्राप्त नहीं कर सकता। इसलिए सावधानी पूर्वक समय के रहते हुए समय की छत्र छाया में समय के द्वारा अपने समय को पहचानने का सम्यक् पुरुषार्थ करो। ये सम्यक् पुरुषार्थ आत्मा की सेवा है। ये आत्मा की सेवा ही वास्तव में श्रेयो मार्ग है। तो महानुभाव समय के रहते हुए, यानि जब तक आपका अन्तिम समय नहीं आये उससे पहले समय की छत्र छाया में सत्य शासन की छत्र छाया में समय के द्वारा, शास्त्रों के द्वारा अपने समय को पहचानने का अभ्यास करो, अपनी आत्मा को पहचानने का प्रयास करो।

हमारी आत्मा का स्वभाव क्या है? हमारी आत्मा क्या है? इस आत्मा को सकल परमात्मा कैसे बना सकता हूँ, इस आत्मा को सयोग

केवली कैसे बना सकता हूँ, इस आत्मा को साधु कैसे बना सकता हूँ, इस आत्मा को सिद्ध कैसे बना सकता हूँ, इस आत्मा को श्रमण और श्रावक कैसे बना सकता हूँ, ये शब्द हमारे अंदर गूंजते रहें। सभी शब्द सकार से प्रारंभ होने वाले हैं। ये सभी शब्द हमारे अंदर गूंजते रहें तो आज नहीं तो कल उनके प्रति प्रीति भी हो जाएगी। जैसे कोई बालक जब तक खिलौना देखता नहीं है तब तक उसकी याद नहीं आती, माँगता भी नहीं। जब खिलौना किसी दूसरे के हाथ में देखता है तो मचल जाता है वैसे ही तुम्हारा मन है घर में बैठे हो तो कोई मन नहीं कर रहा खाने पीने का और हलवाई की दुकान पर पहुँच गए तो उसे देखकर के मन करता है ये चीज भी खा लें, ये भी मिल जाए। ऐसे ही जब शास्ता के चरणों में बैठोगे तो स्वाध्याय करने की भावना पैदा होगी। जब किसी सद् वैद्य के पास बैठोगे तो स्वास्थ्य के बारे में चिंता करोगे।

श्रेय को बनाएँ प्रेय :

महानुभाव ! हम ''प्रेय से श्रेय'' की ओर जायें। अभी जीवन में जिनसे प्रीति की थी, जिनको प्रेय समझा था उन्हें छोड़कर के अब श्रेय की ओर जाएँ। तुलसीदास जी को रत्नावली बहुत प्रिय थी इसलिए वह उन्हें छोड़ते भी नहीं थे। जब रत्नावली अपने मायके गई तो वे भी अपने आपको रोक नहीं पाए और बरसात में सावन के महिने में खूब वर्षा हो रही थी नदी में बाढ़ जैसी आ रही थी। किंतु उन्हें तो अपनी पत्नी दिखाई दे रही थी नदी के पानी में भी, उन्हें तो अन्धकार में भी रत्नावली दिखाई दे रही थी रत्नों की चमक दिखाई दे रही थी। वह नदी के किनारे आए नाव तो नहीं थी क्या करें। एक मुर्दा बहता जा रहा था उन्हें लगा देखो ये मेरे लिए कोई साधन है। ये छोटी सी नाव है। मुर्दे को पकड़ करके उस पर बैठ गए और किनारे लग गए। रात में 12 बजे पहुँचे पत्नी से मिलना है पत्नी ऊपर वाली

मंजिल पर है। अब कैसे आवाज लगाऊँ ससुराल के लोग कहेंगे कि देखो कैसा दामाद है।

हम तो इनको वैसे ही आदर भी देते हैं दाम भी देते है दामाद हैं। दामाद किसे कहते है? जो ससुराल में जाकर के दाम भी प्राप्त करे, आदर भी प्राप्त करे। वह दाम और आदर कब तक मिलता है जब तक सास ससुर रहते हैं। जब तक सास-ससुर रहते हैं तब तक दाम भी मिलता है आदर भी मिलता है। सास पंखा झाल करके भोजन कराती है और पूछती है बेटे कोई कष्ट तो नहीं है। दामाद सास से दाम भी पाता है और आदर भी पाता है। किंतु जब सास-ससुर चले गए तब दामाद का ससुराल में आना कम हो जाता है। क्यों? अब सास-ससुर तो हैं नहीं। जब तक सास थी तब तक कुछ आस थी और दामाद के लिए तो सास ऐसी है जैसे श्वांस। दामाद भी कहता है सासू जी तुम तो खूब जियो जुग-जुग जियो जब तक तुम जियोगी मुझे मिलता रहेगा। तुम मुझे उदास, निराश, हताश नहीं करोगी। तो सास तो सांस की तरह से होती है। किसके लिए दामाद के लिए, बहु के लिए नहीं बहु के लिए तो सांस एक बीमारी है। जितनी जल्दी छुट्टी मिल जाए अच्छा है क्योंकि बहुमत का जमाना है। विजयी कैसे होते हैं इलैक्शन में-बहुमत से, सर्वसम्मति से नहीं होते। बहुमत मतलब-सरकार में भी बहु मत चलता है और घर में भी बहुमत चलता है, बेटा मत नहीं चलता, बेटी मत नहीं चलता, जो बहु ने कह दिया वही है।

सास ससुर जब चले जाते हैं तो दामाद का आना जाना कम हो जाता है क्योंकि साला है। वह साला अब उनसे दामाद जी तो कहेगा नहीं। क्या कहेगा साला-जीजाजी। आगे भी जी पीछे भी जी! वह कहेगा आप आए तो ठीक है भोजन के समय पर आ गए तो पूछ लेता हूँ अब मेरे साथ बैठ जाओ तुम तो जीमो और जाओ जी मुझे भी दुकान पर जाना है और यदि भोजन के आगे पीछे आए तो वह साला

जीजाजी को क्या पूछेगा। भोजन तो करके ही आए होंगे न। अब जीजाजी ये थोड़े ही कहेंगे नहीं करके आया। ससुर होता या सास होती तो वो जबरदस्ती कहते भोजन तो करके जाना ही पड़ेगा जबरदस्ती बैठा देते हैं और सौंगध दे-देकर एक-एक पूड़ी और रखते चले जाते हैं और यदि साले भी नहीं रहे तो कौन रह गए साले के लड़के। तो वहाँ फिर दामाद जाना और भी कम कर देगा। फिर तो जाना बंद सा ही हो गया कभी शादी ब्याह में गया तो गया और यदि शादी विवाह के अलावा कहीं यूँ ही पहुँच गया तो वह क्या कहेंगे फूफाजी। एक कप चाय है पकड़ो फूंको फांको और जाओ। अब भोजन की जुगाड़ यहाँ नहीं होगी जब पिताजी थे तब वह भोजन कराते थे और दादा थे तब उन्हें सम्मान भी देते दाम भी देते। तो बात चल रही थी तुलसीदास जी की। ससुराल पहुँचे सोचा इस समय कैसे अंदर जाऊँ तब उन्हें एक रस्सी लटकी दिखी उसी के सहारे ऊपर चढ़ गए। पत्नी ने पूछा कैसे आए, बोले खिड़की पर रस्सी थी उसी के सहारे आया। पत्नी ने जाकर देखा तो वह रस्सी नहीं साँप था। क्रोध में तमतमाती हुई बोली जितनी आसक्ति आपकी मुझमें है उतनी प्रभु के लिए हो जाए तो कल्याण निश्चित है, सुनते ही बोध को प्राप्त हुए। अभी तक जिसे प्रेय माना था उसे छोड़कर, श्रेय को प्रेय बनाया।

महानुभाव ! जब तक हम नहीं जानते थे तब तक प्रेय मार्ग को हमने श्रेय मान लिया था किंतु यदि हमारे जीवन में यह सुबोध आ गया है विवेक आ गया है तो हमें ये जानना है कि कल्याण के उपाय कौन-कौन से हैं। जो-जो कल्याण के साधन हैं उन सभी से हमें प्रीति प्रकट करना चाहिए, उससे प्रेम बढ़ाना चाहिए। जब व्यक्ति का सद्गुण के प्रति प्रेम बढ़ता है तो दुर्गुण अपने आप छूटता चला जाता है। घर में जिस मेहमान की सेवा ज्यादा होती है वह मेहमान ज्यादा ठहरता है। जिसकी नहीं होती वह नहीं ठहरता। तो महानुभाव ! ये

भारतीय संस्कृति, श्रमण संस्कृति श्रेयो मार्ग की प्रेरणा देने वाली है और जो पाश्चात्य संस्कृति है वह पतन की प्रेरणा देने वाली है। पाश्चात्य संस्कृति व्यक्ति को प्रेय लगती है किंतु वह श्रेय नहीं है। श्रमण संस्कृति सनातन धर्म संस्कृति ये श्रेय है किंतु व्यक्ति अपने जीवन में आज तक इसे प्रेय नहीं बना सका। बस आपसे इतना कहना है जिसे आपने आज तक प्रेय माना है उसे जीवन में अश्रेय कहना शुरू कर दें। ये अकल्याणकारी हैं ये पतन का मार्ग है और आज तक जिसको आपने अश्रेय माना था जिससे प्रेम नहीं किया अप्रेय मान लिया था ऐसे श्रेय को अपनी आत्मा के प्रदेशों में बसाओ उससे परम प्रीति करो तो तुम्हारी आत्मा आज नहीं तो कल परम दशा को प्राप्त होगी, सिद्धत्व को प्राप्त होगी। मैं आपके लिए यही भावना भाता हूँ कि आप शिव दशा को, सिद्ध दशा को प्राप्त हों।

तैयारी जीत की

संसार का प्रत्येक प्राणी विजय का अभिलाषी होता है, संसार में ऐसा व्यक्ति खोजना बड़ा मुश्किल है, जो जीवन में विजय नहीं चाहता हो, पराजय चाहता हो। विजय सभी क्यों चाहते हैं और पराजय क्यों नहीं चाहते? सबसे प्रमुख कारण इसका यह है कि विजय प्राप्त करना हमारा स्वभाव है, जीतना हमारा स्वभाव है हारना हमारा स्वभाव नहीं है और स्वभाव को हम कभी नष्ट नहीं कर सकते, स्वभाव का विपरीत परिणमन तो होता है, स्वभाव विभाव कभी नहीं होता। संसार का कोई भी प्राणी हो चाहे तिर्यंच हो, चाहे देव हो, चाहे नारकी हो, चाहे मनुष्य हो कोई भी जीव क्यों न हो संसार के प्रत्येक प्राणी यह सिद्ध करना चाहते हैं कि मैं सबसे श्रेष्ठ हूँ और सबसे श्रेष्ठ वही व्यक्ति माना जाता है जो जीता हुआ होता है, सत्यता तो यह है कि जीता हुआ व्यक्ति जीवंत जीवन जीता है और पराजित होकर जीवंत जीवन नहीं जीया जा सकता। जो पराजित हो गया, जो अपने लक्ष्य को न प्राप्त कर सका, ऐसा व्यक्ति तो केवल जीवन के भार को ढो सकता है, यदि जीवन का परम आनन्द, आह्लाद, परम लक्ष्य को प्राप्त न कर पाये तो उसका जीवन एक अभिशाप बन जाता है।

पहचानें जीत को

महानुभाव ! आज थोड़ी चर्चा करेंगे। कैसे करनी चाहिये तैयारी और जीत है क्या? विजय, सफलता किसे कहते हैं? क्या वास्तव में हमने आज तक जीत को समझ पाया है? क्या हमने वास्तव में आत्मा का गीत गाया है? क्या हमने आज तक संसार में सारभूत नवनीत को पाया है? न हम जीत को जान पाये हैं, न मीत को पहचान पाये हैं, न आत्मा के गीत को गा पाये हैं और न सारभूत नवनीत को प्राप्त कर पाये हैं। ये सब तभी संभव है जब पहले हमें यह समझ में आ जाये

कि जीत है क्या? एक व्यक्ति ने दूसरे इंसान को धक्का लगा दिया, वह नीचे गिर गया, दूसरा धक्का देने वाला सीना फुलाकर खड़ा है सोच रहा है मैंने उसे जीत लिया, किसी व्यक्ति ने दूसरे व्यक्ति को लाठी के माध्यम से प्रहार किया, वह लहुलुहान होकर जमीन पर गिर पड़ा वह लाठी मारने वाला अपने मन में सोच रहा है मैंने इसे जीत लिया, कोई व्यक्ति तलवार का वार करके सोचता है मैंने हजारों व्यक्तियों की हत्या कर दी तलवार के बल से मैंने सबको जीत लिया, तो कोई धनुष-बाण के माध्यम से जीत मानता है किन्तु आचार्य महोदय कहते हैं-तलवार की जीत से तो हार बहुत अच्छी है। तलवार की कोई जीत नहीं होती, तलवार की जीत तो हार में बदल जाती है, सच्ची जीत तो प्यार की जीत होती है।

जीत तो वह कहलाती है जिसमें सामने वाला व्यक्ति हारे नहीं और खुद की जीत हो जाये। यदि सामने वाले को हरा दिया, सामने वाले को पराजित कर दिया, सामने वाला आपकी दृष्टि में गिर गया तब तो जीत हो ही नहीं सकती। यदि शत्रु को मित्र बना लिया तब तो वास्तव में आपकी जीत है, जब शत्रु बन जाता है मीत, तब हो जाती है जीत। जब आत्मा में से प्रकट होने लगता है स्वभाव का संगीत तब समझ लेना हो गयी आपकी जीत। जब एक-एक रोम, आत्मा का एक-एक प्रदेश मूक भाषा में गाने लगता है मंगलमय गीत तब समझ लेना हो गयी आपकी जीत और जब आपके चित्त में अनंत चतुष्टय का प्राप्त हो जाता है नवनीत तब समझ लेना हो गयी आपकी जीत।

जब तक गुणों का नवनीत तुम्हारे पास नहीं है, जब तक चेतना का सहचर मनमीत तुम्हारे पास नहीं है, जब तक तुम्हारी आत्मा में कोई संगीत नहीं है जब तक रोम-रोम से पुलकित होने वाला कोई गीत तुम्हारे पास नहीं है तब तक जीत कैसी ? यदि जीत कर भी

व्यक्ति सिर पकड़ कर बैठा है, आँखों से आँसू बहा रहा है तो फिर जीत किस बात की? यदि एक भाई ने दूसरे को घायल कर दिया तो वह क्या सोचता है, क्या वह जीत गया, जब सिर पकड़ कर रो रहा है तो वह जीत है या हार ? इसे जीत नहीं कहा।

सावधान ! अंतरंग शत्रुओं से

एक चक्रवर्ती राजा का पुत्र अपनी माँ से चर्चा कर रहा है, कहता है माँ ! मैं बहुत बड़ा राजा बनूँगा। माँ कहती है बेटा अपने पिता से ज्यादा बड़ा राजा क्या बनेगा तेरे पिता छः खण्ड के राजा हैं चक्रवर्ती हैं तू कैसे राजा बनेगा? माँ मैं अपने पिता को जीतकर राजा बनूँगा। बेटा ! यदि पिता को जीतकर के तू राजा बनेगा तो तू बड़ा राजा नहीं कहलायेगा। बड़ा राजा वह कहलाता है-जो बाहर के शत्रुओं को नहीं अंतरंग के शत्रुओं को जीतना प्रारंभ करता है वही बड़ा राजा है। बाहर के शत्रुओं को जीतने के लिये अस्त्र-शस्त्र की आवश्यकता होती है, उन्हें जीतने के लिये अपनी सेना का विस्तार किया जाता है, व्यक्ति मौके की तलाश में रहता है, बाहर के व्यक्तियों से संदिग्ध रहता है। बाहर के शत्रु हमारे अंतरंग के वैभव को किंचित् भी नहीं छीन सकते। हमारे अंतरंग के वैभव को छीनने वाले चोर हमारे अंदर में बैठे हैं, बाहर के चोर केवल बाहर की वस्तु को लूट सकते है, अंतरंग की वस्तु को नहीं लूट सकते। बाहर के शत्रु हमें केवल शरीर से हरा सकते हैं, किन्तु हमारी आत्मा को नहीं हरा सकते।

प्रज्ञ पुरुष वही हैं जो अपने अंतरंग के शत्रुओं को जीतने का प्रयास करें। जिन संज्ञा चौथे गुणस्थान से प्रारंभ हो जाती है जिन्होंने मिथ्यात्व को जीत लिया चाहे क्षणभर के लिये ही सही, अन्तर्मुहूर्त के लिये ही सही मिथ्यात्व को दबा दिया उसने मिथ्यात्व को जीत लिया। वह जो अंतरंग का विकार, अंतरंग का शत्रु है इसको जीत लिया है तो एक देश जिनसंज्ञा प्रारंभ हो गयी। किन्तु बाहर के कितने भी शत्रु

जीत लो वह जिन नहीं बनता। जिनेन्द्र शब्द उसके लिये प्रयोग किया जाता है जो जित इन्द्रिय है वह जिनेन्द्र है। जिन वह है जो इन्द्रिय, अनिन्द्रिय को जीत चुका है, वह वास्तव में जिनेन्द्र है। महानुभाव ! अन्य कहीं शब्द आते हैं जितारि-अरिंजय ये शब्द केवल बाहर के शत्रुओं के लिये नहीं होते हैं जितारि का अर्थ होता है अंतरंग के रिपु मोह को जीत लिया, अरिजंय का अर्थ होता है सबसे बड़ा अरि हमारा मोहनीय कर्म है उसको जीतने वाला ही अरिंजय होता है।

तो महानुभाव ! अंतरंग के शत्रुओं को जीतने का प्रयास करना है किन्तु अंतरंग की ओर दृष्टि तब जाती है जब व्यक्ति की बाहर की चाहत बंद हो जाये, जब बाहर में ही शत्रु खड़े दिखाई दे रहे हैं, वह बाहर से ही निराकुल नहीं है तो अंतरंग की साधना कैसे करेगा? साधु अंतरंग के शत्रुओं से निपटने के लिये बाहर के शत्रुओं के हाथ जोड़कर साधु बन जाता है यदि एक राजा युद्ध में हार गया, वह नहीं जीत पा रहा है तो कोई बात नहीं, वस्त्र उतार दिये, पंचमुष्टि केशलोंच किया, हथियार फेंक दिये हाथ जोड़ लिये बस अंतिम क्षमा मैं आप के सभी गुनाह क्षमा करता हूँ, आप मेरे सभी अपराध क्षमा करें, मैं यथाजात दिगम्बर होने जा रहा हूँ। बाहर के शत्रुओं से तो हाथ जोड़े जा सकते हैं और बाहर के शत्रु हमारे हाथ जोड़ने से तुम्हारे प्रति समर्पित हो सकते हैं, बाहर के शत्रु इतने खतरनाक नहीं होते हैं जितने खतरनाक अंतरंग के शत्रु होते हैं। यदि आपके महल के बाहर शत्रु घूम रहें हैं तो वे आपका इतना अनिष्ट नहीं कर सकते जितना अनिष्ट महलों में रहने वाला कोई शत्रु कर सकता है।

तो महानुभाव ! योग्य शासक, कुशल सम्राट और एक अनुभवी राजा वह होता है जो महल के अंदर रहने वाले साँपों से पहले निपट ले, बाहर के शत्रुओं के लिये सेना बाद में तैयार कर पहले महलों में रहने वाले जो आस्तीन के साँप हैं, जो मित्र की पोशाक में रहने वाले

शत्रु हैं, जो दगा देने वाले हैं, पहले उनसे निपट ले फिर बाहर की सेना से भी निपटा जा सकता है, अन्यथा अंतरंग के शत्रुओं से निपटे बिना बाहर के शत्रुओं से कभी विजय प्राप्त हो ही नहीं सकती। झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई जितनी भी बार उसने पराजय को प्राप्त किया, जितनी बार भी असफल हुयी, तो अंतरंग के गद्दारों के द्वारा, चाहे कहीं भी उसने चढ़ाई की, धोखा ही धोखा मिलता गया, इसके कारण वह बार-बार टूटती चली गयी, फिर भी उसने हिम्मत नहीं हारी, अंत में शरीर तो छोड़ दिया किन्तु जाते-जाते आजादी का मिशन नहीं छोड़ा, अपना नियम नहीं तोड़ा, क्योंकि महापुरुष वही होता है वही प्रज्ञ, सम्मानीय, आदरणीय होते हैं जो अपने सद्संकल्प को नहीं छोड़ें, भले ही अपने जीवन को छोड़ दें, जिसका सद् संकल्प टूट गया, उसके पास बचा ही क्या, उसका तो सब छूट ही गया। तो महानुभाव, बहिरंग के शत्रुओं से निपटने के लिये भी अंतरंग के महल में रह रहे शत्रुओं को जानना जरूरी है, व्यक्ति जब भी झुकता है तो घर वालों के सामने झुकना पड़ता हैं, अपनों को तोड़ भी नहीं सकता, अपनों से मुँह मोड़ भी नहीं सकता अपनों को छोड़ भी नहीं सकता और अपना गद्दारी कर रहा है तो उसे अपने साथ जोड़ भी नहीं सकता।

दूध में पानी मिलाया जा सकता है किन्तु गाय के दूध में अकउआ का दूध नहीं मिलाया जा सकता है उसका वर्ण तो एक सा है किन्तु गुणधर्म में दोनों में बहुत अंतर है ऐसे ही व्यक्ति जब भी टूटता है तो बाहर के लोगों से कम टूटता है, बाहर वाले व्यक्तियों से उसे ये ही उम्मीद होती है कि बाहर वाले तो मुझे धोखा देंगे, वे मेरा साथ नहीं देंगे किन्तु जिन अंतरंग के व्यक्तियों पर विश्वास करता है कि ये जीवन के किसी भी क्षण में मेरा साथ नहीं छोड़ेंगे किन्तु यदि वही साथ छोड़ जायें तो दु:ख होता है। रावण को इस बात का दु:ख

नहीं कि राम और लक्षण मेरे साथ युद्ध करने आ रहे, रावण को दु:ख बाद में इस बात का था कि मैं अपने भाई को संभाल नहीं पाया, मैं भाई की बात को नहीं मान पाया और भाई को मैं मना नहीं पाया। मेरा भाई मुझसे छूट कर चला गया अब मेरी पराजय सुनिश्चित है। यह अंतरंग में उसने सोच लिया था। अंतरंग में यह भी संकल्प कर लिया था कि अब मुझे सीता वापिस कर देना चाहिये और वह सोच रहा था कि जीतकर के वापिस करूँगा, हारकर नहीं, घुटने टेककर मैंने सीता को वापिस किया तो लोग क्या कहेंगें मैं तीन खण्ड का राजा हूँ, कौन मेरी आज्ञा को मानेगा भूमिगोचरी के सामने घुटने टेक लिये, बस इतना ही। तुम्हें सीता देनी ही थी तो पहले उसे धूल चटा देते, उसे हरा देते फिर बाद में कहते चल ले जा सीता को। ये ही तो रावण कहना चाहता था पर कह नहीं पाया क्यों? क्योंकि अंतरंग उसका टूट गया।

यदि आपकी गाड़ी का बाहर से कहीं काँच टूटा हो तो चलेगी, बाहर से अन्य कहीं खरोंच भी है तब भी गाड़ी चलेगी किन्तु यदि गाड़ी में अंदर से कहीं इंजन खराब हो रहा है तो गाड़ी बाहर से कितनी भी अच्छी हो वह चल नहीं सकेगी। गाड़ी के पहियों में अंदर में जो हवा भरी है वह निकल जाये तो गाड़ी न चलेगी उस हवा का बहुत महत्त्व है।

आत्मविश्वास :

तैयारी जीत की करें किन्तु तैयारी जीत की तभी होती है जब पहले अंतरंग में आत्म विश्वास हो यदि आत्म विश्वास नहीं है तो आप अपने छोटे से शत्रु को भी जीत न पायेंगे और आत्म विश्वास हो तो बड़े से बड़े व्यक्ति को भी पराजित किया जा सकता है।

किसी नगर में न्यायप्रिय प्रजावत्सल, सुधी राजा राज्य करता था, वह पराक्रमी भी था शूरवीर भी था किन्तु उसके मन में अपने राज्य

विस्तार की कोई भूख नहीं थी, वह शांति से रहता था, अचानक ही किसी पड़ौसी देश के राजा ने आक्रमण कर दिया। वह नहीं चाहता था कि मैं युद्ध के लिये जाऊँ, वह तो संतोषी था, न्यायपूर्वक राज्य करता था, पड़ौसी राजा अपनी सीमा का विस्तार करना चाहता था, इसीलिये आकर उसने चढ़ाई की। किन्तु इस राजा को दूसरे की गुलामी स्वीकार नहीं थी, वह कहता है जब मैं इसे कुछ देता नहीं, इससे कुछ लेता नहीं, अपने राज्य का संचालन कर रहा हूँ, तो इसने आक्रमण कैसे कर दिया, उसने अपने देश के सैनिकों से कहा-तैयार हो जाओ युद्ध करने के लिये, सेना तैयार हो गयी किन्तु जैसे ही समाचार प्राप्त हुये कि शत्रु पक्ष की सेना इससे 10 गुनी है राजा मुश्किल में पड़ गया, जब 10 गुनी सेना है तो मेरे एक सैनिक पर 10-10 सैनिक टूट पड़ेंगे तो निःसंदेह मेरी पराजय है अब क्या करूँ, बड़ी मुश्किल है सेना तैयार भी कर ली, गर नहीं जाता हूँ तो कायर कहलाऊँगा, गर जाता हूँ तो मेरा देश बरबाद हो जायेगा, विजय की कोई गुंजाइश नहीं है, फिर भी उसने कहा हार नहीं मानूँगा, भले ही युद्ध क्षेत्र में वीरगति को प्राप्त हो जाऊँगा किन्तु महल में रहकर अधोगति में नहीं जाऊँगा, और सेना लेकर चलने लगा।

नगर के बाहर पहुँचा, सामने देखा पहाड़ी पर एक मंदिर है, उस मंदिर को देखकर याद आया कि इस मंदिर में जो तपस्या, साधना करता है सन्यास के साथ जीवन जीता है वह मेरे ही तो बचपन का मित्र है, वह भी तो राजकुमार था, हम दोनों ने साथ-साथ धनुर्विद्या, असि, मुद्‌गर, भाला, भिण्डमाल इत्यादि 14 कलायें साथ-साथ ही सीखी थीं किन्तु वह राज्य से विरक्त होकर सन्यासी हो गया और पिता से आज्ञा लेकर यहाँ तपस्या कर रहा है, मुझे उस मित्र के पास जाना चाहिये, वह मेरा घनिष्ठ मित्र है। वह राजा सेना को नीचे छोड़कर ऊपर पहाड़ी पर गया और मंदिर में पहुँचा, वहाँ वह उसका

मित्र (सन्यासी) केशरिया वस्त्र पहने ध्यान लगाये बैठा था, राजा ने जाकर उसे प्रणाम किया कहा-मित्र मैं तुमसे मिलने के लिये आया हूँ क्योंकि मैं युद्ध क्षेत्र में जा रहा हूँ और मुझे ये भी ज्ञात हुआ है कि सामने वाली सेना ज्यादा है मेरी सेना कम है, संभव है मैं वीरगति को प्राप्त हो जाऊँगा। फिर तुमसे मिलना कब हो पायेगा, इसीलिये तुमसे मिलने के लिये आया और ये भी सलाह लेने के लिये आया कि मैं युद्ध करूँ तो ठीक है या अभी युद्ध को टाल कर बाद में युद्ध करूँ तो ठीक रहेगा।

मित्र ने कहा-ये तो तुम भी जानते हो कि पड़ोसी राज्य की सेना बड़ी है तुम्हारी छोटी, फिर भी युद्ध करना तो जरूरी है। लेकिन मैं समझता हूँ कि व्यक्ति जब पूरी शक्ति के साथ युद्ध करता है तो विजय सुनिश्चित है, सामने वाली सेना कितनी ही बड़ी क्यों न हो, युद्ध सेना से नहीं जीते जाते, युद्ध तो आत्म विश्वास से जीते जाते हैं, यदि बहुत बड़ी सेना युद्ध जीत ले तो छोटी सेना तो कभी युद्ध जीत ही नहीं पायेगी, किन्तु अक्सर देखा यह जाता है कि जिसका मनोबल उच्च होता है जिसका आत्मविश्वास दृढ़ होता है वहाँ छोटी सेना भी बड़ी सेना पर बहुत भारी पड़ जाती है। पाण्डव पाँच थे और कौरव सौ विजय किनकी हुयी? पाण्डवों की। छोटे की विजय होती है क्योंकि उनमें बड़ा जोश, उत्साह और शक्ति होती है, वे अपनी पूरी शक्ति लगा देते हैं जिनके पास बड़ी सेना होती है वे प्रमादी हो जाते हैं।

वह सन्यासी कहता है मुझे तुम्हारी विजय सुनिश्चित लगती है। मैं तो यही कहूँगा कि तुम्हें युद्ध के लिये जाना चाहिये किन्तु फिर भी देखो हम और आप तो सामान्य मनुष्य हैं हम अपने देवता से जाकर पूछते हैं कि हमारा देवता युद्ध के लिए क्या कहता है? हमें अपनी आन-बान की रक्षा करना चाहिये यदि आन बान की रक्षा करने का

ये अवसर है तो देवता कह देगा हाँ युद्ध करना चाहिए यदि नहीं है तो देवता कह देगा ना, तो हम युद्ध नहीं करेंगे। उस राजा ने पूछा-देवता कैसे कहेगा-चलो चलकर देखते है। वहाँ गये, एक सिक्का उठाया और उसने (सन्यासी ने) अपने मित्र (राजा) से कहा-देखो मित्र ! ये सिक्का है, चित पड़ता है तब तो नि:संदेह तुम्हारी जीत है ही यदि पट पड़ता है तब नि:संदेह ये मानना पड़ेगा कि तुम्हारी पराजय संभावित है, देखते हैं। सन्यासी ने वह सिक्का लेकर उछाला और सिक्का नीचे गिरा देखा तो सिक्का चित था। बोल उठा अब तो हमारी विजय निश्चित है। अब तो हमें कोई हरा नहीं सकता, देवता ने कह दिया कि युद्ध करने जाना ही चाहिये। सन्यासी ने कहा तुम चिन्ता मत करो, तुम सदैव न्याय नीति, धर्म के साथ रहे हो, ये सामने वाला राजा तुम्हारे ऊपर आक्रमण करने आया है तुम्हें अन्याय का साथ नहीं देना है, तुम्हें अन्याय का विरोध करना है। धर्म की विजय ही होती है, तुम धर्म की रक्षा के लिये युद्ध करने जा रहे हो इसके लिये मैं भी चलूँगा, इतना ही नहीं मैं तुम्हारा सेनापति भी बनूँगा।

दोनों मित्र थे वह (राजा) बोला-आप सन्यासी होकर मेरे साथ चलोगे-तो उसने कहा-मैं सन्यासी धर्म की रक्षा के लिये हूँ यहाँ पर रहकर भी धर्म की रक्षा करूँगा, वहाँ जाकर भी धर्म की रक्षा करूँगा। जो धर्म को कुचलना चाहते हैं, अधर्म की पताका फहराना चाहते हैं, जो न्याय की धज्जियाँ उड़ाना चाहते हैं, अन्याय को मण्डित करना चाहते हैं और जो पापों को सिंहासन पर स्थापित करना चाहते हैं वे मेरे जीते जी ऐसा न कर सकेंगे, मैं न्याय के लिये लडूँगा, धर्म के लिये युद्ध करूँगा, मैं यहाँ बैठा नहीं रहूँगा, पाप की पुष्टि नहीं करूँगा अन्यथा सज्जनता, धर्मता, सदाचार सब नष्ट हो जायेगा और सब दुनिया में भ्रष्टाचार फैल जायेगा। राजा ने कहा-ठीक है-जैसा आप उचित समझें।

सन्यासी सेनापति बनकर उसके साथ गया और सेना के सामने जाकर एक जोशीला भाषण दिया जिससे सभी सैनिकों के रग-रग में खून का उबाल आ गया, रोम-रोम पुलकित हो गया और एक-एक सैनिक इस प्रकार की सामर्थ्य से युक्त हो गया कि 100 पर भारी पड़ जाये। सामने वाली सेना तो यह सोच रही थी कि युद्ध करने क्या आयेंगे हमारी इतनी बड़ी सेना को देखकर तो वैसे ही भाग जायेंगे, वे मन में अपनी विजय की निश्चितता मान कर खुश हैं किन्तु जब व्यक्ति प्रमाद में होता है तब नि:संदेह अपनी विभूति को खो देता है, युद्ध का बिगुल बजा और युद्ध प्रारंभ हुआ। शत्रु पक्ष संभल भी न पाये तब तक राजा के सैनिक उन पर टूट पड़े। एक-एक सैनिक 50-50 पर हावी हो गया और जिसके पास जो-जो शस्त्र था वह उसके साथ संलग्न हो गये देखते-देखते सामने वाली सेना लगभग 75% धराशाही हो गयी। 25% सेना जब बची तब राजा ने (शत्रुपक्ष) मुड़ कर देखा अब वह जोश में आकर युद्ध करता है किन्तु जब देखा कि 75% सेना धराशाही हो गयी तब शेष बची 25% सेना भी निर्बल पड़ गयी, अब हम क्या जीत पायेंगे, अंत में हुआ ये कि आक्रमण करने वाला वह राजा दुम दबाकर भाग गया मुश्किल से 10% सेना ही उसकी बची।

महानुभाव ! विजय प्राप्त करके राजा और उसका नया सेनापति (सन्यासी) लौट करके आये। राजा ने उससे कहा-पहले हम नगर में अपनी विजय की खुशी मनायेंगे फिर आप जाकर पुन: तपस्या में रत हो जाना। सन्यासी ने कहा-नहीं, जिस देवता की कृपा, जिनके आशीष से हमने विजय प्राप्त की है उन्हें पहले धन्यवाद देने तो चलें, वे धन्यवाद देने गये, पहुँचकर देवता को प्रणाम किया, कहने लगे-धन्य हैं हे देव ! आपकी कृपा से हमें विजय प्राप्त हो गयी। सन्यासी सेनापति कहता है विजय तो प्राप्त होनी ही थी। राजा ने कहा

ऐसे-कैसे विजय प्राप्त होनी थी। यदि ये सिक्का उल्टा हो जाता तो ? सन्यासी ने कहा-वह कभी उल्टा हो ही नहीं सकता था, पट नहीं हो सकता। मतलब! मतलब ये कि मेरे जीवन का सिक्का कभी उल्टा नहीं होता मैंने जीवन में कभी पराजय को स्वीकार ही नहीं किया। पराजय शब्द, हार शब्द ये मेरे शब्द कोष में नहीं है। सिक्का तो सीधा पड़ना ही था। राजा ने कहा ऐसे कैसे कहते हो? सन्यासी ने कहा-यदि नहीं मानते हो तो जाकर देख लो पुनः सिक्का उछाला सिक्का फिर भी सीधा पड़ा, दुबारा उछाला फिर भी सीधा पड़ा। आखिर में बात क्या है? बस! मेरे सिक्के में एक ही पक्ष है दूसरा पक्ष तो है ही नहीं। जिसका सिक्का सदैव चित ही चित रहता है। उसके जीवन में सिक्का कभी पट हो ही नहीं सकता।

तो महानुभाव ! ये आत्म विश्वास सन्यासी में तो था किन्तु राजा में डगमगा रहा था इसीलिये जब आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ा तो युद्ध को जीतकर भी आ गये। ऐसे ही हम भी किसी भी क्षेत्र में आत्म विश्वास के साथ आगे बढ़ें। एक जल की बूंद आत्मविश्वास के साथ कठोर चट्टान पर भी पड़ती है तो वह छेद कर देती है, उसको विश्वास है कि मैं नष्ट नहीं हो सकती। ऊपर आकाश से गिरने वाली बूँद अपने आपको सिंधु मानकर आती है। वह बिंदु सिन्धु में मिलकर सिंधु ही बन जाती है। तो महानुभाव ! पहली बात है-"आत्मविश्वास"।

दृढ़ संकल्प और उसके कारण

आत्म विश्वास दृढ़ होता है संकल्प की दृढ़ता से। जितना गहन आत्मविश्वास है उतना ही दृढ़ संकल्प हो सकता है और जितना दृढ़ संकल्प होता है उतना ही आत्म विश्वास मजबूत होता है दोनों एक दूसरे के पूरक हैं यदि धूप तेज हो तो सिद्ध है कि सूर्य प्रचंड है, यदि सूर्य का प्रचंड उदय है तो धूप भी तेज रहेगी, दोनों एक दूसरे से अलग नहीं हैं, दो दिखाई दे रहे हैं किन्तु एक ही हैं ऐसे ही

आत्मविश्वास और संकल्प। संकल्प की दृढ़ता और आत्मविश्वास एक दूसरे के पूरक हैं। दूसरी बात यह है कि संकल्प में दृढ़ता आती है इन बातों से-

उत्साह–आत्मा के प्रत्येक प्रदेश में उत्साह हो। जिसके अंतरंग का उत्साह मर गया है वह दृढ़ संकल्प ले नहीं सकता, उत्साह मरते ही आत्मविश्वास के पौधे को दीमक लग जाती है और उत्साह भंग होते ही वह दीमक आत्मविश्वास को धीमे-धीमे खोखला कर देती है संकल्प की जड़ को काट देती है, संकल्प का वृक्ष धराशाही हो जाता है, वह उत्साह हीनता का घुन अंदर से जीर्ण-शीर्ण कर देता है। इसीलिये आत्मविश्वास को वृद्धिंगत करने के लिये अनिवार्य है कि जीवन में उत्साह हो और मैं मानता हूँ कि जीवंत व्यक्ति वही है जिसके जीवन में उत्साह हो। दूसरी बात है-

प्रवाह–संकल्प की दृढ़ता और आत्मविश्वास की वृद्धि जीवन के प्रवाह से होती है जिसका जीवन कूटस्थ है जो यह कहना सीख गया कि जो मिल गया सो ठीक है जो भाग्य में लिखा था सो मिल गया और क्या चाहिये, अब क्या मिलेगा इस प्रकार के शब्द बोलने वाला व्यक्ति संकल्प को दृढ़ नहीं कर सकता आत्मविश्वासी नहीं हो सकता। आत्मविश्वासी कहता है-एक बार जो मन में ठान लिया उसे मैं पूरा करके ही रहूँगा चाहे कुछ भी हो जाये चाहे सूर्य पूरब का पश्चिम से उग आये या पश्चिम में ढलता है तो पूरब में ढल जाये मुझे इस बात की कोई परवाह नहीं है किन्तु मैं अपने उद्देश्य को पूरा करके ही रहूँगा, जैसे कि-विमलवाहन राजा ने अपने संकल्प को, उद्देश्य को पूरा किया, पद्मरथ राजा ने अपने संकल्प को पूरा किया, इसी प्रकार से संकल्प को पूरा करने वाला वह एकलव्य अपने संकल्प को आत्मविश्वास की दृढ़ता से पूरा किया।

कितने सारे उदाहरण हैं जो व्यक्ति संकल्प का धनी होता है वह अपने लक्ष्य को जीवन में प्राप्त करके ही रहता है, कितना ही ऊँचा लक्ष्य हो, कितना ही दूरवर्ती लक्ष्य हो, कितना ही दुर्लभ लक्ष्य हो किन्तु संकल्प का धनी लक्ष्य को प्राप्त करके रहेगा। संकल्प के पास विकल्प नहीं होते और विकल्प के साथ संकल्प नहीं चलता है। संकल्प अकेला ही चलता है विकल्प अनेक होते हैं, विकल्प तो कुत्तों की तरह भौंकते रहते हैं चेतना के धरातल पर उन विकल्पों के श्वानों की जो सुनवाई करता है वह संकल्प के हाथी पर सवार होकर चल नहीं सकता या तो विकल्पों के श्वानों की भौंकने की आवाज सुनकर भाग जाओ घर में बैठ जाओ और यदि संकल्प के गजराज पर सवार होकर के जाना है तो विकल्पों के श्वान की चिंता नहीं करना, कुछ दिन तक भौंकेंगे बाद में विकल्पों के श्वान शांति से बैठ जाऐंगे। तो जीवन कूटस्थ न हो, चलते रहो और अगली बात है।

सुराह–संकल्प दृढ़ तब हो जाता है जब आपको पग–पग पर यह विश्वास हो जाता है कि मैंने जो संकल्प लिया है वह सही है। सही राह का संकल्प लिया है दुनिया मेरे संकल्प की सराहना कर रही है कि वास्तव में यही राह सही है। शिथिल संकल्प, शिथिल व्यक्तित्व की निशानी है तो महानुभाव ! पहला सूत्र है तैयारी जीत की–आत्म विश्वास–सद्संकल्प चेतना के आत्म प्रदेशों में पहले आत्मविश्वास जगाओ, चेतना के प्रदेशों में प्रकाश भर दो और जब तक चेतना के प्रदेशों में प्रकाश नहीं होता है तब तक चेतना अंधकारमय रहती है, उसका आत्मविश्वास ही नहीं होता, जीवन में कभी संकल्प ही नहीं ले पाता। एक व्यक्ति ऐसा भी होता है जो देवदत्त की तरह से भीष्म प्रतिज्ञा भी ले लेता है यावज्जीवन मैं ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करूँगा, एक व्यक्ति ऐसा भी होता है जो एक दिन के लिये भी किसी अभक्ष्य का त्याग नहीं कर पाता है।

महानुभाव ! जिसका आत्म विश्वास कमजोर होता है ऐसा व्यक्ति जीवन में कभी संकल्प ले ही नहीं सकता और बिना दृढ़ संकल्प लिये व्यक्ति का व्यक्तित्व भी दृढ़ता को प्राप्त नहीं होता है। कई बार लोगों को देखा है-महाराज जी ! मैं नियम नहीं लूँगा यद्यपि मैं अभक्ष्य वस्तु का सेवन नहीं करता, मैं नित्य पूजन तो करता हूँ पर नियम नहीं लूँगा इस बात का, तो जिसका आत्मविश्वास कमजोर है वे व्यक्ति जीवन में नियम नहीं ले सकते और जिसका आत्मविश्वास बहुत दृढ़ है वे नियम लेते समय एक मिनट भी नहीं सोचते हैं, सैकिण्डों में नियम के लिये अग्रिम रहते हैं। नि:सन्देह संकल्प का कमजोर होना व्यक्ति को अंतरंग से डवाडोल कर देता है। एक बार साहस करके संकल्प को अपनाएँ वरना कमजोर संकल्पी कई बार सामने रखी मंजिल को भी प्राप्त नहीं कर पाता वह प्राप्त करने की आशा ही छोड़ देता है। डॉ. कह रहा है कुछ नहीं हुआ चिंता न करो किन्तु वह तो जीने की आशा ही छोड़ देता है डॉ. साहब अब मैं जी न सकूँगा। जिसके मुख से, आत्मा के प्रदेशों से आवाज यह निकल रही है कि अब मैं जी नहीं सकूँगा तो डॉ. उसे बचा न सकेगा और जो ये कह रहा है कि मेरा कोई बाल बांका भी नहीं कर सकता मैं जी कर ही रहूँगा उसे कोई मार नहीं सकता।

एक महानुभाव ! अस्वस्थ हुये अस्वस्थता में उनका बी.पी. डाउन हुआ। डॉक्टरों से सम्पर्क किया सबने यही कहा कि ये व्यक्ति अब जीवित नहीं रह सकता, रात्रिकाल है जल्दी से जल्दी या तो एडमिट कराओ अन्यथा ये प्रात:काल का सूर्य न देख सकेंगे। उस डॉ. ने कहा मैं लिखकर दे सकता हूँ जिस स्पीड से इनका बी.पी. गिरता चला जा रहा है लूजमोशन हैं ये ज्यादा जी नहीं सकेगा। व्यक्ति जो बेहोश सा पड़ा था वह उठकर कहता है मैं प्रात:काल का सूर्य देखूँगा। आप निश्चिंत रहिये। वह डॉ. कहता है देखता हूँ और बाहर आकर

कहता है ये व्यक्ति अंदर से बहुत पॉवरफुल है। इसकी शरीर की स्थिति तो यही कहती है कि जी नहीं पायेगा, किन्तु प्रात:काल जब हुआ तो उस डॉ. ने भी उसके चरणों में माथा रख दिया वास्तव में मैं मान गया कि ऐसा भी होता है कि व्यक्ति जब जीता है तो वह केवल शरीर की शक्ति से नहीं वह अपने मनोबल से, आत्मबल से जीता है। कई बार व्यक्ति एक उपवास में ही मूर्च्छित सा हो जाता है और कोई व्यक्ति 32 उपवास भी कर लेता है तब भी मूर्च्छित नहीं होता, कहाँ से शक्ति आयी?–उसका आत्मबल!

लक्ष्य का निर्धारण

महानुभाव ! जिस व्यक्ति के अंदर जीने की जिजीविषा है, जिस व्यक्ति के अंतरंग में आत्मबल जितना उत्कृष्ट है उसे मौत भी आकर मार नहीं सकती। मौत भी सामने खड़ी होकर जा सकती है, मौत भी साष्टांग प्रणाम करके जायेगी। कहेगी तुम और जीवित रहो मैं तुम्हें नहीं मार सकती, मैं तुम्हे मारने आयी तो मैं मर जाऊँगी तुम तो अजर-अमर हो जाओगे। महानुभाव ! नि:संदेह जीत की तैयारी पहले यहाँ से प्रारंभ होती है। अगली बात है।

लक्ष्य का निर्धारण

जीत की तैयारी के लिये लक्ष्य तो बनाओ। तुमने जो टारगेट बनाया है, जो गोल बनाया है वह क्या है कहाँ तक पहुँचना है। मंजिल क्या है? तुमसे कोई पूछे भाई कहाँ जा रहे हो? तो क्या कहोगे-भईया मुझे पता नहीं ! अरे भईया तो फिर किसे पता है?

एक व्यक्ति गधे पर सवार होकर जा रहा था उससे पूछा कहाँ जा रहे हो? वह बोला-गधा जहाँ ले जाये वहाँ? बोले-दोनों गधे हैं। तो ऐसे जो व्यक्ति जिसे अपने लक्ष्य का मालूम नहीं, वह कभी बुद्धिमान नहीं हो सकता और गधे के ऊपर गधे ही बैठ सकते हैं घोड़े थोड़े ही

बैठ सकते हैं। लक्ष्य का निर्धारण-तो करना ही चाहिये कि हमें पहुँचना कहाँ है। ऐसा नहीं घर से निकले-कहाँ जाना है? पता ही नहीं कहीं भी पहुँच गये, ऐसा तो सिर्फ उन्मत्त व्यक्ति कर सकता है, पागल व्यक्ति कर सकता है, नशे में चूर व्यक्ति कर सकता है। जिसके पास थोड़ी सी भी बुद्धि होगी, छोटा बालक भी होता है वह कहकर जाता है कि पापा मैं स्कूल के लिये जा रहा हूँ या मित्र के यहाँ जा रहा हूँ, या कहीं और जा रहा हूँ, जो कहकर जाता है वह वहाँ पहुँच भी जाता है यदि पहुँचना चाहे तो यात्रा प्रारंभ करने से पहले लक्ष्य का निर्धारण कर लेना चाहिये जो व्यक्ति जीवन में लक्ष्य का निर्धारण नहीं करता है। वे जीतने की बात तो छोड़ो, जीतने की तैयारी भी नहीं कर रहे। महानुभाव ! लक्ष्य का निर्धारण करने में दो बातें जरूरी हैं-वे दो बातें हैं-

विवेकपूर्वक करें लक्ष्य का चयन

आप लक्ष्य का निर्धारण करने जा रहे हैं आपके जीवन में दो बातें बहुत जरूरी हैं-'विवेक'-आपके पास ज्ञान होना चाहिये जिस लक्ष्य को आप प्राप्त करना चाहते हैं उसे विवेक से सोच लें क्या वह वास्तव में आपके चुनने के योग्य है। कोई व्यक्ति लक्ष्य बना ले कि मैं सामने वाले मकान को तोड़ कर रहूँगा तो ये लक्ष्य बनाना अविवेकपूर्ण कार्य है, अच्छा नहीं है, यह संहारक कार्य है, ये कहीं उत्थान जनक कार्य नहीं है। लक्ष्य का निर्धारण करने से पहले विवेक को जाग्रत रखो, उसे यह सोच समझ करके बनाओ कि जिसे देख लोग भी कहें कि हाँ क्या लक्ष्य बनाया है तुम्हें ऐसा ही लक्ष्य चुनना चाहिये, तुम्हारी बुद्धि, 100% यही कहे कि जो लक्ष्य तुमने चुना है वह बहुत अच्छा चुना है। जैसे कोई व्यक्ति चुनता है कि मैं जीवन में उत्तम समाधि को स्वीकार करूँगा, बहुत अच्छा लक्ष्य चुना है। मैं जीवन में मुनि बनकर ही रहूँगा, ऐसा पुण्य कार्य जरूर करूँगा। यदि

ऐसा लक्ष्य चुना है तो आपने विवेकपूर्वक चुना है तो आपका लक्ष्य विश्वप्रशंसनीय है, विज्ञ पुरुषों के द्वारा सराहनीय है, धर्मात्मा सुधी श्रावकों के द्वारा अभिवंदनीय है, तो ऐसे लक्ष्य का चयन करें ऐसे लक्ष्य का चयन विवेकपूर्वक ही होता है, मूर्खता पूर्वक नहीं हो सकता। दूसरी बात है लक्ष्य का चयन करते समय-

अपनी क्षमताओं का सम्यक् मूल्यांकन–लक्ष्य का चयन तो कर लिया। कोई के.जी. का बच्चा सोचे कि वर्ष के अंत में 10वीं की परीक्षा दूँगा तो वह अपनी क्षमता नहीं देख रहा कि मैं वहाँ तक पहुँच पाऊँगा या नहीं, एक साल में कितना पढ़ जायेगा, नहीं कर पायेगा, अपनी क्षमता को देख लें। कोई कहे मैं इस 9 इंच के नाले को दौड़कर छलांग लगाकर पार कर लूँगा, तो लक्ष्य तुम्हारी क्षमता के अनुकूल नहीं है। इस पर छोटा बालक कहेगा तुम दौड़कर के आओगे तब 9 इंच के नाले को छलांग लगाकर पार करोगे मैं तो अपने छोटे पैरों से ऐसे ही छलांग लगाकर पार कर लूँगा। यदि ऐसा भी लक्ष्य बनाओगे तो भी आप अपमान जनक स्थिति को प्राप्त होंगे।

तो लक्ष्य का निर्धारण करते समय ये दो बातें बहुत जरूरी हैं, उन्हें ध्यान रखना है। जो व्यक्ति अपने विवेक व क्षमताओं को ध्यान में रखते हुये अपने लक्ष्य का निर्धारण करता है वह निःसंदेह लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये समर्थ होता है।

लक्ष्य को प्राप्त करने में अगला कारण है-

जीवन में अदम्य साहस–साहस कैसा हो जो दुर्दमनीय हो जो कठिनाई से दमित करने योग्य हो जिसे सहज दबाया नहीं जा सकता। साहस बूंदी के लड्डू की तरह से नहीं हो जिसे कोई भी आकर के दबा दे, साहस तोप के गोले की तरह से हो जिसे कोई दबाने का प्रयास करे तो वह वहीं विस्फोट कर जाये, उस दबाने वाले को मजा

चखा सके, वह बता सके कि मेरे साहस को चुनौती देना सोते हुये शेर को जगाना है, मुझे चूहा नहीं समझ लेना, इसीलिये जीवन में जब भी कोई कार्य करना हो तो उसके लिये दुर्दमनीय साहस हो। वह अदम्य साहस कैसे पैदा होता है-आप जानते हैं? वह साहस होता है दमन करने से, अदम्य साहस आता है अपनी इच्छाओं का दमन करने से, इन्द्रियों का दमन करने से, विषय वासनाओं का दमन करने से। जिसने इन सबका दमन कर दिया है उसके जीवन में अदम्य साहस हो सकता है जो अपनी इच्छाओं का दमन नहीं कर सकता, बार-बार इच्छा पैदा हो रही है उसका मन हो रहा है ये भी मिल जाये, वो भी मिल जाये, भईया ! क्या करोगे? नहीं बस ऐसे ही मन कर रहा था, अरे ! तुम्हारा मन कभी कुछ करता है कभी कुछ करता है ऐसा व्यक्ति कभी अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं करता, इन्द्रियों को और मन को तो दृढ़ सांकल से बांधना पड़ेगा, दमन करना पड़ेगा तब आप किसी लक्ष्य की ओर आगे बढ़ सकते हैं। इन्द्रियों की उच्छ्रंखलता बैल को भी अपने स्थान पर नहीं पहुँचने देती, एक बकरी और गाय को भी नहीं पहुँचने देती, उसकी इन्द्रियाँ बार-बार उससे कहती हैं यहाँ से मुँह मार-यहाँ से खा, वह अपनी मंजिल तक नहीं जा पाता। अपनी इन्द्रियों को कछुए की तरह से समेट करके अनवरत गति से जो बढ़ता है वह जीत जाता है और जिसकी इंद्रियाँ खरगोश की तरह उच्छ्रंखल हैं वह रास्ते में ही पड़ा रह जाता है।

कछुए का आशय-कहानी कहती है कि कछुये और खरगोश की दौड़ में कछुआ ही जीतेगा। कछुये का आशय होता है जो अवसर पर अपनी इन्द्रियों को सिकोड़ना जानता है, जो इन्द्रिय विजयी है, जो अदम्य साहस का धनी है, जो केवल दुर्दमनीय ही नहीं, कमनीय है कमनीय मतलब इच्छाओं को पूर्ण करने में समर्थ है। ऐसा व्यक्ति जो अदम्य साहस से युक्त है वह व्यक्ति निःसन्देह अपने लक्ष्य को प्राप्त

करने में समर्थ होता है। अदम्य साहस प्रकट होता है क्षमा भाव से।

साहस शब्द में तीन अक्षर है, 'सा'-कहता है-साथ, 'ह'-कहता है हमेशा और अंत का 'स' कहता है-सत्य। अदम्य साहस जीवन में तभी पैदा होता है जो हमेशा सत्य को साथ लेकर के चलता है, सत्य जिसके प्राणों में हमेशा निवास करता है उसी के जीवन में अदम्य साहस होता है जो झूठ के रास्ते पर चलता है, उसके जीवन में कभी अदम्य साहस नहीं हो सकता। लोग कहते हैं चोर के कितने पाप होंगे? यदि चोर सामने आ जाये और आपने डाँट दिया तो वह घबरा जायेगा। यदि आपने हाथ में बंदूक ले ली तो वह तो बस पैर पकड़ लेगा। बुंदेलखण्ड में एक विधायक थे एक बार उन्हें डाकुओं ने घेर लिया वे अपने साथ में लोटा, डोरी व छन्ना लेकर जाते थे। उनका वह झोला उनके साथी पर था जैसे ही डाकुओं ने उन्हें घेरा तो वह अपने साथी से बड़े जोर स्वर में कहते हैं ला निकाल झोले में से, अभी इनको देखता हूँ बस इतना सुनते ही वे भाग गये। उस विधायक के पास कोई अस्त्र-शस्त्र तो था ही नहीं पर फिर भी अंदर के अदम्य साहस के कारण वे डाकू उनका घात नहीं कर सके। तो महानुभाव! तीसरा था-अदम्य साहस अगली चौथी बात है-

निरंतर उद्यमशीलता-सिर्फ आत्मविश्वास के सहारे से मंजिल नहीं मिलती है और सिर्फ लक्ष्य का निर्धारण करने से लक्ष्य प्राप्त नहीं होता है और न सिर्फ अदम्य साहस से मंजिल स्वयं खिसक कर आती है, निरंतर उद्यमशीलता भी चाहिये। निरंतर के मायने-बिना अंतर के, कोई गैप नहीं होना चाहिये। अनवरत, लगातार जुटे रहना, एक क्षण के लिये भी यदि प्रमादी हो गये तो हो सकता है चूक जाओ।

84 लाख दरवाजे का एक कोट जिसमें 83 लाख 99 हजार 999 दरवाजे बंद हैं केवल एक दरवाजा खुला है। अंधा व्यक्ति जिसके सिर

में खुजली हो रही है खुजाता हुआ चला जा रहा है जैसे ही खुले दरवाजे तक पहुँचता है खुजली हो जाती है और वह चूक जाता है। ऐसे ही जीवन में यदि आप कहीं चूक गये, एक बार भी यदि अंतर पड़ जाता है तो वह 84 लाख दरवाजे का महल एक संसार है जो दरवाजा खुला है वह मनुष्य गति है, मनुष्य योनि है, इसमें से मुक्ति की प्राप्ति हो सकती है, 83 लाख 99 हजार 999 से मुक्ति की प्राप्ति नहीं होती। ये तो एक उदाहरण है, यहाँ मैं आपसे कहना चाह रहा हूँ कि उद्यम शीलता हो, निरंतर आप परिश्रम करते रहो यदि आप एक क्षण के लिये भी सो गये तो जो सोता है सो खोता है। सोने वाला व्यक्ति कभी पाता नहीं है जो जागता है वही व्यक्ति नि:संदेह जीता है, सोता व्यक्ति तो मुर्दे के तुल्य कहलाता है इसलिये सदैव जागरुक रहो, सावधान रहो, जाग जाओगे तो नि:संदेह पाने में सफल हो जाओगे।

कर्मण्ये वाधिकारस्तु मा फलेषु कदाचिन

जो व्यक्ति उद्यमशील होता है वह फल मांगता नहीं है उसे फल की प्राप्ति स्वत: हो जाती है। तो महानुभाव ! उद्-उत्कृष्ट, यम-यावज्जीवन शीलता-स्वभाव। जिसका स्वभाव हो गया है निरंतर उत्कृष्ट उद्यम करने का, ऐसे व्यक्ति से सफलता कोई छीन नहीं सकता है, जो निरंतर परिश्रम करने के लिये तैयार रहता है, सफलता उसके पास आ जाती है। जो आलसी होता है, प्रमादी होता है, निद्रालु होता है, ईर्ष्यालु होता है, झगड़ालू होता है, ऐसा व्यक्ति लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाता। जो व्यक्ति उद्यमशील होता है जो अपने लक्ष्य के प्रति सदैव जागरुक रहता है उसका लक्ष्य उसे अर्जुन की तरह से मछली की आँख की तरह से दिखाई दे रहा है, ऐसा व्यक्ति एक क्षण भी यदि चूक गया तो लक्ष्य तक न पहुँच पायेगा, ऐसे ही जीवन में निरंतर उद्यमशीलता होनी चाहिये और इसके उपरांत जीवन में जो आवश्यक बात है वह है-

धैर्य और विनम्रता

यदि व्यक्ति बाहर के शत्रुओं को जीतने की तैयारी कर रहा है। जीवन में आगे भी बढ़ा आत्मविश्वास के साथ, लक्ष्य का निर्धारण भी कर लिया, अदम्य साहस भी उसके पास है, वह निरंतर उद्यमशील भी है किन्तु इन सबके साथ उसे अहंकार आ गया, उसे अहंकार आ गया कि इस कार्य को तो बस मैं ही कर सकता हूँ, बस इतनी सी बात यदि उसके मन में आ गयी तो समझो सब किये कराये पर पानी फिर गया। यदि उसके जीवन में अधीरपना आ गया वह सोचता है मैंने आज ही खेत की जुताई करके खाद भी डाला है सिंचाई भी की है, आज ही आम की गुठली बोई है दूसरे ही दिन मुझे आम खाने को मिल जाये, तो ऐसा व्यक्ति भी सफलता को प्राप्त नहीं कर सकता।

एक व्यक्ति ने खेत में बीज बोकर बार-बार उसे खोदकर देख लिया इससे फल थोड़े ही मिल जायेगा, ऐसे अधीर व्यक्ति को सफलता नहीं मिलती उसके लिये धैर्य की आवश्यकता है। धैर्य किसे कहते हैं-'धी' शब्द होता है बुद्धि के अर्थ में, 'र' रखता है, 'धीर' जो सदैव बुद्धि को रखता है अथवा धैर्य का अर्थ होता है-जो सदैव धीरे-धीरे चलता है, कछुए की तरह से। धैर्य-'य' यम रूप से, 'यमित' जिसकी धी यमित रूप से जीवंत जीवन भर रहती है ऐसा व्यक्ति धैर्यवान हो सकता है। जो धीमान् है वही धैर्यवान है और जो धीमान् नहीं है वह व्यक्ति धैर्यवान् नहीं हो सकता, क्योंकि बुद्धिमान व्यक्ति का लक्षण है गम खाना, कम खाना और नम जाना ये बुद्धिमान का लक्षण है। वह बुद्धिमान जानता है कि-

धीरे-धीरे रे मना धीरे सब कुछ होय।
माली सींचे सौ घड़ा ऋतु आये फल होय॥

ऐसा नहीं कि आज ही बोया आज ही प्राप्त हो जाये जब ऋतु आयेगी तभी फल मिलेंगे चाहे उस वृक्ष की सिंचाई जल से नहीं दूध

घी अमृत किसी से करो तब भी ऐसा नहीं होगा कि आज ही बीज बोओगे तो आज ही फल प्राप्त हो जायेगा। कर्म का बंध होता है उसका फल तत्काल में नहीं मिलता, उसके भी बीच में आबाधा काल होता है। उसके बाद ही उसका फल मिलता है। महानुभाव ! जल्दी-जल्दी कोई काम नहीं होता इसके लिये धैर्य की आवश्यकता है और इसके साथ ही आवश्यकता है विनम्रता-धैर्य यमित रूप से बुद्धि के साथ हो, धैर्य विनम्रता के साथ किया गया पुरुषार्थ तो कभी भी विफल नहीं होता। विनम्रता के मायने आप जानते ही हैं-''विशिष्टं नम्रता इति विनम्रता'' जो विशेष बहुत ही नम्र है नम्रता का आशय होता है जो झुक कर चल रहा है अर्थात् जिसके ऊपर कोई बोझ आ गया, गुणों का भार होता है तो व्यक्ति झुक जाता है। जब तक गुणों का भार नहीं होता तब तक व्यक्ति अकड़ कर चलता है, तो महानुभाव! अगला सूत्र है इस तैयारी जीत की में वह है-

उपलब्धि की पात्रता-उपलब्धि की पात्रता के मायने हैं कि वास्तव में उस उपलब्धि के योग्य आप हैं या नहीं। आपकी क्षमता उस वस्तु को पचाने की है या नहीं। उपलब्धि की पाचन शक्ति से कही बीमार तो नहीं पड़ जायेंगे, जिस वस्तु के लिये, जिस टार्गेट के लिये आप ड़िजर्व करते हैं वह चीज भी आपके लिये रिज़र्व है। आप जिसके लिये रिज़र्व नहीं करते यदि वह वस्तु आपने प्राप्त भी कर ली तो उसे आप भोग नहीं पायेंगे कोई उसे छीन कर ले जायेगा, आपके पास यदि रखी भी रही तो सड़ जायेगी गल जायेगी नष्ट हो जायेगी किन्तु आप उसे भोग न पायेंगे। इसलिये जीवन में उतनी क्षमता भी जगाओ केवल वस्तु को प्राप्त कर लेना ही सब कुछ नहीं होता है एक चोर चोरी करके धन को ला सकता है किन्तु उसे वह सबके सामने भोग नहीं सकता है। व्यक्ति जो है और जिसके लायक वह है उतना ही कार्य करता है तो लायक बन जाता है और जिसके लायक नहीं

है और कार्य करता है तो वह लायक नहीं, ना सहित हो जाता है। ऐसे व्यक्ति मंजिल को प्राप्त करके भी मंजिल की सफलता का लाभ नहीं ले सकते। इसलिये जीवन में पात्रता होना भी बहुत जरूरी है, जो व्यक्ति अपनी पात्रता को, योग्यता को नहीं सोचते हैं, देखकर आगे नहीं बढते वे जीवन में कुछ भी प्राप्त कर लें पर उससे क्या होने वाला है।

महानुभाव ! ये छ: बातें हमने आपसे कही इन छ: सूत्रों पर पुन: दृष्टि डाल लें-1. आत्मविश्वास, 2. लक्ष्य का निर्धारण, 3. अदम्य साहस, 4. निरंतर उद्यमशीलता, 5. धैर्य विनम्रता, 6. उपलब्धि की पात्रता। ये छ: बातें जिसके जीवन में हैं वह व्यक्ति वास्तव में जीत की तैयारी कर सकता है। कोई भी एक बात कम होने पर जीत कर हार जाता है। कई बार व्यक्ति हारकर भी जीत जाते हैं और कई बार व्यक्ति जीतकर भी हार जाते हैं। महानुभाव ! बाहुबली जीतकर के भी हार गये और भरत हारकर भी जीत गये। दूसरे शब्दों में देखा जाये-तो भरत भी जीत गये बाहुबली भी जीत गये क्योंकि भरत ने बाहुबली का मान रख लिया इसलिये भरत को ये खुशी हुयी कि बाहुबली मेरा छोटा भाई है। वे जानबूझ कर तीनों युद्धों में हार गये तो भरत की आत्मा को संतोष था, किन्तु बाहुबली भी जीत गये उन्हें बोध हो गया मैं अपने बड़े भाई को हरा कर किसे जीतना चाहता हूँ तो महानुभाव ! कई बार ऐसी जीत भी होती है कि सामने वाला हारता भी नहीं और दोनों की विजय हो जाती है। कई बार ऐसा हो जाता है दोनों ही पराजित हो जाते हैं जीत किसी को मिल ही नहीं पाती, किन्तु इन छ: बातों को साथ लेकर चलोगे तो नि:संदेह सफलता को प्राप्त करोगे।

महानुभाव ! आपके जीवन में यह सब बातें अवश्य आयें। आप सफल हों, आप अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकें, मैं आपके लिये शुभ भावना भाता हूँ और बहुत-बहुत आशीर्वाद देता हूँ।

साथी सगा न कोई

जीवन नदी की धारा की तरह से सदैव गतिमान है, इस जीवन रूपी नदी का बांध नहीं बनाया जा सकता। नदी के पानी को तो रोकने का प्रयास किया जा सकता है किन्तु जीवन की श्वाँसों को रोकने का प्रयास न तो कोई कर सका है न कर सकता है और न कर सकेगा। ये जीवन हमारा इन श्वांसों पर आधारित है, यदि श्वांस का बटोही आना-जाना बंद कर दे तो हमारा जीवन जीवंत न रहेगा यह मुर्दा हो जायेगा। महानुभाव ! ये सरिता की तरह से गतिमान जीवन है, इस गतिमान नश्वर और विश्वास के अयोग्य जीवन से अपने प्रयोजन को कैसे सिद्ध किया जाये, ऐसा क्या उपाय है जिसके माध्यम से यह नरभव सफल और सार्थक हो जाये। क्योंकि चलता हुआ व्यक्ति मंजिल को कैसे पाये, मंजिल पर रहने का आनंद तो ठहरकर ही प्राप्त होता है किन्तु आपने कहा जीवन तो चलायमान है। यह नदी की तरह से चलता ही जा रहा है और चलता हुआ व्यक्ति आनंद का अनुभव नहीं कर सकता, इसलिये हमने भी अनादिकाल से आज तक किसी आनंद का अनुभव नहीं किया, किसी सुख और शांति का अनुभव नहीं किया, हमारे जीवन में हमें आज तक कोई अनुभूति, प्रतीति नहीं हुयी क्योंकि आज तक हम चलते ही चलते रहे।

जैसा साधन, वैसा साध्य

बाहर से ठहरने से कोई व्यक्ति स्थिर नहीं हो जाता, यदि किसी बर्तन में दूध या पानी भरा है बर्तन यदि जमीन पर रखा है, उसमें लकड़ी डालकर कोई घुमाता है तो बर्तन भले ही स्थायी हो जाये किन्तु उसका जल तो फिर भी चलायमान है, ऐसे ही हम कहीं एक जगह बैठ जायें और हमारा मन चंचल है, बैठकर भी वचनों से बोल रहे हैं, हमारे वचन चंचल हैं, निःसंदेह हम ठहरे हुये नहीं कहलायेंगे

और यदि चलते हुये भी हम मन को स्थिर कर लेते हैं, तब चलते हुये भी ठहरे हुये हो सकते हैं जैसे-किसी बर्तन में दूध या पानी भरा है, लबालब भरा हुआ है उसका ढक्कन बंद कर दिया, हवा के लिये कहीं गुंजाइश नहीं है, उस बर्तन को लेकर कोई चल भी रहा है किन्तु फिर भी चलते-चलते वह दूध स्थिर है, गिर नहीं रहा, ऐसे ही जब तक हम अपने आप में स्थिर नहीं होंगे तब तक बाहर से स्थिर होने पर भी स्थिरता का बोध नहीं होगा, आत्मा का अनुभव न हो सकेगा। नदी की तरह से चलता हुआ जीवन दूसरों की दृष्टि में चलता हुआ दिखाई दे सकता है फिर भी नदी अपने आप में मस्त झूमती हुयी जाती है, कलकल ध्वनि से, मुक्तकंठ से गाती हुयी चलती चली जाती है, उसके गाने को कोई सुने या न सुने फिर भी वह तो अपने आप में मस्त है। ऐसे ही जो व्यक्ति अपने आप में ठहर जाता है, अपने आप में स्थिर हो जाता है, वह बाहर की दुनियाँ की कोई परवाह नहीं करता, उसे कोई स्थिर कह रहा है या चलायमान कह रहा है, इसका भी कोई फर्क नहीं पड़ता।

महानुभाव ! इस गतिशील जीवन को हम स्थिर कैसे बनायें। इस नश्वर जीवन को कैसे अविनश्वर बनायें, जब तक हम इन क्षणभंगुर साधनों से जीयेंगे तब तक हम क्षणभंगुर ही रहेंगे, हम अभी तक अपने आप का जीवन श्वांस के बटोही पर आधारित मानते हैं। अभी तक हम अपना जीवन दस प्राणों पर मानते हैं। अभी तक हम अपना जीवन अन्न और पानी पर मानते हैं, अभी तक हम अपना जीवन दूसरे व्यक्तियों के सहारे मानते हैं, यदि ये हमारे साथ न रहेगा तो हम जी न सकेंगे, यदि व्यक्ति को श्वांस न मिले तो वह कहता है कि मर जायेगा। भोजन-पानी न मिले तो कहता है कि मर जायेगा, कई बार ऐसे भी कहता है यदि वह व्यक्ति मुझे न मिला तो उसके बिना मैं मर जाऊँगा और शरीर को कई बार व्यक्ति छोड़ भी देता है। किन्तु

जब तक तुम्हारे जीने का साधन ही नश्वर है तब तक आपका जीवन शाश्वत कैसे बन सकता है।

जो व्यक्ति नश्वर साधनों से जीता है उसे अविनश्वर पद की प्राप्ति नहीं हो सकती अविनश्वर पद की प्राप्ति अविनश्वर साधनों से ही की जा सकती है, आप जानते है गेहूँ के आटे से बाजरे की रोटी नहीं बनायी जा सकती, चने से चने की रोटी बनती है, ऐसे ही खेत में यदि चने का बीज बोया है और फसल सरसों की आ जाये, ऐसा तो कभी नहीं हुआ, जैसा कारण होता है वैसा ही कार्य होता है, जैसे साधन होते हैं वैसे ही साध्य होते हैं उससे पृथक नहीं होता। यदि हमें अविनश्वर अवस्था की प्राप्ति करनी है तो हमारा साधन भी अविनश्वर होना चाहिये, वह अविनश्वर साधन है हमारे पास हमारी आत्मा। हमारी आत्मा अविनश्वर है और शरीर नश्वर है। इस शरीर के माध्यम से जो-जो सिद्धि करते जायेंगे वे सिद्धियाँ नश्वर ही कहलायेंगी, आप कहेंगे-नश्वर शरीर से प्राप्ति की जाती है मोक्ष की, क्या वह नश्वर होती है, ये आपकी भूल है, शरीर के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती, केवल वचनों के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती, मोक्ष की प्राप्ति होती है-चेतना से कर्मों के बंधन खुल जाने से, यदि चेतना में से कर्मों का बंधन न खुले और मन वचन काय से मोक्ष की प्राप्ति हो जाये तब तो वह मोक्ष हमें न चाहिये, जो मन, वचन, काय स्वयं नश्वर हैं तो वह अविनश्वर दशा कैसे दे सकते हैं? नहीं दे सकते क्योंकि वे स्वयं अविनश्वर हैं, कोई भी शरीरधारी मुझे शाश्वत अवस्था नहीं दे सकता, चाहे इन्द्र, धरणेन्द्र, अहमिन्द्र, चक्रवर्ती कोई भी हो, जब उसकी स्वयं की मृत्यु है, जो स्वयं अपने आपको मृत्यु से नहीं बचा सकता तो मुझे मृत्यु से कैसे बचा लेगा, मृत्यु तो अवश्य है-

जाकी शरणा, ताकी लाज़

महानुभाव ! कहने का आशय ये है नश्वर से नश्वर की सिद्धि होती है, अविनश्वर से अविनश्वर की सिद्धि होती है। जीवन गतिशील है इस गतिशील जीवन को हम देख रहे हैं इसलिये हमें गतिशीलता दिखाई दे रही है किन्तु जो व्यक्ति नदी में डूबा हुआ है उसे अहसास नहीं हो रहा कि मैं गतिशील हूँ, जो किनारे पर खड़ा हुआ है उसे लगता है यह नदी गतिशील है किन्तु जो मछली नदी में डूबी हुयी है उसे नहीं लगता है कि यह गतिशील है वह तो जहाँ है वहीं पर है, जब तक वह गति नहीं करे तब तक वहीं ठहरी हुयी है और जब गति करे तो पानी बहता है पूरब की ओर, मछली पूरब की ओर जाये या पश्चिम की ओर कहीं भी गति कर सकती है। पानी के गति करने से मछली के लिये नियम नहीं है वह गति करे ही करे, किन्तु जब पानी का प्रवाह ज्यादा हो जाये और मछली की सामर्थ्य कम हो जाये तब तो वह पानी मछली को बहाकर ले जायेगा। यदि मछली की सामर्थ्य ज्यादा हो और पानी का प्रवाह कम हो तब वह पानी मछली को बहाकर नहीं ले जा सकता, मछली पानी के उल्टे भी चल सकती है यदि बाढ़ का पानी भी आ रहा हो, बहुत तेज हो तब भी मछली चाहे तो पानी से उल्टी चल सकती है।

जब जो व्यक्ति जिसकी शरण को प्राप्त करता है, यदि वह अपराजेय है तो तुम्हें भी अपराजेय अवस्था प्राप्त हो जायेगी, सिद्धों का ध्यान किये बिना आज तक कोई सिद्ध बना नहीं, इसलिये तीर्थंकर प्रभु सबसे पहले सिद्धों की वंदना करते हैं और जब सिद्धों की आराधना कर ली तो पुनः अरिहंत, आचार्य, उपाध्याय, साधु की वंदना करने की आवश्यकता नहीं होती, उनका लक्ष्य तो सिद्ध बनना है, बीच के पड़ाव जरूरी नहीं है कोई ट्रेन ऐसी भी हो सकती है जहाँ से शुरू होती है। वहाँ से जाकर के सीधे वहीं रूके जहाँ पर जाना है,

कोई ऐसी भी हो सकती है जो बीच-बीच में स्टेशन पर रुकती है, कोई ऐसी है जो कुछ जगह स्टेशन पर रुकती है कहीं नहीं भी रुकती है। हमारा जीवन ऐसा भी हो सकता है सीधा यहाँ से मंजिल तक पहुँच जाये और ऐसा भी हो सकता है कि बीच-बीच में पड़ाव भी पड़े-

''जो जाकी शरणा गहे, ताकूँ ताकी लाज।
उलट मीन जल चलत है पहुँच जात गजराज॥''

यदि मछली ने जल की शरण ली है तो मछली जल में उल्टी-सीधी कैसी भी चल सकती है, गजराज भले ही इतना विशालकाय है उसने जल की शरण नहीं ली तो जल हाथी को तो बहा कर ले जा सकता है पर छोटी सी मछली को बहा कर नहीं ले जा सकता। ऐसे ही यदि किसी भव्य जीव ने सिद्धों की शरण ले ली, तो ऐसे भव्य जीव को तीन लोक भी चलायमान नहीं कर सकता और जिसने शाश्वत की शरण नहीं ली है वह कभी स्थिर नहीं हो सकता। पहले अपनी आत्मा को स्थिर करके जो सिद्धों की शरण लेता है तो स्थिर है, अरिहंत भी स्थिर नहीं हैं, क्योंकि कल वे भी सिद्ध बन जायेंगे, आचार्य उपाध्याय साधु भी शाश्वत नहीं हैं वे भी कल और ऊपर पहुँच जायेंगे। किन्तु जब अविनश्वर के पीछे हम पड़ रहे हैं तब तक अविनश्वर दिखाई दे रहा है और विनश्वर के पीछे जो पड़ा है उसे विनश्वर दिखाई दे रहा है।

कर्मों में साथी कोई नहीं

यह संसार तो एक ऐसा छद्म भेष वाला दृश्य है, ये एक ऐसी परी है, जो रूप बदलती रहती है, संसार तो गिरगिट की तरह से रूप बदलता रहता है, जिसको संसार के बदलते रूप में आनंद आता है या इसमें रंजायमान हो गया, उसे और कोई पदार्थ अच्छा नहीं लगता तो जिसे संसार अच्छा नहीं लगता फिर उसे और कुछ अच्छा नहीं लगता।

दो चीजें एक साथ नहीं होंगी, संसार का आनंद भी ले लो और अपने चेतना के स्वभाव के पास भी पहुँच जाओ, एक साथ कैसे होगा?-हँसना और मुँह फुलाना दोनों एक साथ हो सकते हैं क्या? अट्टाहस हंसी आयेगी तो मुख खोलकर हँसेगा और गुस्से में तो ऐसा हो नहीं सकता, दो विपरीत कार्य नहीं हो सकते। संसार और मोक्ष एक साथ नहीं मिल सकते, पाप और पुण्य दोनों एक साथ आपको नहीं मिल सकते, सूर्य का प्रकाश और अमावस का अंधकार एक साथ नहीं हो सकता दोनों अलग-अलग हैं जब आप नश्वर की उपासना कर रहे हैं तब आपको अविनश्वर नहीं दिखायी देगा, जब वह अविनश्वर की उपासना करता है तो वह नश्वर की पकड़ से छूट जाता है, महानुभाव ! आज चर्चा करनी है-''साथी सगा न कोय''।

कहाँ, कब, किसके लिये और कौन नहीं है-''साथी सगा न कोई'' कहाँ साथी सगा नहीं हैं, लोग कहते हैं संसार में कुछ नहीं है, दूसरा व्यक्ति खड़ा होकर कहता है मेरे पास तो सब है, किसके लिये नहीं है? साथी सगा नहीं है, कैसे नहीं है-तो सबसे बड़ी बात ये है कि-संसार के सब साथी हैं किन्तु कर्मों में कोई साथी नहीं है। तुम्हारे सुख-दुःख में साथी हो सकते हैं, व्यक्ति जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक साथ दे सकता है किन्तु कर्म में कोई किसी का साथ नहीं देता। यदि तुम्हारे सिर में दर्द हो रहा है तो क्या संसार में ऐसा कोई व्यक्ति है जो तुम्हारे सिर के दर्द की अनुभूति कर ले, तुम्हारे मन में कोई पीड़ा है, कोई वेदना है उसकी अनुभूति कोई कर सकता है क्या? तुम्हें जब कहीं अंदर से आनंद आ रहा है तो उस आनंद की अनुभूति तुम्हारे बिना और कोई कर सकता है क्या? तुम्हें भूख लग रही है तुम्हारी भूख की वेदना का अनुभव तुम कर रहे हो दूसरा कर सकता है क्या? आत्मा की अनुभूति तो बहुत दूर की बात है एक इन्द्रिय दूसरी इन्द्रिय की अनुभूति नहीं कर सकती, सब स्वतंत्र हैं, जब

इन्द्रियाँ स्वतंत्र हैं तो आत्मा कैसे परतंत्र हो सकती है कि एक आत्मा दूसरी आत्मा की अनुभूति कर ले।

एक व्यक्ति ने लड्डू खाया-स्वाद दूसरा व्यक्ति बता सकता है क्या? जिसने खाया, वही स्वाद के बारे में जान सकता है, जिसने नहीं खाया वह स्वाद के बारे में क्या जाने! लोग कहते हैं महाराज जी सामने वाला खाता है हमारे मुँह में पानी आ गया, उस इमली को देखकर के तुम्हारे अंदर की ग्रंथी से हारमोंस श्रावित हुये इतने प्रभावित हुये कि मुंह में ही पानी आ गया किन्तु इमली का स्वाद नहीं आया। यदि ऐसे किसी के खाने से किसी को स्वाद आ जाये, तब तो बड़ा मुश्किल हो जायेगा। एक व्यक्ति अन्न, भोजन का त्याग करके बैठे, दूसरा व्यक्ति भोजन कर रहा है और उसे स्वाद आने लगे उसका तो उपवास ही टूट जायेगा, एक व्यक्ति विषयों का सेवन कर रहा है एक व्यक्ति नहीं कर रहा फिर तो उसे भी पाप लग जायेगा, यदि ऐसे ही देखने से होता तो कहीं अग्नि में कोई जल रहा है तो उसे देखकर वह भी झुलस जायेगा।

अग्नि कहने से कोई जल नहीं जाता, तलवार कहने से जीभ कट नहीं जायेगी, पानी कहने से प्यास नहीं बुझ जाती, लड्डू कहने से मुँह में मिठास नहीं आती इसी प्रकार किसी दूसरे व्यक्ति के कार्य करने से दूसरे व्यक्ति को उसका अनुभव नहीं होता। विचार और शब्द दूसरे को दिये जा सकते हैं, एक दूसरे से लिये जा सकते हैं, अनुभव कभी भी, कहीं भी, किसी भी क्षेत्र में, प्राणी के द्वारा न दिया जा सकता है न लिया जा सकता है। अनुभव प्रत्येक प्राणी का अपना अलग-अलग होता है और कहीं भी किसी वस्तु में तुम उसके साझेदार हो जाओ किन्तु अनुभव में कोई किसी का साझेदार नहीं हो सकता। कर्ण इन्द्रिय कहती है मेरा काम सुनने का है और यदि आत्मा कहे कि मेरी आँख में दर्द हो रहा है मेरी आँख सही काम नहीं कर

रही है। तू जरा देखकर तो बता-कर्ण कहेगा पागल हो गये क्या-मैं तुम्हारी गुलामी नहीं कर सकता मेरा तो जो काम है वही करूँगा, दूसरी बात मैं अपने काम को दूसरों से हाथ भी नहीं लगवाता, यदि मैं सुनने में असमर्थ हूँ तो ऐसा नहीं है कि मेरा काम अन्य कोई इन्द्रिय कर ले। तो सभी इन्द्रियों का अलग-अलग विषय है, सभी अपने आप में स्वतंत्र हैं इसलिये इन्हें इन्द्रिय कहते हैं, क्योंकि ये सभी इन्द्रियाँ अहमिन्द्र इन्द्र की तरह से, जैसे इन्द्र किसी के अधीन नहीं होता, पराधीन नहीं होता, स्वतंत्र होता है, उसी प्रकार से इन्द्रियाँ भी किसी के पराधीन नहीं हैं, सभी अपने-अपने कार्यक्षेत्र में स्वतंत्र हैं इसलिये इनका नाम है इन्द्रिय। इन्द्रिय की दूसरी परिभाषा-जो आत्मा के सूक्ष्म अस्तित्व का बोध कराये वह इन्द्रिय है।

तो महानुभाव ! जैसे इन्द्रिय स्वतंत्र हैं, जैसे मन स्वतंत्र है, वह दूसरे के मन में क्या है इसकी अनुभूति नहीं कर सकता, दूसरे के मन के विचारों को तो मन:पर्ययज्ञानी जान सकते हैं यह अलग बात है और अनुभूति करना अलग बात है। प्यास लगने पर ठंडा पानी मिल जाये तो कंठ तर हो जाता है, उससे जो अनुभूति होती है दूसरा व्यक्ति उस अनुभूति को प्राप्त नहीं कर सकता। एक ही अनुभूति दूसरे के काम में नहीं आ सकती, तो महानुभाव! इस संसार में जब हमारी आत्मा स्वतंत्र है सुख-दु:ख भोगने के लिए, दूसरों के द्वारा किये कर्म का फल ये आत्मा नहीं भोगती, आचार्य भगवन् कुन्द-कुन्द स्वामी जी ने लिखा है-

एक्को करेदि कम्मं, एक्को हिंडदि दीह संसारे।
एक्को जायदि मरदिय तस्स फलं भुंजदे एक्को॥

यह आत्मा अकेली ही कर्म करती है और इस दीर्घ संसार में अकेली ही ये आत्मा भ्रमण करती है। अकेली ही जन्मती और मरती है और कर्म के फल को एक अकेली आत्मा स्वयं ही भोगती है। एक आत्मा का किया कर्म फल दूसरी आत्मा को नहीं मिलता।

यदि दूसरे के कर्म का फल, जीव को मिल जाए तो।
हे जीवगण फिर सफलता निज कर्म की ही जाए खो॥

इस कर्म की सार्थकता ही खो जायेगी फिर तो जो व्यक्ति बलवान है किसी गरीब व्यक्ति से पुण्य छीन कर ले आयेगा और अपना पाप उसके मत्थे मढ़कर चलता बनेगा तो क्यों करेगा व्यक्ति साधना, क्यों कमायेगा पुण्य ? यदि सुख की अनुभूति लेनी है तो सुखी व्यक्ति के पास जायेगा, उसका सुख छीन कर ले आयेगा और अपना दु:ख उसको देकर आ जायेगा किन्तु ये अनुभूति, सुख-दु:ख छीन कर प्राप्त नहीं होती, किसी से छीने नहीं जा सकते, अपने पुण्य के बिना, अपनी अनुभूति के बिना सुख-दु:ख की अनुभूति नहीं हो सकती।

है जीव सदा इकला

तो महानुभाव ! यह जीव अकेला ही देव होता है, यह जीव अकेला ही नरक में जाता है यह जीव अकेला ही तिर्यंच होता है, अकेला ही निगोद में जाता है, यह जीव अकेला ही मनुष्य बनता है, ये जीव अकेला ही कर्मों का क्षय करके मोक्ष को प्राप्त करता है। एक साथ रहने से भी कुछ फर्क नहीं पड़ता जिसके मन में जो है उसे उसकी अनुभूति होगी, यदि 10 बर्तन यहाँ पर पास में रखे हैं एक बर्तन में दूध, एक में घी, एक में जूस, एक में मट्ठा अलग-अलग प्रकार के द्रव्य रखे हुये हैं ये अलग-अलग प्रकार के दव्य एक स्थान पर रहने से उन सभी की अनुभूति या सब द्रव्य एक जैसे नहीं हो जायेंगे। जब सब अलग-अलग है तो सबका परिणमन भी अलग-अलग है जिसमें नींबू का जूस रखा है वह खट्टा है, बाजू में यदि गन्ने का जूस रखा है तो मीठा है, पास-पास के कमरे में यदि 10 व्यक्ति एक साथ रहते हैं तो जरूरी नहीं है कि वे दसों के दस व्यक्ति एक ही गति में जायेंगे, जिसने जैसा कर्म किया है वे वैसा ही फल पायेंगे कोई

किसी के कर्म फल को प्राप्त नहीं कर सकता, एक ही परिवार में रहने वाले व्यक्ति पर एक की गति स्वर्ग, एक की नरक, एक की मोक्ष।

देखो लंकाधिपति रावण-कहाँ गया-नरक, भाई कुंभकर्ण मोक्ष चले गये उनका बेटा आदि कुमार-मोक्ष गये, अगला भाई उसकी पत्नी मंदोदरी स्वर्ग चली गयी उसके वंशज ऐसे भी रहे जो तिर्यंच गति में भी गये, कोई जीव ऐसा भी हो सकता है जो निगोद में भी गया हो कोई ऐसा भी हो सकता है जो भोगभूमि गया हो ऐसा भी हो सकता है जो कुभोगभूमि गया हो, सब एक ही महल में, एक ही कुटुंब परिवार में रहने वाले सभी की गति अलग-अलग। सबके परिणाम अलग-अलग हैं एक स्कूल में पढ़ने वाले विद्यार्थी सबके नंबर एक जैसे नहीं आते, कोई फेल भी होता है कोई टोप नम्बर में पास भी होता है, ऐसा नहीं कि सब एक जैसे हों। एक फैक्ट्री में काम करने वाले सभी व्यक्तियों की काम करने की स्पीड एक जैसी नहीं होती कोई चपरासी है, कोई अलग पद पर है, किसी का पैकेज हजारों में है, किसी का लाखों में। सबकी अलग-अलग क्षमता होती है, जैसा कार्य होता है वैसा ही परीक्षा परिणाम आता है, परीक्षार्थी ने अपनी उत्तर पुस्तिका में जो लिखा है उसके आधार से नंबर मिलते हैं, इससे नंबर नहीं मिलते कि ये सब एक घर के हैं तो इन सबको एक जैसे नंबर दे दो, दूसरे घर वालों को नंबर अलग दे दो, नंबर घर द्वार रूप देखकर नहीं दिये जाते परिणामों से परिणाम निकलता है इसलिये एक नहीं हो सकता।

एक नाव में बैठने वाले व्यक्ति यदि जब नाव डूबती है तो हर कोई डूबता नहीं कोई बच भी जाता है। कोई अस्वस्थ होकर महीनों तक घायल भी हो जाता है, कई प्रकार के जीव हैं और कई बार ऐसा भी होता है कि एक ही बस में यात्रा करने वाले जीवों में से यदि

कदाचित् सभी मृत्यु को प्राप्त हो गये तो ऐसा नहीं कि सभी एक ही जगह जायेंगे, सब एक साथ मरे सब अपने कर्मों के हिसाब से अलग-अलग जायेंगे, कोई भी तुम्हारे परिणामों में सहकारी नहीं हो सकता, कोई भी तुम्हारे कर्मों में सहयोगी नहीं हो सकता, सहयोगी यदि बन सकते हैं तो तुम्हारे जन्म तक वो भी तब जब तुम्हारा पुण्य का उदय चल रहा हो।

स्वार्थ के साथी

एक निर्जन वन में एक मुनि महाराज का आगमन हुआ, वे मुनि महाराज बहुत तपस्वी थे, मासोपवासी थे, एक-एक महीने के बाद आहार करते थे, चौमासे में चार महीने का उपवास करते थे, बहुत तपस्वी मुनिमहाराज उन्हें कई ऋद्धियाँ भी प्राप्त थी, उन मुनिराज के वहाँ आने से वहाँ का वातावरण ही बदल गया और वहाँ उनके आगमन का समाचार जब राजा को प्राप्त हुआ तो राजा पूरे दल-बल के साथ दर्शन करने के लिये गया, नगर श्रेष्ठी भी गये प्राय:कर सभी गये, उस निर्जन वन में एक डाकूओं का गिरोह भी रहता था, वह किसी भी आने-जाने वाले को लूटता था, किसी के प्राण भी लूट लेता था, वह गिरोह दिन रात वहाँ रहता जिससे उस जंगल में उन्हीं का राज्य हो गया था कोई भी सभ्य-शिष्ट व्यक्ति वहाँ से जाता नहीं था, रास्ता बंद हो गया था, जो लोग घूमकर के जाते थे उन्होंने भी जाना छोड़ दिया। एक दिन दिगम्बर मुनिमहाराज को डाकूओं के गिरोह ने ऊपर से देखा कि यहाँ तो भीड़ ही भीड़ आ रही है राजा, मंत्री सेठ सभी आ रहे हैं ऐसी यहाँ कौन सी बात है ? क्या कारण है कि यहाँ सभी आ रहे हैं-मालूम चला, शायद कोई देवता का मंदिर है, जब सब चले गये तो डाकू वहाँ गये और पुन: जाकर देखा कि वहाँ कोई मंदिर तो दिखाई नहीं देता, किन्तु देखा सामने वृक्ष के नीचे एक मुनिराज तपस्या कर रहे हैं। मुनिराज को देखकर पहले तो डर

गये, ये तपस्वी पृथ्वी के देवता हैं इनसे हम कुछ कहें तो ये हमें अभिशाप दे देंगे, तो उनके पास जाने की हिम्मत नहीं हुयी दूर से देख लिया, थोड़ी देर बाद महाराज उठे मुद्रा लेकर कमण्डल उठाया और चर्या के लिये चल दिये डाकूओं ने सोचा ये कोई देवता नहीं ये तो चल भी रहे हैं, ये तो नग्न हैं, दिगम्बर है, इनके पास जरूर कुछ है, इनके पास जरूर कुछ ऐसी चीज अवश्य है जो राजा के खजाने में नहीं है, ये सोचकर डाकूओं ने उन्हें चारों तरफ से घेर लिया, उनका सरदार आया और बोला क्या है तुम्हारे पास जो कुछ भी है निकाल कर रखो नहीं तो प्राण देने को तैयार हो जाओ, महाराज ने अपनी मुद्रा छोड़ी कहा-कौन है? मेरे सामने आओ, डाकूओं का सरदार सामने निकलकर आया, महाराज ने पूछा क्या चाहते हो? उन्होंने कहा मैं वह चाहता हूँ जिसके लिये तुम्हारे पास राजा आया, मंत्री आया, सेनापति आया, पुरोहित आया सब आये तुम्हारे पास क्या चीज है जिसे लेने सब आये, महाराज ने कहा-मेरे पास क्या है-मेरे पास तो एक पिच्छी कमण्डल है, वे बोले तुम छिपा रहे हो, जब इतना बड़ा राजा तुम्हारे चरणों में माथा रख रहा है वह कोई मूर्ख थोड़े ही है, कोई न कोई चीज तुम्हारे पास है, मंत्री भी आया जो बहुत कुशल होते हैं, सभी राज्यपदाधिकारी लोग आये, जल्दी बताओ ? देते हो या नहीं।

महाराज ने कहा-तुम्हारा मन लेने का बन ही गया है तो चल ठीक है मैं तुझे दे ही दूँगा-देखो-दरअसल में मेरे पास तीन तो बड़े-बड़े रत्न हैं, और छोटे-छोटे रत्नों की गिनती ही नहीं है, वे बोले कहाँ है वो खजाना ? जीते जी दे दो वरना मैं छीन लूँगा, महाराज बोले-बस तुम यहीं तो भूल कर रहे हो, ये रत्न छीन कर नहीं दिये जा सकते, वह जिस खजाने में रखा है उसका कोड वर्ड है। मैं वह तुझे दे दूँगा तब तू रत्न निकाल सकता है। कहा-जल्दी बताओ पासवर्ड महाराज ने कहा यदि तुझे रत्न चाहिये तो उसकी विधि है,

वह विधि तुझे पूरी करनी पड़ेगी, उसके बाद ही तुझे दिव्यरत्न प्राप्त हो सकेंगे, उसके लिये थोड़ी साधना करनी पड़ेगी, मैं उसका उपाय बता दूँगा तो वह सहजता में प्राप्त हो जायेगी, उसने कहा-उसमें कितना समय लगेगा, साल दो साल लगेंगे बोले नहीं-अन्तर्मुहूर्त लगेगा, तो जल्दी बताओ क्या साधना है, वह साधना है-पहली विधि ये है कि तुम पहले अपने घर जाओ, घर जाकर अपने पूरे परिवार से पूछना है कि मैं जो कुछ भी कर रहा हूँ वह सही है या नहीं। दूसरी बात ये पूछनी है इस अच्छे बुरे कार्य का फल क्या होगा? तीसरी बात ये पूछनी है इस अच्छे बुरे कार्य में कौन सहकारी बनेगा ये सब पूछकर जल्दी से बता फिर आगे की विधि बताऊँगा, वह डाकू का सरदार बोला देखो ! मैं ऐसे जाने वाला नहीं हूँ मुझे पता है कि तुम सोच रहे हो कि मैं चला जाऊँगा पर मैं ऐसे नहीं जाऊँगा मैं यही खड़ा हूँ, मुनिराज ने कहा-यदि तुम्हें विश्वास नहीं है तो तुम मुझे यहीं बाँध कर चले जाओ, उसने मुनिराज को रस्सी लेकर पेड़ से बांध दिया और अपने साथियों से कह दिया इसे घेरकर यहीं रहना, इसके पास है तो बहुत बड़ी चीज।

वह घोड़े पर सवार होकर दौड़ता हुआ अपने घर पहुँचा, घर पहुँचकर अपने माता-पिता के चरणों में माथा रखता है, माँ-बाप सोचते हैं हमारा बेटा बहुत सम्पत्ति एकत्रित कर लाया है। वे बहुत आनंदित हो रहे मानो आज ही दीवाली हो, किन्तु बेटा तो 15 दिन में एक बार आता था, अभी दो ही दिन पहले तो आया था। आज इतनी जल्दी कैसे आ गया, क्या कोई संकट आ गया, उससे पूछा-क्या बात है-बेटे ने कहा वो सब तो मैं आपको बाद में बताऊँगा अभी तो मैं आपसे कुछ पूछने आया हूँ-पूरा परिवार इकट्ठा हो गया-सबसे पूछा-जो कुछ भी मैं कर रहा हूँ वो अच्छा कर रहा हूँ या बुरा? सबने अपने चेहरे इधर-उधर घुमा लिये कौन कहे कि वह अच्छा कर रहा

है सबने कहा बेटा ये तो तू भी जानता है जो काम बुरा है वह बुरा तो है ही किसी के प्राण लेना अच्छा तो नहीं है, किसी को लूटना अच्छा नहीं है तेरे माँ-बाप को कोई लूटे, उसके प्राण कोई ले ले, तुझे कैसा लगेगा? बुरा लगेगा ना? तो बता उन्हें कैसे अच्छा लग सकता है ये बात तो सही है, जो काम तू कर रहा है वह बुरा है, ठीक है उसका गुस्सा ठंडा पड़ा, आँखे नीची हो गयीं, दूसरी बात पूछता है-क्या मेरे इस कृत्य में आप मेरे सहयोगी हैं पिता आँखों में आँसू भरकर कहता है-बेटा तू पैदा ही नहीं होता तो अच्छा होता, पैदा भी हो गया तो पैदा होते ही मर जाता तो अच्छा होता, माँ कहती है मेरी कुक्षि तूने कलंकित कर दी। मैं भीख मांग कर पेट भर लेती, किन्तु जब मैं सुनती हूँ कि वह डाकू इसका बेटा है, इसी ने ऐसा डाकू पैदा किया जिसने इतनी हत्यायें कर दी, लूटपाट करता है तो मैं अपना मुँह नहीं दिखा पाती। पत्नि कहती हैं-मैं कहीं घर से बाहर नहीं निकल पाती हूँ। चाहे यही आपने महलों सी कोठी बना दी किन्तु लोग तो मुझे डाकू की पत्नी ही कहते हैं, सम्मान की बात तो छोड़ो दूसरे लोग तो मेरा उपहास करते हैं, कोई अच्छा नहीं कहते, भाईयों ने कहा-तुमने ऐसा काम पकड़ लिया है कि हम कोई दूसरा धंधा कर नहीं सकते, कितनी भी हम शराफत या ईमानदारी दिखायें किन्तु एक कलंक का टीका ऐसा लग गया हम सबको भी लोग चोर कहते हैं। इसलिये हम कहीं उठ-बैठ नहीं पाते। बेटे से पूछा-बेटा तू तो बता-तू तो मेरा लाड़ला है सब तेरे लिये ही तो कर रहा हूँ-वह बोला-पापा मैं आपकी करनी में शामिल नहीं होऊँगा, स्कूल जाता हूँ, मैं अलग बैठता हूँ, कोई मुझसे मित्रता नहीं करता, अपराधी सा रहता हूँ, पिताजी अभी जो कर्म दिखाई दे रहे हैं उनका फल तो अभी नहीं पर नरक में मिलेंगे, मैं तो तुम्हारे इस कृत्य में सहयोगी नहीं हूँ। जब सबने मना कर दिया तो उसकी आँखों से टप-टप आँसू बहने लगे। अन्य कुछ

शब्द कहे बिना ही घोड़े पर सवार हुआ और सीधा मुनिराज के पास पहुँचा।

मुनिराज ने कहा-भईया तू पूछकर आ गया-अब मैं आगे की विधि बताता हूँ पहले बता तेरे घर वालों ने क्या कहा। वह तो रोता जा रहा है-बोला महाराज आपने तो मेरे नेत्र खोल दिये, मैं सोचता था इन सबका पालन पोषण मैं कर रहा हूँ इनके लिये मैं पाप कर रहा हूँ, किन्तु सभी लोग कहते हैं हम तुम्हारे पाप में शामिल नहीं हैं हमारे भाग्य में है तो हमें मिलेगा ही मिलेगा चाहे तुम चोरी करके लाओ या नहीं, हमारे भाग्य में नहीं होगा तो हम भूखे मर जायेंगे पर तुम्हारे पाप में सहयोगी नहीं बनेंगे। वह महाराज के रस्सी के बंधन खोलता चला जा रहा है और चरणों में गिर पड़ता है, बस ! मैंने संसार देख लिया कोई किसी का साथ देने वाला नहीं है सब स्वार्थ के साथी हैं जब मैं कमा कर लूटपाट कर ले जाता, तब मेरी पत्नी खूब श्रृंगार करती, पिता धन्ना सेठ बने रहते, मेरे भाई स्वयं को राजा सम्राट समझते किन्तु मेरे कृत्य में कोई शामिल नहीं, मुझे किसी से ऐसी उम्मीद नहीं थी, महाराज ! बस मैंने संसार को देख लिया, कोई किसी का नहीं, जब मेरी करनी का फल मुझे ही भोगना है तो व्यर्थ में इतना पाप क्यों कमाऊँ ? एक व्यक्ति को भी लूटा होता तो मेरी जिंदगी पार हो जाती, मुझे क्या करना? दूसरी बात मैं तो जंगल में रहकर झरनों का पानी पीकर, पत्ते खाकर भी अपनी जिंदगी काट सकता हूँ मुझे दूसरे की हत्या करने की आवश्यकता क्या ? मेरा पेट दूसरों को लूटे बिना भी तो भर सकता है, इन कृत्यों का फल मुझे ही भोगना पड़ेगा, एक जीव की हत्या करने में जब इतना पाप लगता है नरक में जाना पड़ता है, मैंने अपने हाथ से कितनी हत्यायें की, कितनों को लूटा, कितनों को सताया, कितनी माताओं की मांग सूनी कर दी, कितनी बहिनों की राखी सूनी कर दी, कितनों का नाश कर दिया आज तो सोचकर बस

ऐसा लगता है, इस संसार में मुझसे बड़ा पापी तो और कोई है ही नहीं आज मेरे पाप मुझसे खड़े होकर पूछते हैं तू ये सब किसके लिये कर रहा है-उत्तर आता है ये तू अपने लिये कर रहा है क्योंकि सभी मना कर रहे हैं कि वे तुम्हारे कृत्य में शामिल नहीं हैं।

जैसी करनी वैसी भरनी

महानुभाव ! व्यक्ति को जब अहसास होता है तब वह सोचता है-

''आप अकेला अवतरें, मरें अकेला होय,
यो कबहुँ इस जीव को साथी सगा न कोय॥''

यह जीव अकेला ही जन्म लेता है और मृत्यु को भी अकेले ही प्राप्त करना पड़ता है, इस जीव का साथी सगा कोई नहीं है। कर्म तुमने हँस-हँस कर बांधे हैं सबके साथ मिलकर बांधा किन्तु जब फल मिलेगा तो सभी को अलग-अलग अपने-अपने कृत्य का फल भोगना ही पड़ता है चाहे वे ऋषभदेव स्वामी हों, उन्होंने यदि अन्तराय कर्म का बंध किया तो उन्हें भी अंतराय कर्म का उदय आया, उन्हें भी 13 माह 8 दिन तक आहार नहीं मिला। यदि पार्श्वनाथ स्वामी ने पूर्व में ऐसा कोई कृत्य किया तो उन पर भी ओले-शोले की वर्षा हुयी उपसर्ग सहन किया, सुपार्श्वनाथ स्वामी ने भी उपसर्ग को सहन किया। पाण्डवों ने उपसर्ग सहन किया, गुरुदत्त आदि मुनियों ने उपसर्ग सहन किया, गजकुमार, सुकुमाल, सुकौशल मुनियों ने उपसर्ग सहन किया, जिन-जिन व्यक्तियों ने पहले कर्म बांध लिया था उनको चुकाना तो पड़ेगा ही, चाहे तुम कितना ही सोच लो, कोई भी व्यक्ति किसी का एक परमाणु भी लेकर नहीं जा सकता, वह मोक्ष जाने से पहले चुकाता जरूर है यदि एक पैसा भी लिया तो आज नहीं तो कल चुकायेगा चाहे गधा बनकर घोड़ा बनकर, ऊँट बनकर या बैल बनकर चुकायेगा उसके यहाँ गाय और भैंस बनकर, दूध देकर चुकायेगा यदि

कुछ नहीं बन पाया तो एक इन्द्रिय वृक्ष बनकर के चुकायेगा किन्तु कोई किसी का एक पैसा भी रख नहीं सकता। ये तो तुम अपने मन में सोच रहे हो कि मैंने उसके पैसे नहीं दिये मारकर के बैठ गया, कौन किसका मारकर बैठ सकता है, जितने भी कर्म बाँधे हैं चाहे अच्छे या बुरे, उसका फल उसे नियम से ही भोगना पड़ेगा, उसे कोई भी अन्यथा करने में समर्थ नहीं है, जब तीर्थंकर आदि भी अन्यथा नहीं कर सकते जब सबको अपने कर्म का फल भोगना पड़ता है तो हम और आप कहाँ लगते हैं, चाहे कोई भी जीव हो।

महानुभाव ! श्रेणिक ने यदि मुनिमहाराज पर उपसर्ग किया तो नरक की आयु का बंध किया नरक में जाना पड़ा, यदि अभय कुमार ने साधना की तो सर्वार्थ सिद्धि पहुँच गये। चेलना ने तपस्या की देवगति में पहुँच गयी, अजातशत्रु या कुणिक ने जैसे कृत्य किये वे वहाँ पहुँच गये। एक ही महल में रहने वाले व्यक्ति अलग-अलग जा रहे हैं क्यों? आपके घर में भी 10 व्यक्ति है सबके सब अलग-अलग बढ़ रहे हैं कोई प्रातःकाल उठकर जिनालय जा रहा है। दूसरा हो सकता है मदिरालय जा रहा हो, कोई सुबह से दुकान खोलकर बैठ जाये, कोई पंचायत में चला जाये, कोई समाज सेवा में लग जाये, सबके अलग-अलग कदम जहाँ जा रहे हैं, जो जहाँ जा रहा है वो वहीं के लिए जा रहा है। यदि आज आप अपने घर से निकलकर के मंदिर के लिए जा रहे हैं तो कल के लिये आप मंदिर के लिये रास्ता बना रहे हैं, यदि कोई व्यक्ति घर से निकलकर जुआ खेलने के लिए जा रहा है, तो वह जुऐं का फल नरक का रास्ता बना रहा है। उसे वहाँ जाना पड़ेगा, यदि कोई किसी को सता रहा है तो हो सकता है वह कल तिर्यंच बनकर तुम्हें सताये, सबके कर्म सबके साथ रहते हैं कोई किसी के कर्म को भोग नहीं सकता, लगता जरूर है। जब घर में कोई एक व्यक्ति कमाई करता है तो वह सबका लाडला प्यारा हो जाता है,

और कमाई न करे तो सब उसे छोड़ देते हैं, वही बेटा बाप के लिये इतना प्रिय है कि उसके लिये प्राण देने को तैयार है, वही बाप जब बेटा उसकी बात नहीं मानता है तो उसके प्राण लेने को तैयार हो जाता है, बेटा कितना प्यारा था भगवान से ज्यादा प्यारा था।

जब उसने अपने मन से कोई काम कर लिया या शादी कर ली या और कोई कृत्य कर लिया जिससे पिता के नाम पर कलंक लग गया तो वही पिता बेटे को घर से बाहर निकाल देता है और उसका मुँह भी नहीं देखना चाहता और जब बेटा अच्छा काम कर रहा था, पिता की शान को ऊँचा चढ़ा दिया तो वही बाप कहता था-कि ये मेरा बेटा है मेरा बेटा। ये संसार है जिसमें स्वार्थ भरा पड़ा है जब तुम उन्नति की ओर जा रहे हो तो जय-जय करने वाले हजारों मिल जायेंगे, तुम्हारे विरोधी तुम्हारे संग तुम्हारी जय-जय करेंगे और जब तुम पतित हो रहे हो तब तुम्हें कोई उठाने नहीं आयेगा, तुम्हें धक्का देने वाले आ जायेंगे जब तुम्हारे घर में आग लगी होगी तो हवा भी उस आग को बढ़ाने वाली होगी और यदि तुम्हारे घर में पानी/बारिश की छीटें आ रही होंगी तो वह हवा शीतलता प्रदान करने वाली हो जायेगी। हवा आग को बढ़ाती भी है और हवा पानी की बूंदों को ठंडा भी करती है, हवा हवा है जैसा रूख है वैसी उड़ती है, जब तुम्हारे घर में आग लगी है तो वह हवा आग को बढ़ायेगी घटायेगी नहीं। जब तुम्हारे घर में पानी की बौछारें आ रही हैं तो वह हवा तुम्हारे मकान को ठंडा कर देगी। यदि ठंडी पड़ रही है तो और ठंड पैदा कर देगी यदि गर्मी पड़ रही है तो वही हवा लू बनकर तपायेगी, महानुभाव ! ये संसार तो हवा की तरह से है। तुम्हारे घर का माहौल कैसा है, तुम्हारे चित्त का माहौल कैसा है उसमें वैसी ही वृद्धि कर देगी, यदि चित्त का माहौल पुण्यमय है, तो संसार की हवा तुम्हारे पुण्य के वातावरण को और बढ़ा देगी, यदि तुम्हारे चित्त का माहौल पापमय है

तो तुम्हारे वातावरण को पापमय बना देगी, ये दुनिया तो ऐसी ही है अगर तुम्हारी जय-जयकार हो रही है तो दुनिया उसकी जय-जयकार करेगी, यदि निंदा हो रही है तो निंदा करेगी। जब पाप का उदय आया तो सबने दुतकारा, फटकारा, निंदा की, अपमान किया और पुण्य का उदय आया तो उन्होंने ही तुम्हें सिर पर उठा लिया और जय-जयकार करने लगे, तो दुनिया न तो उठाती है न गिराती है, हमारा पुण्य ही हमें उठाता है हमारा पाप ही हमको गिराता है, कोई किसी को सुख-दु:ख नहीं देता ये तो तुम्हारी कोरी कल्पना है, मेरे भाई ने मुझे दु:ख दिया, सम्पत्ति लूट ली, पिता ने मेरे साथ अन्याय किया कोई किसी के साथ कुछ नहीं कर सकता सब अपनी करनी का फल भोगते हैं। ध्यान रखो कोई तुम्हारे साथ बुरा कर नहीं सकता, तुम्हें जो कुछ भी फल मिलेगा तुम्हारे ही कर्म का फल मिलेगा, तुम्हारे कर्म को अन्यथा करने में तीन लोक में कोई भी प्राणी समर्थ नहीं है।

संसार में कौन है अपना

तो महानुभाव ! ये विचार करना है, ये सोचना है कि हमें क्या करना है। यदि कोई व्यक्ति रात्रि के अंधकार में भी पाप कर रहा है तब भी वह पाप कर्म तुम्हारी आत्मा में बंध रहा है।

यदि कोई व्यक्ति दिन के प्रकाश में पुण्य कर रहा है तब भी पुण्य आत्मा से बंध रहा है चाहे दिन में पाप रात में पुण्य करे, कभी भी, कहीं भी जैसा कर्म करेगा उस कर्म का बंध वैसा ही होगा, वैसा ही फल नियम से भोगना पड़ेगा, तो महानुभाव ! संसार में कौन किसका साथी है, कौन किसका सगा है, कौन किसका साथ दे सकता है।

एक महात्मा जी गली-गली घूम रहे थे, और कहते जा रहे थे स्वार्थ की है दुनिया सारी, स्वार्थ की। गली-गली में चक्कर लगा रहे थे, एक युवा लड़का निकलकर आया और बोला-महात्मा जी इस

प्रकार की बात क्यों कह रहे हो? वे बोले-कोई किसी का नहीं है। क्यों नहीं है? मेरी पत्नी, मेरे बच्चे मेरी माँ, मेरे भाई जो मेरे बिना जी नहीं सकते, यदि मैं नहीं दिखाई दूँ तो उनकी आँखों में आँसू आ जायें, मैं जाता हूँ तो मुझे रो-रोकर विदा करते हैं। आता हूँ तो किसी के आँसू छलक जाते हैं, मैं भोजन न करूँ तो कोई भोजन न करे सभी मुझे प्राणपन से चाहते हैं। यदि कोई आवश्यकता पड़ जाये तो प्राण न्यौछावर करने को तैयार हो जायें। महात्मा जी ने कहा-ये तुम्हारी बहुत बड़ी भूल है-वह बोला-महात्मा जी मैं नहीं मानता जो मैं प्रेक्टीकल देख रहा हूँ उसकी बात मानूँ या आपकी। महात्मा जी ने कहा जो सही है उसे सही मानो-वह बोला सही यही है कि मेरे लिये दुनिया स्वार्थी नहीं हैं मैं सबके लिये प्राण देने को तैयार, मेरे लिये सब प्राण देने को तैयार। महात्मा जी बोले-नहीं बेटा यह केवल भ्रम है, वह बोला फिर सही क्या है? महात्मा जी बोले-कल एक काम करना कल सुबह मेरे आश्रम पर आ जाना। ठीक है, वह सुबह आया। बोला-महात्मा जी बताईये क्या करना है-महात्मा जी ने कहा-अपने कपड़े उतारो, लंगोट कसो, कुछ योगा करना है, प्राणायाम करना है। वह अभ्यास करने लगा, वह प्रतिदिन आने लगा, अभ्यास करते-करते वह इतना सक्षम हो गया कि एक-एक घंटे श्वांस रोकने में समर्थ हो गया, अब महात्मा जी ने कहा-मुझे जो सिखाना था वह मैंने तुम्हें सिखा दिया, अब बस तुझे एक काम करना है घर जाना और जाकर पड़ जाना, पेट दर्द के कारण हाय ? मरा-मरा कहना ओर जाकर गिर पड़ना और फिर मैं आऊँ उससे पहले श्वांस रोककर के बस मुर्दा बन जाना। वह बोला फिर क्या होगा ? फिर जो होगा सो तुम देखना-सुनते जाना कानों से, कहाँ क्या हो रहा है उसने वैसा ही किया उसने श्वांस को रोक लिया वैसे ही पहले नाटक किया फिर गिर पड़ा सभी वैद्य हकीमों की लाइन लग गयी पर पेट दर्द को कोई ठीक न कर पाया,

थोड़ी देर बाद उसने अपना प्राणायाम शुरू कर दिया, प्राणायाम किया श्वांस रोक ली, हाथ पकड़ कर देखा लगा कि गया, सभी लोग बेटा-बेटा कर चिल्लाने लगे, वह श्वांस नासिका के छिद्रों से नहीं ब्रह्मस्थान से ले रहा है और उसका शरीर अकड़ गया लकड़ी जैसा हो गया, नाड़ी पकड़ कर देखी तो वह पकड़ में नहीं आ रही, बहुत मंद पड़ गयी, पुनः सभी रोने लगे, गाँव-पड़ौस के लोग सभी इकट्ठे हो गये। सब कहने लगे-बड़ा अच्छा था, माता-पिता कहने लगे-तू ही तो था, जो कुल दीपक था, तेरे भरोसे ही पूरा परिवार खाता था, पत्नी कहती है-हे नाथ ! हमें छोड़कर क्यों चले गये, बेटा भी रो रहा है सभी विलाप कर रहे हैं कोई छाती कूटते हैं, माँ कहती है हे भगवान ! तूने मुझे क्यों नहीं उठा लिया, मेरी आँखों के सामने ही मेरे लाडले को उठा लिया, सभी रुदन कर रहे हैं सभी का लाड़ला था, कमाकर लाता था, सभी से व्यवहारिक था, लोगों की आवश्यकताओं को धन देकर पूर्ण करता था तो महानुभाव ! सभी का वह लाड़ला सब चाहते है कि हे भगवान ! ऐसा कोई चमत्कार हो जाये कि यह जीवित हो जाये, पर यह चमत्कार कैसे हो? कौन करे चमत्कार कहाँ से दिखाया जाये चमत्कार बड़ा मुश्किल हो गया, सभी परेशान, संयोग की बात वे महात्मा जी वहाँ से आये, अलख लगाते गाते जा रहे हैं यदि कोई अस्वस्थ हो तो हम उसे ठीक कर देंगें, यदि कोई मृत्यु को प्राप्त हो गया हो तो हमारे पास वह ऋद्धि, सिद्धिमंत्र हैं कि हम उसे जीवित कर देंगे, ऐसा बोलते हुये जा रहे थे जैसे ही यह आवाज बाहर से अंदर की ओर आयी कि भीड़ टूट पड़ी, महात्मा जी आओ-आओ यही तो हम चाहते हैं, आप आईये इधर घर में एक व्यक्ति की मृत्यु हो गयी है उसे जीवित कर दो, महात्मा जी अंदर पहुँचे देखा अलटा-पलटा करके फिर कहा-अब तो मुश्किल है ये तो चल बसा मेरी विद्या अब काम न कर पायेगी, यदि पहले बुला लिया होता तब तो विद्या काम

कर जाती अब इसको मृत्यु को प्राप्त किये 25 मिनट से ज्यादा हो गये, अब मुश्किल है मेरी विद्या काम करे, सभी रोने लगे सभी ने महात्मा जी के पैर पकड़ लिये, महात्मा जी कुछ भी करो विद्या का प्रयोग करके तो देखो शायद हो सकता है आपकी विद्या काम कर जाये हो सकता है अभी श्वांस नहीं टूटी हो, वे बोले-ठीक है आप सबका आग्रह है तो मैं कोशिश करके देखता हूँ लाईये एक चाँदी की कटोरी में पानी लाईये, 50 कटोरी आ गयीं, एक कटोरी को लिया शुद्ध राख मंगाई और राख लेकर मंत्र पढ़ने लगे और थोड़ी-थोड़ी राख कटोरी में डालने लगे, अब मेरी मंत्र विद्या पूरी हो गयी, ये बालक थोड़ी देर में उठकर बैठ जायेगा किन्तु एक बात है यह कटोरी का जल मंत्रित हो गया सब लोग कहने लगे इसे जल्दी से पिलाओ इससे जीवित हो जाये साधुजी बोले बस ! यही तो कमी है कि यह मंत्रित जल रोगी को नहीं पिलाया जायेगा, यह मृत्यु को प्राप्त हो गया है अब मैं भगवान के यहाँ से इसकी आत्मा को बुलाऊँगा तो वहाँ कोई न कोई तो भेजना पड़ेगा। इसलिये ये जो मंत्रित जल है इस जल को जो पी लेगा वह तो वहाँ चला जायेगा और इसकी आत्मा यहाँ पर लौट कर आ जायेगी, जो माँ विलख रही थी-उससे कहा माँ तेरा लाड़ला बेटा है, प्राणों का प्राण है आप इसके बिना जी नहीं सकेंगी आप ऐसा करो ये पानी आप पीलो-माँ कहती है-महात्मा जी मेरे अभी छः बेटे और हैं उन्हें देखकर जी भर लूँगी ये तो चला ही गया, क्या भरोसा वह लौट कर आये न आये, जब मैं ही चली जाऊँगी तो उस बेटे का सुख कौन भोगेगा, पिता जी से कहा-आप ही पीलो-पिता जी बोले-महात्मा जी आप भी कैसी बात करते हैं-अब वो चला गया-जाने वाला लौट कर आये ना आये और जब मेरी मृत्यु नहीं आयी तो मैं मरकर के क्या करूँगा मैं तो पानी नहीं पीऊँगा छहों भाभियों से पूछा, सबने मना कर दिया, पुनः उसकी पत्नी से

कहा-तुम तो इसकी पत्नी हो अर्धांगिनी हो ये जल तू ही पीले तेरा पति जीवित हो जायेगा-तू न रहेगी तो कोई बात नहीं दूसरी शादी कर लेगा, उसके सुख चैन में कहीं कमी नहीं आयेगी, तो वह कहती है-जब मैं ही मर जाऊँगी तो फिर उनके जीने से क्या लाभ? कोई बात नहीं मैं तो विधवा रहकर जीवन जी लूंगी, बेटे से पूछा-बेटा तू तो इनका इकलौता बेटा है तू ही अपने पापा के लिये अपने प्राण दे दे-तेरे पापा जीवित हो जायेंगे-तो वह कहता है-जब सब घर के बड़े-बड़े लोगों ने मना कर दिया तो मैं छोटा क्या कर सकता हूँ, जब सबने मना कर दिया तो महात्मा जी कहते हैं-भाई अभी तुम कहते थे जीवित करो-जीवित करो मैं जीवित करने को तैयार हुआ तो अब आप लोग उस प्रक्रिया में सहयोगी ही नहीं बनते। सबके मुख नीचे हो गये, वे बोले-अब जब मैंने विद्या का प्रयोग कर ही लिया है अब मेरा मंत्र खाली नहीं जायेगा पानी तो किसी न किसी को पीना ही पड़ेगा क्योंकि जिस आत्मा को मैं बुलाना चाहता हूँ वह आत्मा वहाँ से चल चुकी है अब यदि बीच में अटक कर रह जायेगी तो न वहाँ रह पायेगी और न यहाँ आ पायेगी इसलिये पानी तो पीना ही पड़ेगा और अब जब कोई भी पानी पीने को तैयार नहीं है तो फिर लाओ इस पानी को मैं ही पीता हूँ सब लोग कहते हैं-वाह ! महात्मा जी ठीक कहा है शास्त्रों में साधु पुरुष तो उपकार करने के लिये ही होते हैं महात्मा जी आप चिन्ता नहीं करना हम बहुत बड़ी छत्री बनवा देंगे, बहुत बड़ा जुलूस निकलवायेंगे, भण्डारा करवा देंगे। आप जैसे भगवान आत्मा लोग आज मिलते ही कहाँ हैं, आप के आगे पीछे तो कोई है नहीं ? महात्मा जी ने वह पानी पी लिया और पीते-पीते कहा-ठीक है मैं अभी नहीं मरूँगा मेरी विद्या की शक्ति तो इतनी है कि मैं अपनी आत्मा को अपने शरीर में ठहरा सकता हूँ, दूसरे मंत्र के माध्यम से ये बालक जीवित हो जायेगा और पुनः पानी पीकर के बालक के

सिर पर हाथ रखा और कहा उठो-देख ले इस दुनिया में कौन तेरा है कौन तेरे लिये प्राण देने को तैयार है, कौन तुझ पर प्राण न्यौछावर करता है देख लिया ये दुनिया स्वार्थ की है तू सबके लिये कमा कर लाता था, सब बैठ करके खाते थे, सबके लिये जब अच्छा-अच्छा करता है तो सब तेरी जय-जयकार कर रहे हैं जब तेरे ऊपर संकट आया, मौत आयी तब कोई भी तैयार नहीं हुआ ये तो तू भी जानता है कि पानी में कौन सा मंत्र है, ये तो मैंने तुझे भी सिखा दिया है, अब वह खड़ा होकर के महात्मा के चरण पकड़ लेता है और महात्मा के पीछे-पीछे चल दिया, अब माँ रोती हैं, पिता रोते हैं सभी परिवारीजन रोते हैं हमें छोड़कर न जाओ, पत्नी कहती है तुम्हारे बिन तो मेरे प्राण ही निकल जायेंगे वह मन ही मन में सोचता है-गर तुझे मरना होता तब तो तू अभी मर गयी होती, जब मेरे प्राण चले गये तब तू अपने प्राणों की रक्षा कर रही थी, नि:संदेह सत्य यही है कोई किसी के लिये नहीं मरता प्रत्येक व्यक्ति अपनी आयु पूर्ण कर, अपनी मृत्यु से मरता है यह कहना सरल है कि मैं तेरे लिये मर जाऊँगा, प्राण दे दूँगा आवेश में आकर के प्राण दे भी दे किन्तु कोई व्यक्ति किसी के लिये कष्ट सहन करने के लिये तैयार नहीं रहता। मरना फिर भी आसान है कोई यह नहीं कहता मैं तेरे लिये जीऊँगा, बस यही कहता है-मैं तेरे लिये मर जाऊँगा। अरे ! जीना सीखो, मरना नहीं। जैन दर्शन पहले जीना सिखाता है जो पहले सही से जीना जानता है वह बाद में सही से मरना भी जान सकता है।

मोह का मगर

तो महानुभाव ! सत्यता यही है कि इस आत्मा का कोई भी साथी सगा नहीं है, इस आत्मा का कोई शत्रु भी नहीं है, इस आत्मा का कोई मित्र भी नहीं है न कोई गुरु है न कोई शिष्य है, न कोई सखा है न बंधु है यह आत्मा तो स्वयं की स्वयं है ये तो सब व्यवहार

में है क्योंकि व्यवहार के बिना निश्चय तक कोई व्यक्ति पहुँच नहीं पाता इसलिये ये सब बातें व्यवहार में देखने में बड़ी अच्छी लगती हैं किन्तु महानुभाव, निश्चय में आँख बंद करके देखो-कि पराधीन रहने में, दूसरों के आधीन रहने में सुख की अनुभूति नहीं होती।

''पराधीन सपने हु सुख नाहिं
कर विचार देखो मन माहिं''

जो व्यक्ति पर को अपना, अपने को पर का मानते हैं वे कभी जीवन में सुखी नहीं रहते, एक बालक अपने माता-पिता से कह रहा था कि मुझे आज्ञा दे दो मुझे अपना कल्याण करना है, जैसे वह बालक जो महात्मा के साथ चला गया सन्यासी बन गया कह रहा कि मैंने दुनिया देख ली आप सही कहते थे कि ये संसार स्वार्थ का है, अभी तक मुझे लगता नहीं था किन्तु आज मेरी नींद टूट गयी। ऐसे ही एक छोटा बालक जिसकी उम्र ज्यादा नहीं थी, अपने माता-पिता से दीक्षा की आज्ञा मांग रहा था। माता-पिता ने कहा-नहीं अभी दीक्षा नहीं लेनी, अभी शिक्षा तो पूरी हुयी नहीं कपड़े पहनना जानते नहीं, कपड़े उतारने की बात करते हो। अरे ! संसार से हमें वैराग्य हुआ नहीं, तुम्हें कैसे हो गया? तुम हमसे आगे कैसे चले गये? बालक ने कहा-अच्छी तरह आज्ञा दे दो, मुझे अपना कल्याण करना ही करना है घर वालों ने मना कर दिया उसने क्या किया-एक दिन वह अपने माता-पिता के साथ तीर्थ यात्रा करने के लिये गया और वहाँ जब नदी में नहाने लगा नहाते-नहाते आगे पहुँच गया, जब बहुत आगे पहुँच गया तो उसे लगा उसका पैर किसी ने कपड़ लिया, माता-पिता सभी स्नेही साथी किनारे पर खड़े थे, वह चिल्ला रहा माँ बचाओ, पिताजी बचाओ, इस मगरमच्छ ने मेरा पैर पकड़ लिया ये तो इसे खाये ही जा रहा है, बस मेरे प्राण निकलने वाले हैं, सब जगह सन्नाटा छा गया कौन जायेगा नदी में कूदने, कहीं मगरमच्छ ने उसे छोड़कर हमें पकड़

लिया तो, इसीलिये कोई नहीं कूदा, सब दूर से ही कह रहे थे-बेटा छूटने का प्रयास करो, वह बेटा बोला-अगर आप लोग मुझे उसी वक्त दीक्षा/सन्यास की आज्ञा दे देते तो ऐसा नहीं होता-वे कहने लगे इससे अच्छा तो हम उसी वक्त उसे दीक्षा की आज्ञा दे देते तो ठीक रहता-माँ-बाप ने कहा ठीक है हम तुझे दीक्षा की आज्ञा देते हैं, वह बालक एक झटका सा लगाता है और निकलकर बाहर आ जाता है कहीं खरोंच भी नहीं थी, आकर बोला-माँ अब मैं आपको अंतिम प्रणाम करता हूँ और दीक्षा के लिये जाता हूँ मतलब ! बेटा ! तेरा पैर तो मगरमच्छ ने पकड़ लिया था-माँ वो मगर पानी में नहीं था किनारे पर खड़े थे वह मोह का मगर था मैं इस पानी के मगर से नहीं डरता, ये मोह के मगर से मुझे छूटना था इसलिये मुझे नाटक करना पड़ा, संसार में रहकर के जो नाटक करने वाले व्यक्ति हैं उनके बीच में रहकर नाटक करना ही पड़ता है, यदि नाटक न करो तो पुनः सफलता नहीं मिल पाती।

संसार रंगमंच है

महानुभाव ! संसार ऐसा ही है नाटकीय रंगमंच है हम सभी यहाँ रोल अदा कर रहे हैं, एक छोटी सी बात कह करके बात पूरी करूँ।

महानुभाव ! राजस्थान की बात है, मारवाड़, उदयपुर की तरफ की बात है एक घर में दो प्राणी रहते थे पति-पत्नी। वह माता-पिता से अलग रहता था, पुण्योदय से अच्छा कमाता था घर में किसी भी चीज की कमी नहीं थी और वह मस्ती में जी रहा था यकायक उसे लगा मैं ऐसे जीवन को जीकर क्या करूँगा आगे कुछ और करना चाहिये, उसके मन में संसार से विरक्ति होने लगी, वैराग्य होने लगा, किसी साधु के पास जाने लगा, पत्नी ने देखा कि ये वैरागी होते जा रहे हैं, वह अपना प्यार और बढ़ाती गयी, अपने मोह पाश में बांधकर ज्यादा से ज्यादा बंधन डालने लगी, कहीं ये मेरे जाल से बाहर न

निकल जायें किन्तु वह तो अंतरंग से विरक्त हो गया था, वह सोच रहा था कि पत्नी का मोह तो बहुत प्रबल है, वह मेरे बिना जी पायेगी या न जी पायेगी, कहीं मैंने दीक्षा ले ली और मेरे पीछे मेरे मोह में कहीं मृत्यु को प्राप्त हो गयी तो, फिर क्या होगा? इसलिये पहले एक बार मैं अपनी पत्नी की परीक्षा ले लूँ कि इसका कितना मोह है? अब परीक्षा कैसे ली जाये? उसने महात्मा जी से पूछा-वही बहाना-"सिर दर्द से फटा जा रहा है। वह जाकर पलंग पर लेट गया और पत्नी से बोला आज तू मुझे अच्छे-अच्छे पकवान बनाकर के खिला, आज मेरा पता नहीं क्यों ऐसा मन हो रहा है कि आज खा लूँ तो ठीक पता नहीं जीवन में दुबारा तेरे हाथ का बना भोजन खा पाऊँ या न खा पाऊँ कहकर उसने मुँह ढाक लिया, बोली अभी बनाती हूँ। पत्नी ने सब कुछ बनाया और वह तो सिरदर्द का बहाना करके श्वांस रोककर लेट गया, अब संध्याकाल का समय हो गया पत्नी सुबह से बनाने में लगी रही, पत्नी ने पुनः आवाज लगायी, उठो ! सब कुछ बनकर तैयार हो गया है, भोजन पानी मिलकर करेंगे, किन्तु वह तो पड़ा ही रहा-पत्नी ने हिलाया-डुलाया लगता है चले गये, नाक पर हाथ लगाया श्वांस न तो ले रहे हैं और न छोड़ रहे हैं, मर गये क्या करें, रात्रि हो गयी 7-8 बज गये, उसने सोचा सुबह से तो मैं भूखी-प्यासी हूँ कुछ खाया नहीं पीया नहीं अभी से रोना प्रारंभ करूँगी तो रात भर कौन रोयेगा मैं तो वैसे ही मर जाऊँगी, इसीलिये भूखे-प्यासे रहकर तो वैसे भी रोना नहीं आयेगा, थक जाऊँगी मौहल्ले पड़ोस के लोग आयेंगे रोना तो पड़ेगा ही। इसलिये पहले कुछ खा-पी तो लूँ, तभी तो रो पाऊँगी, क्योंकि जब तक अर्थी न उठेगी तब तक तो कुछ खा-पी न पायेंगे, सब इकट्ठे होंगे तब जाकर कुछ होगा। पुनः सोचती है यदि मैं पूड़ी खाती हूँ तो देर लगेगी, लड्डू खाती हूँ तो देर लगेगी, और कुछ चीज खाती हूँ तो देर लगेगी, ऐसी कोई चीज सरपट मुंह में चली जाये तो

उसने उठाया खीर का भगोना मुँह से लगाया और खड़ी-खड़ी सट-सट पी गयी, वह पलंग पर लेटा-लेटा सब देख रहा है। अब उसकी पत्नी प्रात:काल सुबह 4-5 बजे से रोना प्रारंभ करती है, रोते-रोते मौहल्ले पड़ौस के लोग इकट्ठे हो गये, लोगों ने पूछा कैसे-क्या हो गया ? पता नहीं शाम को तो कह रहे थे सिर में बड़ी तेज दर्द हो रहा है। कह रहे थे, ये बना दे, वो बना दे, मैंने तो सब कुछ बना दिया, न कुछ खाया पीया, कुछ बोले भी नहीं और चले गये। बड़ी जोर-जोर से रोती जा रही है, कहती जा रही है नगर के सभी लोग इकट्ठे हो गये कहने लगे-अच्छा लड़का था, सम्मानीय था, किन्तु वो तो रो रही है बाल खोल लिये, छाती पीटती जा रही है, सिर जमीन में पटकती जा रही है। सबकी आँखों में आँसू आ गये उसके रुदन को देखकर के और एक ही बात कह रही है-हाय ! सेठ जी चले गये, सेठ जी ने हमसे कछु नहीं भांकी (भांकी का मतलब कुछ न कहा) सेठ जी कुछ तो मन की कह जाते, न कुछ बताया किसको क्या देना है, क्या किससे लेना है सेठ जी ऐसे ही चले गये, कुछ नहीं भांकी सेठ जी! अब तो कछु भांको बार-बार चिल्ला रही है। सेठ जी यूं ही चले गये हमसे कछु नहीं भांकी-कछू तो भांको-सेठ जी पड़े-पड़े सोच रहे हैं कहाँ तक सुनूँ कहा तक सुनूँ-सेठ जी ने ज्यों ही सुना सेठ जी ने हमसे कछु नहीं कहीं अब तो कछु भांको-तो सेठ जी बोले-खीर सटासट पी गयी लड्डू हैं सो चाखो-और क्या भाखे मैंने देख लिया तुम्हें हमसे कितना प्यार है तू कितने मेरे ऊपर प्राण देती है मैं ये देखना चाहता था कि तू मेरे बिना जी पायेगी या मर जायेगी, मुझे विश्वास हो गया तू चैन से जीयेगी तेरा कुछ बिगड़ने वाला नहीं है और वह पलंग से सीधा उठा और जाकर के जंगल में दीक्षा ग्रहण कर ली।

ये दुनिया धोके की पाटी

महानुभाव ! संसार का नग्न सत्य तो ये ही है चाहे कोई कुछ भी कहे-तुम किसी को धोका दे रहे हो कोई तुमको धोका दे रहे हैं दुनिया धोके की है।

जानबूझ के अंध बने हैं आँखे बांधी पाटी।
रे जिया ये दुनिया धोके की पाटी॥

ये दुनिया सब धोके की है, सब एक दूसरे को धोखा दे रहे हैं तुम सामने वाले को दिखा रहे हो कि मैं तुम्हें बहुत प्यार करता हूँ, तो सामने वाला भी तुम्हें दिखा ही रहा है कि मैं तुम्हें बहुत प्यार करता हूँ। तुम सामने वाले को नहीं करते, सामने वाला तुमको नहीं करता सब अपने आप में मस्त हैं ये तो संसार है सब ठगिया ही ठगिया भरे पड़े हैं, सब एक दूसरे को ठग रहे हैं। एक व्यक्ति ठगने के लिये हाट में पहुँचा 'शुद्ध घी' कहकर गंदा-संदा घी बेचने लगा और दूसरा व्यक्ति तलवार बनाकर लाया। कई व्यक्ति हाट में सामान बेचने आये, हाट में सबका सामान बिक गया किन्तु इन दोनों का नहीं बिका, तो उसने उसे घी के बदले तलवार दे दी और मन में सोचने लगा कि मैंने इसको ठग लिया। घी वाले ने जब तलवार म्यान से खोलकर देखी तो तलवार का म्यान तो बड़ा सुंदर था, पीली-पीली सी चमक रही थी तलवार सोच रहा था सोने की है किन्तु वह तो लकड़ी की तलवार थी पीलापन तो सिर्फ ऊपर से दिखाई दे रहा था जैसे ही उसने ऊपर से वार किया देखा तो लकड़ी, वह सोचने लगा मैं तो ठग गया। वह दूसरा व्यापारी जो सोच रहा मैंने उसे ठग लिया, उसने घर जाकर के देखा तो जैसे ही पूड़ी बनाने के लिये घड़े में से घी निकाला तो उसमें घी एक अंगुल भी नहीं नीचे तो गोबर ही गोबर भरा पड़ा है। दोनों सोच रहे कि मैंने उसको ठग लिया-मैंने इसको ठग लिया। दुनिया ये न सोचे कि तुम नहीं ठगाये जा रहे तुम दूसरे को ठग

भी रहे हो और ठगाये भी जा रहे हो, दुनिया में यही चल रहा है कुँये में भांग पड़ी है जो भी पीता है वह मस्त होता है वह नाचने-गाने लगता है, तू उसे अपना कह रहा है वह तुझे अपना कह रहा है किन्तु न तू उसका है न वह तेरा है वे तो केवल एक भ्रम मोह है माया जाल है। इस माया ने आपकी आँखों में पट्टी बांधी है।

महानुभाव ! कहने का आशय यह है कि धोखा ज्यादा समय तक चल नहीं सकता, इसलिये आचार्यों ने कहा-''साथी सगा न कोय'' इस संसार में तेरा कोई भी साथी सगा नहीं है तू इस बात को आज स्वीकार कर ले, चाहे कल स्वीकार कर लेना, अगले भव में चाहे अनंतभव के बाद तुझे स्वीकार तो करना पड़ेगा, तुझे वही मिलेगा जो तेरी आत्मा कर रही है दूसरे की आत्मा की करनी का फल तुझे नहीं मिल सकेगा।

पुण्य साथी है

महानुभाव ! इस दुनिया में कोई सगा नहीं, ये शरीर भी जब अपना साथ नहीं देता-

''जहाँ देह अपनी नहीं-तहाँ न अपना कोय''

जब शरीर जो जन्म से पूर्व गर्भ से ही साथ में चल रहा है। वह भी साथ नहीं देता है तो फिर और कौन साथ देगा, इस शरीर से ज्यादा निकटवर्ती आत्मा का कौन हो सकता है। जब ये शरीर ही साथ छोड़ देता है तो फिर इस संसार में तुम्हारा साथ कौन देगा? परछाई भी साथ छोड़ देती है। जब पुण्य का प्रकाश होता है तो परछाई साथ-साथ चलती है, जब पाप का अंधकार आ जाता है तो परछाई भी साथ छोड़ जाती है, तो महानुभाव ! कहने का अभिप्राय यह है कि व्यक्ति अपने आप के बारे में सोचे, अपने हित के बारे में सोचे, वह सोचता तो है पर सोचता तब है जब उसे ठोकर लगती है, सोचता

तो तब है जब उसे गहरा आघात लगता है, जब किसी की मृत्यु होती है तब कहता है भईया संसार में कुछ भी नहीं है, कल अच्छे भले थे, हम बोल कर आये देखो! आज चल बसे। जितने निकटवर्ती का निध न होता है तब सत्य सामने आ जाता है और जब तक व्यक्ति को ऐसा धक्का नहीं लगता तब तक सावधान नहीं होता, व्यक्ति सोता हुआ ऐसे नहीं जागता, सपने में नींद और गहरी हो जाती है किन्तु सपना जब खतरनाक आ जाये, स्वप्न में किसी की मृत्यु हो गयी हो या स्वप्न में किसी ने तुम्हें पहाड़ से नीचे पटक दिया हो, अग्नि के कुंड में गिर गये या नदी में गिर गये तो फिर सपना टूट पाता है। जब तक आघात नहीं पहुँचता तब तक सपना नहीं टूटता। रात्रि के सपने को तोड़ने के लिए भी आघात चाहिए ऐसे ही दिन का सपना जो आप देख रहे हैं इसे तोड़ने के लिए भी जीवन में कोई गहरा आघात चाहिये, जब गहरा आघात लगता है तो सपना क्षणभर में टूट जाता है। महानुभाव !

जिनके सपने टूट गये वे धर्म की ओर भागने लगते हैं, जो जाग रहे हैं वे धर्म के क्षेत्र में भाग रहे हैं और जो सोये हैं वो अपनी चेतना की निधि को खोये पड़े हैं तो महानुभाव !

आज यदि तुम्हारा कोई साथी सगा है। तो वह है तुम्हारा पुण्य। यदि पुण्य तुम्हारे साथ है तो पूरी दुनिया तुम्हारे साथ है यदि वही तुम्हारा साथ छोड़ जायेगा तो कोई भी तुम्हारा साथ नहीं निभा पायेगा। इसलिये चिंतवन करें अपने मन को धर्म में लगायें, पुण्य में लगायें, सद्कार्य में लगायें इसी से आत्मकल्याण संभव है। अन्य फिजूल बातों से न तो आज तक किसी का हित हुआ है न कभी हो सकेगा।

फोर सर्च लाइट

Four Search Light

आज हम थोड़ी सी चर्चा करेंगे जो जीवन में बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि हमारे जीवन में ऐसी चर्चा बहुत होती हैं, जब चर्चा पूर्ण हो जाती हैं तब लगता है ये कोई ज्यादा महत्वपूर्ण चीज नहीं थी और जो महत्वपूर्ण चीज है वह कई बार छूट जाती है। हम जब किसी बड़े व्यक्ति के पास जाते हैं मन में बहुत सारी बातें सोचकर जाते हैं। जब उनके पास पहुँचते हैं लगभग 90% बातें तो वहीं छूट जाती हैं। 10% चर्चा कर पाते हैं और कई बार ऐसा होता है जो ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं होती हैं वे प्राय:कर निकलती चली जाती हैं। आज ऐसा प्रयास है कि जीवन को सफल और सार्थक करने वाले प्रकाश के संबंध में चर्चा करें। काश! हम प्रकाश के बारे में चर्चा कर लेते तब नि:संदेह हमारा विकास ही विकास हो जाता और हमारा ह्रास और विनाश रुक गया होता। हम प्रार्थना करते हैं कि सभी के जीवन में यह प्रकाश, आस, विकास की चर्चायें हों जिससे हताशा और निराशा प्रत्येक व्यक्ति के जीवन से निकलती चली जायें। जब व्यक्ति के जीवन में ह्रास नहीं होता है वह व्यक्ति विश्वास के साथ आगे बढ़ता चला जाता है। किन्तु वह बिना प्रकाश के संभव नहीं है। काश! हमारे जीवन में प्रकाश आ जाये और हमारी आत्मा आकाश की तरह से अनंत बढ़ती चली जाये क्योंकि हमारी आत्मा में अनंत शक्तियाँ निहित हैं।

प्रेम, वात्सल्य और विश्वास का प्रकाश-

आत्मा की एक-एक शक्ति का चिन्तन करते जाओ आपके पास समय कम पड़ जायेगा चिन्तन करने का विषय कम नहीं पड़ेगा हमारी और आपकी जिंदगी है ही कितनी सी सैकड़ों वर्षों में भी नहीं

है, जो सैकड़ों की उम्र में पहुँच जाता है वह बहुत पुण्यात्मा जीव कहलाता है। आजकल तो दहाई के अंक में ही उम्र पूर्ण हो जाती है। महानुभाव ! पहले उम्र हजार, लाख, कोटि, नील, पद्म, संख्य इतने वर्षों की होती थी, कर्मभूमि के मनुष्य उस आयु के समक्ष कुछ भी नहीं हैं, यूँ कहें सागर के सामने चार बूंद भी नहीं है, किन्तु फिर भी आचार्यों ने कहा है वह विद्या इस जीवन में पहले प्राप्त कर लेना चाहिये जिस विद्या के माध्यम से तुम्हारा जीवन आलोकित हो जाये, प्रकाशित हो जाये, सुरभित हो जाये, सुगंधित हो जाये, पूज्यनीय वंदनीय हो जाये जिससे तुम्हारा भी जीवन सफल व सार्थक की श्रेणी में आ सके। ऐसा काम करना जो सबसे श्रेष्ठ है। जीने के लिये मानव को क्या चाहिये ? आप कहेंगे-रोटी कपड़ा और मकान, मैं कहूँगा नहीं, संसार में ऐसे भी व्यक्ति देखे जाते रहे हैं जो बिना आलम्बन मकान के भी जीते हैं, ऐसे व्यक्ति भी देखे जा सकते हैं जो बिना वस्त्र और बिना भोजन के भी रह सकते हैं।

रोटी कपड़ा और मकान जीवन की अनिवार्य आवश्यकतायें कहीं जाती हैं तो ऐसे भी महामानव हो सकते हैं जो तीनों से रहित होकर अपना जीवन जी सकते हैं। पक्षी और पशु कपड़े नहीं पहनते। किंतु फिर भी जीते हैं, कुछ पक्षी ऐसे भी हो सकते हैं जिन्हें आटा नहीं मिलता कंकड़ चुग कर जीवन जीते हैं कुछ पानी पीकर भी जी सकते हैं बिना रोटी के भी किसी का जीवन चल सकता है, किसी का जीवन बिना मकान में रहकर पहाड़ों और जंगलों में रहकर भी पूर्ण हो सकता है, बहुत सारे पशु-पक्षी जिनका कोई मकान महल नहीं फिर भी वे अपना जीवन बहुत सुख-शांति से जी लेते हैं कोई महल वाला क्या जीयेगा? तो जो व्यक्ति कहता है जीने के लिये रोटी-कपड़ा और मकान आवश्यक है मैं समझता हूँ शायद इससे भी हटकर कोई और चीज होना चाहिये जो रोटी कपड़ा मकान से भी

अधिक आवश्यक है। जिसके बिना जीवन चल नहीं सकता। इन तीन के बिना तो चल सकता है। वह क्या चीज है वह चीज है 'प्रकाश' प्रकाश के बिना जीना मुश्किल है, पंचेन्द्रिय ही नहीं दो इन्द्रिय, तीन इंद्रिय, चार इंद्रिय असंज्ञी जीव हैं उन्हें भी प्रकाश चाहिये, जिनकी आँख है उन्हें भी प्रकाश चाहिये, जिनकी आँखे अंधी हैं या नहीं हैं उन्हें भी प्रकाश चाहिए वे भी प्रकाश का अहसास करते हैं बिना प्रकाश के जी नहीं सकते।

किसी पौधे को गमले में लगाकर के तहखाने में बंद कर दो जहाँ हवा व प्रकाश न पहुँचे धीमे-धीमे वह पौधा मरता चला जायेगा उसका हरितपना लुप्त होता चला जायेगा और पीलापन आता चला जाएगा कोई मानव जीवन में कभी धूप का सेवन ही न करे तो उसके शरीर में विटामिन्स की कमी होने लगेगी और धीमे-धीमे शरीर रोग को पकड़ लेगा नष्ट हो जायेगा। प्रकाश अत्यन्त आवश्यक है बिना प्रकाश के व्यक्ति जी नहीं सकता, आप कह सकते हैं महाराज श्री आप ऐसा कैसे कह सकते हैं-रात्रि में तो सूर्य नहीं होता। मैंने ये नहीं कहा कि सूर्य से ही जीता है, मैंने कहा प्रकाश से जीता है। रात में सूर्य का प्रकाश नहीं है तो क्या हुआ चन्द्रमा का प्रकाश तो है। हर रात्रि में चन्द्रमा तो नहीं होता? मैंने ये नहीं कहा कि चन्द्रमा के प्रकाश से जीता है। जब चन्द्रमा तुम्हारे घर में प्रकाश नहीं करता तब तुम्हारे घर में ट्यूब लाईट हैलोजन-जलती है। जब घर की लाईट चली जाती है। तब ? तब दीपक, लालटेन, मोमबत्ती जलती है। जब दीपक में तेल नहीं है या मोमबत्ती नहीं है तब? फिर कौन सा प्रकाश है। फिर चेतना में प्रकाश होता है। विश्वास का प्रकाश। चेतना में विश्वास होता है प्रेम और वात्सल्य का प्रकाश, यदि चेतना में से विश्वास का वात्सल्य का प्रकाश निकाल दिया जाये तो फिर वह व्यक्ति जीते जी मुर्दा हो जायेगा, जब भी कोई व्यक्ति जीता है, तो किसी आस को

लेकर जीता है, किसी विश्वास के साथ जीता है। किसी से प्रेम करता हुआ जीता है। जब वह समझ लेता है मैं किसी से प्रेम नहीं करता और मुझसे भी संसार में कोई प्रेम करने वाला नहीं है ऐसा व्यक्ति अपने जीवन से ऊब जाता है। और विदेशों में जाकर देखो वह आत्महत्या करने को तैयार हो जाता है।

प्रकाश की महत्ता

भारतीय संस्कृति की ये विशेषता है कि भारतीय संस्कृति में दिन का प्रारंभ प्रकाश से होता है और पाश्चात्य संस्कृति में दिन का प्रारंभ घोर अंधकार से होता है इसलिये पाश्चात्य संस्कृति में जो दिन बदला जाता है तारीख बदली जाती है वह रात के 12 बजे बदली जाती है भारतीय संस्कृति में तिथियों के अनुसार दिन का प्रारंभ सूर्योदय से होता है इसलिये व्रत करने वाले व्यक्ति ऐसा नहीं कि तारीख बदल गयी तो रात के 12 बजे भोजन करना प्रारंभ कर दें। प्रात:काल सूर्योदय के बाद ही अपने व्रत को तोड़ता है तभी वह अपने फास्ट को ब्रेक करता है इसीलिये उसका नाम रखा है ब्रेकफास्ट। रात्रि में जो फास्ट किया दिन में भोजन करने के बाद जो छोड़ दिया वह फास्ट आपका ब्रेक हो गया। प्रात:काल सूर्य की किरण निकल कर आयी आपने देवता के चरणों में माथा झुकाया और हृदय के देवता को, चेतना के देवता को आपने श्रद्धा की आँखों से निहार लिया, चूंकि जब अंतरंग में श्रद्धा का प्रकाश नहीं होगा तब चित्त का देवता तुम्हें दिखाई नहीं देगा, जैसे मंदिर का देवता अंधेरे में दिखाई नहीं देता है ऐसे ही चित्त रूपी चैत्यालय में विराजमान आत्मारूपी देवता तब तक नहीं दिखाई देता है जब तक श्रद्धा का दीया नहीं जलता है। जब तक चेतना के क्षितिज पर सम्यक्‌दर्शन का उदय नहीं होता है तब तक चित्त रूपी वेदी में विराजित आत्मा रूपी परमात्मा दिखाई ही नहीं देता है।

महानुभाव ! प्रकाश तो वहाँ भी चाहिये हमारी भारतीय संस्कृति प्रकाश के आधार से जीती है। इसके लिये ही हमारी भारतीय संस्कृति में दीप जलाने की परम्परा है, जब भी कोई महोत्सव होता है, मांगलिक कार्यक्रम होता है सबसे पहले चित्र का अनावरण और दीप का प्रज्ज्वलन किया जाता है। घरों में भी आज भी जो माननीय परिवार हैं उनके यहाँ सुबह शाम घृत का दीपक दोनों समय जलाया जाता है। चाहे हर कमरे में कितनी ही लाईट जलती रहती हों किन्तु जो धर्मात्मा, सम्मानीय, प्रतिष्ठित परिवार हैं उनके महल में चाहे दो ही मिनट के लिये सही, गाय के घी का दीपक जलाया जाता है। इससे निरोगता रहती है, व्यक्ति कैसा भी असाध्य रोगी हो औषधि बाद में काम करेगी पहले घी का दीपक जला दो जो रोग छः महीने में ठीक होने वाला है वह तीन महीने में ठीक हो जायेगा। महानुभाव भारतीय परम्परा, संस्कृति प्रकाश से ही चलती है अंधकार में तो कुछ है ही नहीं। जीवन का प्रारंभ होता है तो निःसन्देह प्रकाश से होता है। सम्यक्त्व का प्रकाश आत्मा में आ जाये वही वास्तव में जीवंत जीवन कहलाता है। अंधकारमय जीवन, जीवन नहीं। प्रकाश की किरण फूट कर आती है गुरु रूपी सूर्य से, प्रभु रूपी सूर्य से। वह किरण आपके चक्षु का स्पर्श करती है। चक्षु यदि उसमें प्रकाश ग्रहण करने की सामर्थ्य है तब उसमें प्रकाश किरण का सदुपयोग करते हुये जीवन को सफल और सार्थक कर लेते हैं। बाह्य पदार्थों को भी देखने जानने में समर्थ होते हैं और चेतना के वैभव को निहारने में भी समर्थ होते हैं।

प्रकाश पर प्रकाश

महानुभाव ! प्रकाश में तीन अक्षर हैं प्र-प्रकृष्ट अवस्था, 'का'-आत्मा की 'श' कषायों को शमन करते हुये जो कषायों का शमन करके आत्मा की प्रकृष्ट अवस्था प्राप्त होती है। वही वास्तव में सच्चा प्रकाश कहलाता है और यदि इंगलिश के माध्यम से जाने तो अंग्रेजी में प्रकाश को लाईट कहते हैं-

L –कहता है व्यक्ति को Literate होना चाहिये यदि व्यक्ति पढ़ा-लिखा है तब तो प्रकाश कारगर है। यदि अनपढ़ है तो प्रकाश काम नहीं करता चाहे कमरे में कितनी ही लाईट हो पुस्तक हाथ में दे दी जाये किन्तु पढ़ना नहीं जानता तो बाहर का प्रकाश कुछ कार्य नहीं कर सकता। तो 'L' Literate । दूसरा-

I –Intelligent –यदि व्यक्ति पढ़ा लिखा तो है किन्तु स्वयं की बुद्धि नहीं है प्रकाश कहाँ से काम दे पायेगा, दीपक में बत्ती तो है किन्तु घी नहीं है दीपक जलायेंगे तो बत्ती तुरंत जलकर राख हो जायेगी। तो Literate भी होना चाहिये और Intelligent भी होना चाहिये।

G- Grateful –होना चाहिये। जिसके जीवन में कृतज्ञता है, तो जीवन में प्रकाश ठहर सकता है। यदि कृतज्ञता का पात्र-दीया नहीं हो तो दीपक की ज्योति कैसे जलेगी? नहीं जल सकती।

H-Humble –वित्रम-यदि जीवन में विनम्रता आये तो उसका प्रकाश है। दीया यदि ऐसा है जिसमें आपने बत्ती लगायी वहाँ तक स्निगधता पहुँच नहीं रही, कई बार दीपक ऐसे होते हैं बीच में पाइप सा खड़ा कर दिया बत्ती उसमें से आ रही है। साईड में घी भरा हुआ है वह वहाँ तक नहीं पहुँच पायेगा तो बाती बुझ जायेगी। तो विनम्र होना भी जरूरी है और पुन: अंत में है।

T –Trained होना चाहिये। जो व्यक्ति Trained नहीं है Thanksful नहीं है या Thinker नहीं है तो नि:संदेह अपने जीवन में क्या कर पायेगा?

एक तो वह चिंतन शील होना चाहिये जिसकी Thought Activities विशेष होती हैं वह व्यक्ति वास्तव में विशिष्ट होता है। यदि जिसकी वचन संबंधी Activities कितनी भी तेज हो पर Thought

Activities वाला व्यक्ति उससे ज्यादा आगे होता है, यदि Body Activities ज्यादा हैं तो वह उससे और पीछे है तो महानुभाव ! ये लाईट शब्द अपने आप में कह रहा है कि इस प्रकार के गुण हमारे जीवन में हों तब तो प्रकाश पर विश्वास कर सकते हैं। प्रकाश की ओर बढ़ सकते हैं प्रकाश हमारे जीवन में स्थिर हो सकता है।

चेतना की लाइट

आपने देखा प्रकाश जीवन में हो। एक प्रकाश से भी जीवन में काम चल सकता है तो दूसरे प्रकाश की क्या आवश्यकता है। आप क्यों कहना चाहते हैं। 'Four Search Light' केवल लाईट ही कह देते आपने Search Light क्यों कहा ? क्या जरूरी है Search Light कहना, दूसरी बात यदि Search light होती तो एक ही पर्याप्त होती दूसरी की, तीसरी की, चौथी की क्या आवश्यकता? आवश्यकता है इसलिये चार की बात कही। चेतना में एक ही गुण पर्याप्त है। यदि अरिहंत अवस्था में एक ही गुण प्रकट हो जाता तो अनंत चतुष्टय कहने की आवश्यकता नहीं पड़ती। चतुष्टय क्यों कहते? वह चार का समूह है जैसे अरिहंत के लिये चार लाईट आयी हैं। अनंत ज्ञान, अनंतदर्शन, अनंत सुख, अनंतवीर्य ऐसे ही हमारी भी चेतना में चार ही लाईट आयी हैं। पाँचवी लाईट की आवश्यकता है नहीं और तीन से काम चलेगा नहीं, चउ आराधना-दर्शन, ज्ञान, चारित्र और तप, चउ विनय यही चार प्रकार की विनय ये आवश्यक है और चार प्रकार की कषाय का शमन होने से चार प्रकार का प्रशम भाव जाग्रत होता है उस धर्मात्मा के चित्त में। आचार्य पूज्यपाद स्वामी जी ने सर्वार्थसिद्धि में लिखा-जहाँ सम्यक्त्व का भेद किया सराग और वीतराग।

सराग की परिभाषा दी-**''प्रशमसंवेगानुकम्पास्तिक्याद्यभिव्यक्ति लक्षणं प्रथमं आत्मविशुद्धि मात्र मितरत्।''**

प्रशम संवेग अनुकम्पा और आस्तिक्य ये चार लक्षण वाला व्यवहार सम्यग्दर्शन होता है और आत्म विशुद्धि मात्र चारों की एक लाईट हो गयी सिद्धत्व की दशा में अलग-अलग कहने की आवश्यकता नहीं, सिद्ध कह दिया पर्याप्त है और जब केवली है तब कहा जाता है-सर्वज्ञ है, सर्वदर्शी है, अनंतसुखी है। सिद्धों के गुण अलग-अलग गिनाने की आवश्यकता नहीं होती है। सर्वगुणों का पुंज एक हो गया, जिसके पास कुछ अंधकार है, उसके पास कहेंगे ये नहीं है, वह नहीं है किन्तु जिसके पास सब कुछ है उसे कहेंगे यह सम्पूर्ण पुरुष है कुछ भी कमी नहीं हैं। सिद्ध तो सम्पूर्ण जीवात्मा है। अरिहंत भगवान के पास तो अघातिया कर्मों का भार अभी भी है। उनके पास अघातिया कर्म संबंधी अंधकार अभी कहीं न कहीं हो सकता है। किन्तु Four Search Light हो तो वह पूरा अंधकार नष्ट हो सकता है। तो महानुभाव पहली Search Light है जो सामने से आ रही है, दूसरी लाईट पीछे से, तीसरी लाईट आजू से और चौथी बाजू से आ रही है।

चारों ओर से जब किसी वस्तु का अवलोकन करें तो सम्यक् रूप उसका दिखायी देगा, कोई चीज एक तरफ से देखें तो प्रमाणिक नहीं होती। कैसे? आपने यहाँ से किसी वस्तु को देखा तो एक साईड का हिस्सा दिखाई देगा तीन साईड का नहीं, यदि दूसरी तरफ फोक्स करेंगे तो फिर आजू-बाजू का हिस्सा दिखाई नहीं देगा। आजू-बाजू से देखेंगे तो आमने-सामने का नहीं दिखाई देगा। चारों लाईट जब एक साथ पड़ेंगी तो वस्तु का सम्पूर्ण स्वरूप दिखाई देगा। हाथ पर रखा हुआ आँवला या हाथ पर रखा हुआ कोई भी फल, वह सामने चारों तरफ लाईट है तो स्पष्ट दिखाई दे रहा है यदि एक तरफ से लाईट डालेंगे तो दिखाई नहीं देगा। आप कहेंगे जब सूर्य एक तरफ से प्रकाश डाल रहा है तब भी तो वस्तु दिखाई दे रही है। फिर चार की क्या आवश्यकता? आवश्यकता है जब सूर्य प्रकाश देता है आपके हाथ में

कोई भी वस्तु है तब आपको इधर देखना है तो हाथ ऐसे घुमाना पड़ेगा, उधर से देखना है तो हाथ को ऐसे घुमाना पड़ेगा। तो ऐसी विशेषता आत्मा में नहीं है कि आत्मा को यूँ घुमाकर देख लिया या यूँ घुमाकर देख लिया जब एक साथ चारों तरफ से लाईट पड़ेगी तब आत्मा का सम्यक् स्वरूप दिखाई पड़ेगा अन्यथा नहीं, इसलिये अनन्त चतुष्टय वाला केवली जो है वह सर्वज्ञ, वही प्रमाणिक है, इसके अलावा जितने छद्मस्थ हैं वे प्रमाणिक नहीं हैं इसीलिये तीर्थंकर भगवान तब तक मौन रहते हैं जब तक उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति न हो जाये। महानुभाव ! छद्मस्थ के चार ज्ञान भी हो जाएँ मति श्रुत अवधि मन:पर्यय ज्ञान तब भी वे पूर्णज्ञानी नहीं है और केवलज्ञान एक नहीं होता अनंत चतुष्टय के साथ में ही होता है केवलज्ञान अनंतदर्शन, अनंतसुख, अनंतज्ञान, अनंतवीर्य के बिना रहता ही नहीं इसलिये Four Search Light कहना आवश्यक हो गया। यदि केवली की बात कर रहे हैं तो फिर हमारे लिये इसकी क्या महत्ता। महत्त्व तो यह है कि उस लाईट को तो पाने का हमारा उद्देश्य है। किन्तु ये लाईट हमारे जीवन में आवश्यक है जो आचार्य पूज्यपाद ने कही–प्रशम संवेग अनुकम्पा और आस्तिक्य ये चार लाईट हमारे जीवन में आवश्यक है पहली लाईट का नाम है–

1. **प्रशम**–प्रशम का अर्थ है–प्र–प्रकृष्ट/उत्कृष्ट रूप से, श–शमन करना किसको दबाना, जो अभी तक उठ गया है जिसने हमको दबा दिया है उसको दबाने की आवश्यकता है। जो तुम्हें नहीं दबा रहा है जो पहले से ही दब के चलता है, उसे नहीं दबाना वरना कुचल के मर जायेगा। जो हाथी तुम्हें दबा कर चल रहा था उस हाथी पर बैठ जाओ कोई बात नहीं किन्तु गिजाई पर मत बैठ जाना मर जायेगी, चींटी पर मत बैठ जाना। वह घोड़ा तुम्हें दबा सकता है उस घोड़े पर बैठ जाओ तो कोई बात नहीं है किन्तु यदि किसी मक्खी पर बैठ गये

तो वह मर जायेगी। जिसने तुमको दबाया है उस पर बैठ जाना इनका आशय मैं ये नहीं कह रहा कि पशु-पक्षी की सवारी आप करो किन्तु मैं ये कहना चाहता हूँ कि हमको तो अनादिकाल से दबाया है हमारे कर्मों ने। उन कर्मों को हमें दबाना है। हमको दबाया है मुख्य रूप से उस मोहनीय कर्म ने।

मोहनीय कर्म के दो भेद हैं। पहला दर्शन मोहनीय दूसरा चारित्र मोहनीय। दर्शन मोहनीय में मिथ्यात्व, सम्यक्मिथ्यात्व, सम्यक्प्रकृति ये दबाती नहीं हैं ये तो हमारी धारणा को मिथ्या करती हैं। दिग्भ्रमित करती हैं दबाने वाली होती हैं चार कषाय। पहले चार ही क्यों कहते हैं। 25 क्यों नहीं कहते, क्योंकि इन चार के ही चार-चार भेद कर दिये मूल में कषाय चार ही हैं। भेद की अपेक्षा 4x4=16। 9 क्यों छोड़ दिये? वह भी तो कषाय हैं, हाँ कषाय तो हैं वह नो कषाय हैं किंचित् कषाय हैं जब बड़े का नाम ले लिया जाता है तो छोटे का नाम लेना आवश्यक नहीं होता घर के मुखिया का नाम ले लिया तो अन्य सदस्यों का नाम लेने की आवश्यकता नहीं है। वे बच्चे उसी वंश के ही तो हैं, किसी अलग परिवार या जाति से नहीं आये हैं इसी प्रकार मूल में कषायें चार होती हैं जब उन कषायों को नहीं दबायेंगे तब तक प्रशम की लाइट जलेगी ही नहीं। प्रशम की लाईट ज्यों-ज्यों कषाय दबती जायेंगी लाईट तेज होती चली जायेगी। ऐसी टॉर्च भी आती है कि पहला स्विच ऑन करो तो लाईट जली दूसरा स्विच ऑन करो तो प्रकाश और बढ़ गया, तीसरा ऑन करो तो पुनः और प्रकाश बढ़ गया, चौथा ऑन किया तो प्रकाश और ज्यादा बढ़ गया, तो ऐसे ही क्रोध मान माया लोभ को दबाते चले जायेंगे तो जीवन में प्रकाश बढ़ता चला जायेगा।

किन्तु ये प्रशम भाव कहाँ से आता है और कैसे आता है हमें इस पर चर्चा करनी है। प्रशम भाव जीवन में आता है कषायों को दबाने से।

प्रथमानुयोग-कषाय शमन कारक

कषायों को कैसे दबायें? आत्मा पर जलती कषायों की अग्नि शांत हो जाये ऐसा कौन-सा पानी लायें जिससे यह बुझ जाये। वह पानी कहाँ मिलेगा? क्या क्षीर सागर से या कालोदधि समुद्र से गंगा नदी से कहाँ से वह पानी लाना है बाहर का पानी जहाँ मिलता है वह आपको मालूम है किन्तु कषायों को शमन करने का पानी तो सिर्फ एक ही जगह मिलता है वह है जैनाचार्यों द्वारा लिपिबद्ध 'प्रथमानुयोग'। जब प्रथमानुयोग का स्वाध्याय किया जाता है तो कषायों की अग्नि शांत होती चली जाती है। प्रथमानुयोग आवश्यक है पहले दूसरे तीसरे गुणस्थान वाले व्यक्तियों के लिये बहुत आवश्यक है-उसके आगे प्रथमानुयोग को छोड़ना नहीं है जैसे ही पानी डालना छोड़ दिया तैसे ही कषाय उबलना शुरू हो जायेगी। पानी का लोटा, बाल्टी पास रख लो छींटे मारते रहो, अग्नि भी समझ जायेगी इसके पास पानी है, अन्यथा वह भी भभकती रहेगी, इसीलिये प्रथमानुयोग को तो 1,2,3 गुणस्थान से प्रारंभ करना है और कहाँ तक 6वें गुणस्थान तक छोड़ना नहीं है। 6वें गुणस्थान के बाद उस प्रथमानुयोग को निचोड़कर उसका सत्व निकाल कर धारण कर लिया अब आगे उस प्रथमानुयोग को साथ में ले जाने की आवश्यकता नहीं है। अर्क आपके पास है जब अर्क को पचाने की शक्ति नहीं थी तब तक प्रथमानुयोग को साथ ले जाने की आवश्यकता थी।

जो व्यक्ति घी को नहीं पचा सकता उसके लिये दूध आवश्यक है उसे दूध पिलाया जाता है घी नहीं। प्रकृति ने माँ के आँचल में दूध भर दिया है घी नहीं भरा, क्या बिगड़ता प्रकृति का यदि माँ के आँचल में घी भर देती उसका बालक हष्ट-पुष्ट होता किन्तु प्रकृति भी जानती है घी पचाने की सामर्थ्य शिशु में नहीं होती इसीलिये शिशु को दूध पिलाया जाता है। किशोर अवस्था में घी खाते हैं। पचाने

की सामर्थ्य आती है किन्तु इसका आशय ये भी नहीं है कि प्रथमानुयोग का दूध केवल बच्चों को ही पिलाया जाता है अरे! ये भी ध्यान रखो बुढ़ापे में भी आवश्यक है और युवावस्था में भी प्रथमानुयोग का दूध न पियोगे तो फिर शर्ट की बांह ऊपर कैसे चढ़ाओगे? तालठोक कर पहलवानी कैसे करोगे, यदि कर्मों से ताल ठोकनी है तो प्रथमानुयोग का दूध कभी भी नहीं छोड़ना है। फिर आपके जीवन में मलाई भी आयेगी, आपके जीवन में करुणानुयोग का मावा भी आयेगा, फिर आपके जीवन में द्रव्यानुयोग का शुद्ध घी भी मिल जायेगा, मक्खन मिलेगा सब मिलेगा, क्रमशः सब मिलेगा यदि एक साथ सब हजम कर जाओगे तो बीमार पड़ जाओगे पचा भी न पाओगे इसीलिये पहले दूसरे तीसरे गुणस्थान में क्या है-प्रशमभाव

प्रशमभाव की लाइट चाहिये हमें चेतना का अहसास होने लगता है, शांति मिलती है। तब हमें लगता है वास्तव में मैं कुछ हूँ। मेरी आत्मा का अस्तित्व है जब तक कषायों की होली जलती है व्यक्ति आपे के बाहर हो जाता है, क्रोध मान माया लोभ के आवेश में उस समय चेतना का आभास नहीं होता, जैसे उबलते हुये पानी में किसी को अपना चेहरा दिखाई नहीं देता ऐसे ही जब तक कषायें जल रही हैं तब तक चेतना का अहसास नहीं होता।

संवेग—अब दूसरी लाइट है संवेग। जैसे प्रशम का अर्थ था-कषायों को उत्कृष्ट रूप से दबा देना। तो संवेग की परिभाषा आचार्यों ने दी कि-

'धम्मो धम्म फलम्मिय हरिषो भावो होइ संवेगो'

धर्म में, धर्म के फल में, धर्मात्मा को देखकर, धर्म की क्रियाओं को देखकर जिसके चित्त में आनंद आये, प्रभु परमात्मा को देख करके, साधु महात्मा को देखकर के, त्यागी-व्रती को देखकर के

जिसकी आत्मा में आनंद आये, जिसका चित्त खिल जाये जैसे सूर्य को देखकर कमल खिल जाते हैं, जैसे चन्द्रमा को देखकर कुमुदनी खिल जाती है, जैसे स्वाती नक्षत्र में गिरती हुयी पानी की बूंद को देख सीप का मुख खिल जाता है, जैसे बादल से पानी बरसता है तो पपईये का मुख खिल जाता है ऐसे ही देव शास्त्र गुरु को देखकर जिसका चित्त खिल जाये नि:संदेह समझ लेना संवेग भाव है। जिसका मन आनंद से भर जाये, जिसे लगे बस मुझे देव शास्त्र गुरु मिल गये तो सब कुछ मिल गया। चौथे गुणस्थान में आवश्यक है संवेग भावना। संसार शरीर भोगों के प्रति भीरुता और धर्म-धर्मात्मा के प्रति तीव्र श्रद्धा का भाव, आनंद, उल्लास, उमंग ऐसे लगे जैसे जब कोई बालक खिलौने को पकड़ लेता है। तो उसे छोड़ता नहीं ऐसे ही सम्यक्दृष्टि जीव देव शास्त्र गुरु को जब पकड़ता है तो छोड़ता ही नहीं है। गर छोड़ दिया तो डूब जायेगा जैसे राम के हाथ से छूटा पत्थर डूब गया। वैदिक परम्परा में एक बात आती है-

कि जब पुल बन रहा था उस समय हनुमान जी, नल नील आदि सभी थे। पुल बनाने के लिये सभी पत्थर डालते जा रहे थे, राम चन्द्र जी ने देखा-यहाँ के पत्थर तो बड़े हल्के हैं, जो पानी में तैर रहे हैं। वे भी गये एक पत्थर उठाया तो हनुमान जी ने कहा-ठहरो आप क्या कर रहे हो? रामचन्द्र जी ने कहा यहाँ के पत्थर बड़े हल्के हैं पानी में डूब नहीं रहे तो मैं भी डालकर देखता हूँ, हनुमान जी ने कहा-हम इन पत्थरों पर राम का नाम लिख रहे हैं इसलिये पत्थर तैर रहे हैं आप डालोगे तो डूब जायेंगे। अरे ! ऐसे कैसे हो जायेगा तुम्हारे हाथ से नहीं डूबा मेरे हाथ से कैसे डूब जायेगा, रामचन्द्र जी नहीं माने जबरदस्ती पत्थर उठाया और डाल दिया और पत्थर डूब गया, यह देख हनुमान जी ताली बजाने लगे, रामचन्द्र जी ने कहा-इधर आओ हनुमान जी ये आप किसी से कहना नहीं। हनुमान जी ने कहा-मैं सबसे कहूँगा,

एक-एक व्यक्ति से जाकर कहूँगा। रामचन्द्र जी ने कहा-इधर आओ हनुमान जी तुम मेरी बेइज्जती करोगे क्या? लोग क्या कहेंगे राम ने पत्थर डाला और डूब गया, हनुमान जी बोले चाहे कुछ भी हो मैं तो कहूँगा-अच्छा! क्या कहोगे? मैं ये कहूँगा जिसके हृदय में राम का नाम है वह भव सागर में डूबता नहीं तैरता है और जो राम के हाथ से छूट जाता है वह डूब जाता है। जो राम के हाथ से छूटेगा वह गिरेगा तो सही।

तो संवेग का आशय है कि जिसके हृदय में देव शास्त्र गुरु के प्रति गहन आस्था है। एक बालक माँ के बिना रह नहीं सकता चाहे माँ उसे मिठाई या खिलौना देकर मायके जाती है तो वह कहता है मैं तुम्हारे बिना नहीं रह सकता वह कहता है-जब तुम इतनी बड़ी हो गयी तब भी अपनी माँ के पास जा रही हो और मैं इतना छोटा हूँ तो मुझे छोड़कर जा रही हो, ये तो अन्याय जब तुम अपनी माँ के पास जा रही हो मुझे मेरी माँ से अलग क्यों कर रही हो, मैं तो अपनी माँ के पास रहूँगा। तो कहने का आशय यह है कि जब बालक माँ से छूटता है तो उसे दुःख होता है। ऐसे ही चौथे गुणस्थान वाला व्यक्ति जब देव शास्त्र गुरु से छूटता है तब-तब उसके अंतरंग में भी बहुत पीड़ा होती है यदि वास्तव में वह सम्यक्दृष्टि है तो उसे पीड़ा होगी ही होगी, यदि उसे पीड़ा नहीं हो रही तो समझना अभी उसने माँ को माँ नहीं समझा या उसकी वह माँ सच्ची माँ नहीं है।

जियें संतुलित जीवन

तो महानुभाव! चौथे गुणस्थान में कौन-सा भाव ? संवेग भाव।

जीवन का समीचीन वेग तभी आता है जब जीवन में सम्यक् दर्शन आ जाता है, जब तक सम्यक् दर्शन नहीं आता तब तक जीवन के वेग में सम्यक् पना नहीं आता तब तक दुर्वेग, आवेश आते रहते

हैं किन्तु संवेग नहीं आता तो संवेग आना बहुत जरूरी है, चित्त की धारा दो किनारों के बीच संतुलित होकर के रहती है तब वह निःसंदेह सागर तक पहुँच जाती है, यदि वह संतुलित होकर नहीं बहती तो सागर तक नहीं पहुँचती, किन्तु वह बहता हुआ पानी कहीं न कहीं स्थान प्राप्त कर ही लेता है। यदि श्रद्धा का जल चेतना के पर्वत में भर गया है तो कहीं न कहीं भक्ति के रूप में प्रकट होगा ही होगा कैसा भी पहाड़ हो उसमें पानी भर गया है तो कहीं न कहीं से झरना फूटेगा ही फूटेगा और वह झरना पहाड़ से फूट गया यदि संयुक्त होकर बह गया है तो सागर से मिल जायेगा-वह पानी कहता है-

शत-शत बाधा बंधन तोड़,
निकल चला मैं पत्थर फोड़
पारावार मिलन की चाह
मुझे मार्ग की क्या परवाह,
जाता हूँ जब भृकुटि मरोड़
निकल चला मैं पत्थर फोड़॥

जिसके जीवन में जब पारावार से मिलने की चाह होती है। जैसे अपनी आत्मा को परमात्मा से मिलने की चाह होती है तो ये चाह तभी पैदा होती है जब सम्यक्त्व हो जाये और सम्यक्त्व होते ही संवेग भावना जाग्रत होती है। यदि जब वह कभी जाता है भृकुट मरोड़, कहीं भृकुटी टेड़ी कर ली तो गाँव के गाँव बहते चले जाते हैं, वह झरना अपना रास्ता बनाता है जहाँ नदी नहीं थी वहाँ रास्ता दो यदि नहीं मिलेगा तो उजाड़ता चला जायेगा सम्यक्दर्शन कहता है मुझे परमात्मा से मिलना है मेरी आत्मा को परमात्मा से मिलना है, हे कर्मों ! तुम दूर हो जाओ यदि नहीं दूर होंगे तो तुम सबको मैं अपनी बाढ़ से बहाता हुआ ले जाऊँगा और तुम्हारी कहानी ही खत्म हो जायेगी। अपना नाम बचाना चाहते हो तो रास्ता छोड़ दो तो चौथे गुणस्थान में

संवेग भावना की लाइट है। संवेग सम्यक्‌दर्शन का गुण है यह लाईट है पर इसकी प्राप्ति कहाँ से होती है? इसकी प्राप्ति होती है चरणानुयोग से।

प्रथम भाव की लाइट मिली प्रथमानुयोग से, महापुरुषों का जीवन चरित्र पढ़ा किसी ने पाप किया, किसी ने पुण्य किया। पाप किया तो अधो गति में चला गया, पाप किया तो दुःखों को भोगा, पाप किया तो कषाय बढ़ती चली गयी, पतन होता गया और जिसने साधना की उसे साध्य की सिद्धि हो गई इसलिये जीवन में व्यक्ति जितना भी अधिक प्रथमानुयोग का स्वाध्याय करेगा उसकी कषायें उतनी मंद होती चली जायेंगी, ये ध्यान रखना, जीवन में नोट कर लेना प्रथमानुयोग का स्वाध्याय किये बिना कोई भी व्यक्ति चाहे मुनि महाराज ही क्यों न हों अपनी कषाय को शांत नहीं कर सकते। वह जल प्रथमानुयोग से ही मिलता है। चरणानुयोग का स्वाध्याय करने से जीवन में संवेग और वैराग्य की निष्पत्ति होती है। जितना चरणानुयोग पढ़ते जाओगे उतना ही तुम्हारे जीवन में संवेग और वैराग्य बढ़ता चला जायेगा, पुनः संवेग वैराग्य के बटन से लाइट बढ़ाते जाओ तो संयम की प्यास तीव्र हो जाती है और चौथा बटन दबाओ तो संयम स्वीकार करने का संकल्प भावना हो जाती है तो दूसरी लाइट है संवेग की जो चरणानुयोग से मिलती है। यदि तुम्हारी श्रद्धा दृढ़ हो गयी हो, तुम्हारी कषायें शांत हो गयी हों, तुम भद्र परिणामी हो गये हो वृषभ की तरह से, धर्म से चित्त को जो भर ले वह वृषभ है। वृषभ का अर्थ धर्म भी होता है। वृषभ मुनि महाराज का पर्यायवाची भी होता है, एक देश श्रावक को भी वृषभ कहा जा सकता है, तो महानुभाव ! वह संवेग भावना बढ़ती जाये इतनी बढ़ जाये कि व्यक्ति अब रुक न पाये तब वह बनेगा अणुव्रती या महाव्रती। 5वें 6वें गुणस्थान में जो व्यक्ति पहुँच गया उसके जीवन में तीसरी चीज क्या आ जायेगी।

अनुकम्पा–तीसरी चीज है अनुकम्पा। अनुकम्पा की लाइट उसके जीवन में आ जायेगी फिर उसका हृदय थोड़ी-थोड़ी बात में काँपने लगेगा। यदि किसी चींटी-चींटे पर पैर पड़ गया तो आत्मा काँप जायेगी या नहीं भी पड़ा किसी भी दुःखी जीव को देखकर उसकी आत्मा काँप जायेगी। वह कहेगा इसमें भी तो आत्मा है इसे भी कष्ट होता है, उसे कम्पन होगा। कौन से गुणस्थान में? 5वें और 6वें गुणस्थान में। ये कम्पन की लाइट कहाँ से मिलेगी करणानुयोग से। पाँचवें छटवें गुणस्थान वाले मुनिराजों को करणानुयोग में लग जाना चाहिये। यदि रात में आँख खुल गयी तो बस लगाते रहो किस गुणस्थान में कितनी कर्म प्रकृति। कितना बंध, कौन सा उदय गिनते चले जाओ, लोक कितना बड़ा है। जीव के परिणाम कितने होते हैं। किस गति में योनि में जीव के किस प्रकार के भाव होते हैं। ये सब लगाते जाओ। किन्तु ध्यान रखना प्रथमानुयोग, चरणानुयोग को छोड़ नहीं देना, यदि उसे छोड़ दिया तो पुनः नीचे गिरने के चांस रहेंगे। यदि छोड़ दिया तो सर्च लाइट एक ही रह जायेगी इसलिये छोड़ना नहीं है, प्रथमानुयोग की जो लाइट है उसे मंद भी नहीं करना और बंद भी नहीं करना, मंद कर दिया तो सर्च लाइट नहीं कहलायेगी और बंद कर दिया तो केवल बोझा ढोओगे। तो मंद भी नहीं बंद भी नहीं। तो आपके हाथ में कितनी लाइट हो गयीं। तीन-यह अनुकम्पा की लाइट प्राप्त होती है, इसकी बैटरी और जो सेल इसमें डलते हैं। वह चार्जिंग मिलती है करणानुयोग से।

प्रशम की चार्जिंग प्रथमानुयोग से, संवेग की चार्जिंग चरणानुयोग और पुनः अनुकम्पा करुणा की चार्जिंग करणानुयोग से मिलती है। महानुभाव जितना भी आप सिद्धान्त में डूबते चले जाओगे आपको लगेगा मैंने ऐसा परिणाम कर लिया तो ऐसा बंध हो गया। तुम्हारी आत्मा एक-एक शब्द बोलने में कापेंगी, तुम्हारी आत्मा एक-एक

क्रिया करने में कांपेगी जब तीन लाइट साथ है तब आगे चलें तो जैसे प्रथमानुयोग का अर्क लेके चौथे गुणस्थान में बढ़े 5वें, 6वें में बढ़े ओर जब 6वें से आगे बढ़ेंगे तो करणानुयोग का भी अर्क निकालकर फिर और आगे बढ़ना है, वह अनुयोग है द्रव्यानुयोग और गुण है-

आस्तिक्य—आस्तिक्य वह है-जिससे अस्तिकपने का बोध हो जाये। अस्ति-'है'। अस्तिक-'हैपना' जो अपनी सत्ता का अहसास कराने वाला हो। वह अस्ति उसमें 'त्व' प्रत्यय लगाकर अस्तित्व हो गया-अस्तित्वपना जिसमें रहता है, देखो-एक तो वह हो गया जिसमें शीतलता रहती है वह 'जल', जल जिसमें भरा हुआ है वह जलघट ऐसे ही अस्ति सामान्य अर्थ, और अस्तिपना जिसमें है वह अस्तित्व। संसार में जितनी भी वस्तुयें हैं वह अस्ति है, बहुवचन में कहें तो संति हैं। एक वचन में कहें तो सत् रूप में है। तो वह सत्पना जिसमें पाया जाता है, जिसे अस्तिकपने का बोध हो गया वह है आस्तिक्य। जो अस्तिक के बोध को स्वीकार नहीं करता वह नास्तिक होता है।

महानुभाव! जैसे-धनिक धनी किसे कहते हैं जिनमें धनवानपना विद्यमान है वह धनिक है। पहलवान किसे कहेंगे-पहल करके जिसने शक्ति को प्राप्त किया है। जिसने पहल करके तंदरुस्ती प्राप्त की, वह तदंरुस्तीवान ही पहलवान है। ऐसे ही अस्तित्वपना का बोध जिसे हो गया है, अस्तिकपना तो सबके अंदर है किन्तु जब तक उसका बोध नहीं हुआ तब तक नहीं है, हर एक व्यक्ति राजा हो सकता है किन्तु जब तक राज्यमहल और राज्य वैभव की चाबी ही उसके पास नहीं है। वह खड़ा हो भिखारी की तरह तो उसे राजा न कहेंगे जब वह गद्दी पर बैठकर, महल में पहुँच गया तभी राजा कहलाता है।

''सबके पल्ले लाल लाल बिना कोई नहीं।
या से हुये कंगाल गांठ खोल देखी नहीं।।

तो बात ये है अस्तित्वपना तो सबके अंदर है। किन्तु जब बोध नहीं है-जैसे हमने आपको एक बार बताया था-

ज्ञानावरणी कर्म के क्षय से अनंतज्ञान, दर्शनावरणी कर्म के क्षय से अनंत दर्शन, मोहनीय कर्म के क्षय से अनंत सुख और अन्तराय कर्म के क्षय से अनंतशक्ति प्रकट होती है और मोहनीय कर्म का सम्पूर्ण क्षय 12वें गुणस्थान में होता है वे मुनिराज अनंत सुखी हो गये क्या आपने ऐसा कभी कहीं पढ़ा सुना है क्यों? जिन्हें प्रकट हो गया वे भी नहीं जानते कि अनंत सुख है। जब तक जाना नहीं है तब तक कैसे कहोगे? जैसे बच्चे स्कूल जाते हैं तो स्कूल बैग पीठ पर लेकर जाते हैं। पहले बच्चे विद्या को पीठ पर भार की तरह लाद कर नहीं ले जाते थे, वे हृदय से लगाकर या सिर पर या अटैची, संदूक में ले जाते थे जिससे विद्या उनके हृदय में मस्तिष्क में निवास करती थी, आज पीठ पर ले जाते हैं इसलिये बिसरती जा रही है। पीठ पार लादी विद्या केवल भार बन जाती है वह सार नहीं बन पाती है। पहले जो विद्या को आगे लेकर जाते थे वह विद्या उनके हृदय में वास करती, विश्वास करती, उपवास देती, प्रकाश देती। पीठ पर लादी विद्या सिर्फ भार बन जाती है जीवन का आधार नहीं बन पाती, तो जो पीठ पर स्कूल बैग लेकर जा रहा है उसके बैग में पीछे से चेन खोलकर 1000-500 की गड्डियाँ चुपचाप डाल दी उसे अहसास भी नहीं हुआ। तो क्या ऐसे व्यक्ति को आप करोड़पति कहोगे क्या? जिसे अहसास भी नहीं कि मेरे पास मेरे बैग में करोड़ो रु. आ गये। जैसे उसे अपने करोड़पति होने का बोध नहीं है वह अपने को करोड़पति नहीं मानेगा, ऐसे ही जब तक अपने अस्तित्व का बोध नहीं होता है तब तक वह आस्तिक नहीं है, यूँ तो आस्तिक पने का प्रारंभ चौथे गुणस्थान से हो जाता है ऐसे ही वास्तव में आस्तिक का बोध जब होता है जब आत्मा आत्मा से साक्षात्कार कर लेती है और एक देश

साक्षात्कार का प्रारंभ होता है 7वें गुणस्थान से, निर्विकल्प ध्यान से, शुद्धोपयोग से, ये आस्तिक गुण प्रारंभ होता है सप्तम गुणस्थान और पुनः चौथी लाइट प्रारंभ होती है सप्तम गुणस्थान से। किन्तु आती कहाँ से? द्रव्यानुयोग से। उसकी बैटरी और कहीं चार्ज होती ही नहीं है, जो भी आगे बढ़े, अस्तित्व का बोध किया तो द्रव्यानुयोग से।

द्रव्यानुयोग में यह खासियत है कि इसे पढ़ा जा सकता है कहीं भी किन्तु इसका अर्थ ही आगे कामयाब होता है ऐसे मात्र पढ़कर 1,2,3,4,5,6,7वें गुणस्थान में इसका अर्क पीने में, ग्रहण करने में, सेवन करने में नहीं आता चौथी लाइट जो अस्तित्व की लाइट है व्यवहार की भाषा में जिसे कहते हैं कि हमें अपने अस्तित्व का बोध हो गया है। यह कहना अलग बात है। जब अस्तित्व का बोध होता है उसमें शब्द नहीं होते, आत्मा-आत्मा में लीन होती है और पुनः चौथी लाइट कहाँ तक चलती है। वह गुणस्थान आगे 7वें से 12वें तक रहती है जैसे अनंत सुख की प्राप्ति के लिये मैं आपसे कह रहा था कि 12वें गुणस्थान में मोहक्षीण हो गया किन्तु बोध नहीं हुआ बोध कब होगा? अनंत ज्ञान होने पर अनंत ज्ञान के बिना अनंत सुख को जानोगे कैसे और कोई भी ज्ञान होता है बिना दर्शन के होता नहीं। इसलिये दर्शनावरणी कर्म का क्षय भी अनिवार्य, दर्शन भी साथ हुआ अनंत सुखी कह दो नहीं अभी नहीं क्यों? अनंतज्ञान को, अनंत दर्शन को अनंत सुख को भोगने के लिये अनंत शक्ति चाहिये, जब तक अंतराय कर्म का क्षय नहीं होगा तब तक अनंत ज्ञान, दर्शन, सुख, टिकेंगे कहाँ, अन्तराय कर्म का क्षय होने पर वह 'सबल' होगा अनंत शक्ति के बिना आत्मा अनंत सुख को झेल सकती है क्या? कोई यदि कपड़े का थैला बनाये और उसमें लोहा भर दे क्या वह झोला इसे झेल पायेगा। नहीं झेल पायेगा उसके लिये तो टीन का बक्स बनाना पड़ेगा, तो आत्मा मजबूत बनती है अंतराय कर्म का क्षय होने से। तब

आत्मा का पाट मजबूत होता है तब उसमें अनंत सुख भी ठहरता है, अनंतज्ञान भी ठहर जाता है, अनंतदर्शन भी ठहर जाता है और अनंत शक्ति भी ठहर जाती है। तो महानुभाव! चौथी लाइट का प्रारंभ कहाँ से होता है। 7वें गुणस्थान से।

ये चारों लाइट चारों के अर्क कहाँ तक काम देते हैं? बारहवें गुणस्थान तक 13वें गुणस्थान में इन सब लाइट को अलग करो स्वयं ही वह जीवन जहाँ दर्शन ज्ञान सुख वीर्य की लाइट आ गयी पुनः वहाँ पर Four Search Light उसके उपरांत आगे बढ़ो तो अयोग केवली अवस्था को प्राप्त करते ही घातिया कर्मों को नष्ट किया पुनः four Search Light पुनः सिद्धालय में जाकर विराजमान हो गये। महानुभाव चारों अनुयोग रूपी लाइट के माध्यम से आत्मा में प्रशम, संवेग, अनुकम्पा व अस्तिक्य गुण प्रकट हों। आप सभी लोगों का मंगल हो, शुभ हो इन्हीं भावनाओं के साथ मैं अपनी शब्द श्रृंखला को विराम देता हूँ।

जीवंत कौन

आज थोड़ी चर्चा करेंगे अपने जीवन के संबंध में। दुनिया के संबंध में चर्चा कई बार की है और कई बार सुनी है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आप बीती कहानी सदैव स्मरण करनी चाहिए। उस आप बीती कहानी का स्मरण करने से वह व्यक्ति जीवन में जो ज्ञान लेकर साथ चलता है वह अनुभव ज्ञान सदैव काम देने वाला होता है। पर बीती कहानी के बारे में व्यक्ति सुनकर के या तो हँसता है या मुस्करा कर चल देता है किंतु आप बीती कहानी जब समझ में आती है तब व्यक्ति पाप करने से ठहर जाता है। आप बीती कहानी जब समझ में आती है तो व्यक्ति संयत हो जाता है। आप बीती कहानी समझ में आती है तब व्यक्ति उन बुराईयों से दोषों से बचता है जिसके कारण जीवन में बहुत सारी प्रतिकूलताओं को सहन किया। जीवन के बारे में जानना तो जरूरी है। जब तक जीवन के बारे में नहीं जानेंगे तब तक जीवन के लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकते। जीवन किस कार्य के करने से सफल और सार्थक होगा यह तभी सिद्ध हो सकता है जब पहले जीवन को जानें। यदि कोई व्यक्ति यह नहीं जान सकता कि मैं रोगी हूँ या निरोगी तो यदि वह रोगी होगा तो निरोगी बनने का प्रयास नहीं करेगा और निरोगी है तो निरोगी जीवन का सही एहसास न कर सकेगा इसलिए उसको जानना जरूरी है वह रोगी है या निरोगी। अभी दिन है या रात यदि रात और दिन का भेद नहीं होगा ज्ञान नहीं होगा तो दिन का सही सदुपयोग न कर सकेगा और रात में दीपक न जला सकेगा इसलिए ये जानकारी होना तो परमावश्यक है। आज हम थोड़ी सी चर्चा करते हैं जीवन के संबंध में। जीवन दो प्रकार का होता है एक जीवंत जीवन और एक मुर्दा जीवन। जीवंत जीवन मुर्दा जीवन दोनों में कुछ विशेषताएँ होती हैं। यदि जीवन मुर्दा बना हुआ है तो उससे जीवंत जीवन की सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती जीवंत

जीवन के काम नहीं किए जा सकते और जीवंत जीवन है तो मुर्दा बनाकर के उसे नहीं छोड़ा जा सकता।

विभिन्न अर्थों में जीवंतता

महानुभाव, निरोगी और रोगी की पहचान करने के कुछ लक्षण होते हैं जिससे डॉक्टर पहचान करता है ये व्यक्ति रोगी है ये निरोगी है। वैद्य को नाड़ी दिखाते हैं और डॉक्टर भी आपका बी.पी. आदि चैक करता है आपकी नब्ज आपकी धड़कन आदि चैक करके खून टेस्ट करता है तब बताता है कि आप रोगी हैं या निरोगी। ऐसे ही कोई संत, कोई महात्मा, कोई साधु आपकी चेतना की नाड़ी को पकड़कर के बता सकता है कि आप जीवंत हैं कि मुर्दा। आप कहेंगे महाराज जी हम तो जीवंत हैं। तुम्हारे कहने से क्या होता है। तुम्हारे अंदर जीवंतता के लक्षण हैं तब तो तुम जीवंत हो और जीवंतता के लक्षण नहीं हैं तो तुम जीवंत नहीं माने जाओगे। यदि वैद्य कहता है तुम्हारी नाड़ी गड़बड़ है तुम रोगी हो और तुम लाख कहो नहीं हम निरोगी हैं। ब्लड टैस्ट की जो रिपोर्ट आई है वो कहे तुम रोगी हो और तुम कहो हम निरोगी हैं या तुम अपने को रोगी कहो और रिपोर्ट ठीक आती है तो वह रिपोर्ट मानी जाएगी, उसका प्रमाण है तुम्हारी बात का प्रमाण नहीं है। तो जीवंतता के मायने क्या होता है आचार्यों के शब्दों में देखने का प्रयास करते हैं। आ. कुन्दकुन्द स्वामी के पास चलते हैं आ. कुन्दकुन्द स्वामी इतने महान आचार्य-जीवंत प्राणी किसे बता रहे हैं जीवंतता के मायने क्या कह रहे हैं जिसके जीवन में सम्यक्त्व है वह प्राणी जीवंत है। जिसके जीवन में सम्यक्त्व नहीं समीचीन दृष्टि नहीं, सम्यक् दर्शन नहीं, सही आस्था नहीं, रुचि नहीं, निष्ठा नहीं, प्रतीति नहीं और आत्मा का बोध नहीं वह प्राणी मुर्दे के समान है।

आचार्य अमोघवर्ष मुनि महाराज के पास चलते हैं वो क्या कहते हैं जीवन के मायने। उन्होंने कहा-**किं जीवितमनवद्यम्** जो निर्दोष

जीवन है, अनवद्य जीवन है, पापों से रहित जीवन है वास्तव में वही जीवन जीवंत है। जो पापों के साथ लिप्त है, पापों में डूबा हुआ है ऐसा व्यक्ति जीते हुए भी मुर्दे के समान है।

आ. सकलकीर्ति महाराज के पास चलते हैं-वे क्या कहते हैं? जीवंत जीवन कौन सा होता है? तो आ. सकलकीर्ति महाराज ने कहा-''**धर्मेण संयुता जीवा**''। जो धर्म से संयुक्त है वही व्यक्ति जीवित है और जो धर्म से रहित है ऐसा व्यक्ति मुर्दा है। आ. वामदेव सूरी, आ. देवसेन इत्यादि आचार्यों ने कहा-जिसके जीवन में संयम है, चारित्र है, सदाचार है ऐसा व्यक्ति जीवित है। जिसके जीवन में संयम, चारित्र सदाचार नहीं है वह व्यक्ति मुर्दा है। इन्द्रभूति गौतम गणधर के पास चलते हैं उन्होंने कहा-जिसके जीवन में दया है ''**धम्मो दया विशुद्धो**'' वह व्यक्ति जीवित है। यदि जीवन में दया धर्म नहीं है तो वह व्यक्ति मृत है। महानुभाव, किंतु जिस भारत देश में रह रहे हैं यह भारत देश की संस्कृति क्या कहती है। भारतीय संस्कृति के अनुसार कौन जीवित है कौन मुर्दा है? भारतीय संस्कृति जीवंतता का प्रमाण पत्र किसे देती है? यदि भारतीय संस्कृति जहाँ पर हमने जन्म लिया है, जहाँ पर अभी हम रह रहे हैं जी रहे हैं क्या वह भारत देश हमें जीवित कहता है? हो सकता है कि भारत की सरकार कहती हो कि जो देश के लिए समर्पित है वो जीवित है और जो देश के लिए समर्पित नहीं है वह मुर्दे की तरह से है। किंतु भारतीय संस्कृति जो दीर्घ काल से प्राग् वैदिक काल से चली आ रही है वह भारतीय संस्कृति क्या कहती है? वह किसे जीवंतता का प्रमाण पत्र देती है।

भारतीय संस्कृति एक श्लोक के माध्यम से कहती है-जिस व्यक्ति के पास ये बातें हों वो जीवित है और ये नहीं हैं तो उसे मुर्दा घोषित कर देना चाहिए। जैसे एक डॉक्टर यदि किसी व्यक्ति की सांस नहीं चल रही है तो मुर्दा घोषित कर देगा और सांस चल रही है तो

जीवित। दूसरा व्यक्ति जो वैद्य है वह कहेगा सांस तो नहीं चल रही अभी मारणांतिक समुद्घात कर रहा है किंतु अभी आत्मा मृत्यु को प्राप्त नहीं हुई शरीर में अभी गर्मी है। कई बार ऐसा होता है मृत्यु के अन्तर्मुहूर्त पहले ही व्यक्ति की नाड़ी पकड़ में नहीं आती और थोड़ी देर बाद व्यक्ति उठकर बैठ जाता है जिसे जैनआगम में कहा-मारणांतिक समुद्घात मूल शरीर को छोड़े बिना जिस स्थान पर जन्म लेना है, जीव के आत्म प्रदेश उस स्थान को छू आएँ वह मारणांतिक समुद्घात कहलाता है। उस समय नाड़ी की धड़कने इतनी मंद हो जाती हैं कि पकड़ में नहीं आती। और डॉक्टर उस समय कह देगा व्यक्ति मर गया किंतु आयुर्वेदाचार्य कहेगा यहाँ से नाड़ी पकड़ में नहीं आ रही तो क्या हुआ कहीं और जगह से पकड़ेगा, ब्रह्म स्थान से देखेगा।

कहीं न कहीं गर्मी है तो सिद्ध है कि इसके प्राण अभी इसके अंदर ही हैं। महानुभाव, डॉक्टर कभी मृत्यु का प्रमाण पत्र दे सकता है। धर्माचार्य उसे फिर भी जीवित कह सकते हैं। धर्माचार्य कहते हैं जो धर्म के साथ मृत्यु को प्राप्त हो गया वह मरकर के भी अमर हो गया। वह जीवित है मरा कहाँ है। जब तक उसका यश नहीं मरा तब तक वह जीवित है और जिसकी जीते जी निंदा हो गई, लोग कहते हैं वह तो मर गया। इससे तो मर जाना अच्छा है। कई बार लोग कहते है। चुल्लु भर पानी में डूब के मर जा। उस व्यक्ति को धिक्कारते हैं। जिस व्यक्ति ने कोई निंदनीय कार्य किया कुल को कलंक लगाने वाला कार्य किया, कोई ऐसा कार्य किया जिसके कारण पूरी मानवता कराह उठी, पूरी मानवता आर्त स्वर में पुकारने लगी। ऐसा कोई कृत्य करने वाला व्यक्ति यदि जीवित भी है तो क्या उसे जीवित कहेंगे। कोई ऐसा व्यक्ति जिसने पूरे देश को बर्बाद कर दिया हो। हिरोशिमा नागासाकी में बम पटकने वाले या लादेन जैसे आतंकवादी या लश्करे जैसे आतंकवादी या नक्सलवादी छत्तीसगढ़ में या पश्चिमी बंगाल में,

झारखंड में, जो व्यक्ति के अमन चैन को छीनने वाले हैं, व्यक्ति को न चैन से जीने देते हैं न शांति से मरने देते हैं, न धर्म-कर्म करने देते हैं ऐसे व्यक्तियों का जीवन क्या जीवंत जीवन है। उनके परिवार के लोगों से भी पूछें तब भी वे ये कहेंगे इन्होंने हमारा जीना दुष्वार कर दिया। यदि ये नहीं होते तो भी हमारा पेट भरता। ये आतंकवादी लूट कर के लाते हैं इनके सहारे थोड़े ही हम जीते हैं। हमारा ही पुण्य पाप है। किंतु इन लोगों ने पूरे देश की नाक में दम करके रख दिया। ये जीते हुए भी मरे के समान हैं। कोई इन्हें जीवंत नहीं मानेगा। जो व्यक्ति पाप कार्य में संलग्न हैं। उसे कोई जीवंत नहीं कहता और जो पुण्य कार्य करके चला गया तब भी व्यक्ति कहते हैं वाह ! आज भी जीवित बैठा हुआ है।

जीवनः भारतीय संस्कृति में

महानुभाव, सबकी जीवंत जीवन की परिभाषा अलग-अलग है किंतु हम अब पहुँचते हैं भारतीय संस्कृति के अनुसार। भारतीय संस्कृति में, शास्त्रों में, इतिहास में, शिलालेखों पर जीवंत प्राणी किसे कहा ये कारिका के माध्यम से बताते हैं,

शांति तुष्टि पवित्रम् च, आनंदम् निजतत्त्वतः
जीवनम्-जीवनम् प्राहु, र्भारतीय सुसंस्कृतौ

भारतीय संस्कृति के अनुसार-उसके जीवन को ही जीवन कहा है उसे ही जीवित प्राणी कहा है जिसके अंदर चार बातें हों। ये चार बाते जीवन के लिए बहुत आवश्यक हैं ये चार प्राणों की तरह से हैं। जैसे जैन दर्शन कहता है कि प्राणी में चार प्राण कम से कम होना चाहिए। कौन से चार प्राण ?

''तिक्काले चदुपाणा इंदिय बलमाउ आणपाणो य।''

इन्द्रिय प्राण, आयु प्राण, बल प्राण और श्वासोच्छ्वास प्राण। ये चार प्राण जिसके अंदर पाये जाते हैं वह जीवित है। एक इन्द्रिय जीव

के पास भी चार प्राण होते हैं। चार में से एक भी कम हो जाए तो जीवित नहीं रह सकता और यदि आगे दो इन्द्रिय है तो छह: प्राण, तीन इन्द्रिय है तो 7 प्राण, आगे क्रमश: 8 प्राण, 9 प्राण, 10 प्राण किंतु कम से कम चार प्राण होना चाहिए। ऐसे ही भारतीय संस्कृति के अनुसार ये चार प्राण चाहिए।

शांति:-कषयों का शमन

महानुभाव, पहला प्राण कौन सा कहा ''शांति''! अपने जैन शास्त्रों में ये इन्द्रिय प्राण कहा हम बात कर रहे हैं, भारतीय संस्कृति की। ये मीठे प्रवचन श्रृंखला केवल जैनों के लिए नहीं जैनेतर व्यक्तियों के लिए भी है। जिनकी समझ में सब बातें आ सकें। तो भारतीय संस्कृति के अनुसार जीवंत कौन है? हमे जैन शास्त्र के अनुसार, हिंदुशास्त्र, सिक्ख शास्त्र, बौद्ध शास्त्र के अनुसार बात नहीं कहनी। डॉक्टर और वैज्ञानिकों के अनुसार बात नहीं कहनी। हम भारत में जी रहे हैं तो भारतीय संस्कृति के अनुसार हमें बात करनी है कि भारतीय संस्कृति के अनुसार जीवंत कौन है?

पहली बात है शांति। यदि जीवन में शांति है तब तो व्यक्ति जीवंत है और शांति नहीं संक्लेशता में जी रहा है, अशांति में जी रहा है, कलह में जी रहा है, मर मरके जी रहा है। जैसे व्यक्ति कहता है हे भगवान् ! इससे अच्छा तो मैं मर जाऊँ। न तो जीवन में गिनती है न मरे में गिनती है। किसी वृद्ध पुरुष की संक्लेशता बन गई हो तो वह कहता है कि भगवान-इससे अच्छा तो उठा ले। मेरी स्थिति मरे से ज्यादा बदतर हो रही है। **''अर्धमृतक सम बूढ़ापनो, कैसे रूप लखे आपनो।''** जीवंत जीवन का आनंद तो केवल वह ले सकता है जिसके चित्त में क्षणभर के लिए शांति है। शांति का अनुभव कर रहा है और वह समझ रहा है हे भगवान तुमने क्या वरदान स्वरूप जीवन दिया। जीवन का सही आनंद तो मैं ले रहा हूँ। शांति का अनुभव कर रहा हूँ।

शांति दो प्रकार की होती है-एक शांति होती है संसार में भौतिक पदार्थों को भोग करके। एक शांति होती है जो चेतना से निष्पन्न होती है। चेतना से निष्पन्न शांति अपनी स्वयं की शांति है और संसार के पदार्थों से प्राप्त शांति वह पराधीन शांति है। पराधीन शांति तो कभी होती ही नहीं **''पराधीनता सपनेहु सुख नांहि।''** शांति तो स्वाधीन है स्वाधीनता में ही सुख है। स्वाधीनता में अमन है चैन है। स्वाधीनता में खुशी है तो शांति कैसे आए धर्माचार्य कहते हैं जब व्यक्ति की कषाय शांत हो जायें तभी शांति आयेगी। कषायों को जीते जी शांत नहीं किया तो तुम्हारे जीवन में शांति नहीं हो सकती। फिर तो तुम तभी शांत होंगे जब शरीर से आत्मा निकल जायेगी। लोग कहते हैं अरे तुम्हारे मुंडन क्यों हो गया, घर में पिताजी शांत हो गये? अभी तक अशांत थे। अभी तक कषाय शांत नहीं हुई थी इसलिए शरीर ही पूरा शांत हो गया ठण्डा पड़ गया। अभी तक गर्मी थी जो गर्मी दूसरों की ठण्डक को दूर करने के लिए नहीं दूसरों को तपाने के लिए थी। इसलिए उपद्रव कर रहे थे। तो वह शांति नहीं जो शरीर छोड़ने पर मिलती है।

भारतीय संस्कृति कहती है जीते जी शांति का अनुभव करो तो वास्तव में तुम जीवंत हो अन्यथा मरने पर लोग कहेंगे कि वह शांत हो गए। मरने पर लोग कहेंगे वह स्वर्गवासी हो गए चाहे नरक में गए हों किंतु कहेंगे तो ये ही कि स्वर्गवासी हो गए क्योंकि शांत हो गए और शांत व्यक्ति ही स्वर्ग का आनंद ले सकता है। खौलते हुए पानी में उंगली डाल देंगे तो फफोला पड़ जायेगा और ठण्डे पानी में उंगली डालोगे तो आनंद आयेगा। ठण्डे पानी से नहाने का एक अलग आनंद होता है। आप कहेंगे सर्दी में। हाँ सर्दी में भी। सर्दी में भी ठण्डे पानी से नहाओगे तो ठण्डी नहीं लगेगी और गर्म पानी से नहाकर के बाहर आ गए तो हो सकता है जुकाम हो जाए। जो निरन्तर ठण्डे पानी से

नहाता है उसे प्रायः करके जुकाम होता ही नहीं और ध्यान रखो–सर्दी तो नहाने से पहले लगती है, नहाने के बाद इतनी नहीं लगती। नहाने के पहले व्यक्ति डरता है कांपता है कपड़े उतारने में क्योंकि शरीर का तापमान जो है उस समय थोड़ा सा ठीक है। कपड़े उतारोगे तो ठण्ड सी लगेगी और एक लोटा पानी डाल दिया सिर पर बस फिर क्या हैं, चाहे एक डालो या दस। तो बात ये है कि शांति, अंदर की शांति हो। अंदर से आग भभक रही है और ऊपर से पानी डालते जाओ तो उससे शांति नहीं होगी। शरीर ठण्डा पड़ गया तो क्या हुआ अभी कषाय दहक रही है। तो शांति होती है कषायों का दमन करने से। अंदर की कषाय शांत हो जायें। कषायें तो हमारे चित्त में होली सी जला रही हैं। जब ये होली जलती रहेगी कषायों की तब तक जीवन में शांति नहीं आयेगी और शांति नहीं आयेगी यानि पहला प्राण ही नहीं है तो आगे वाले प्राण कैसे आयेंगे। जब भवन में पहली सीढ़ी ही नहीं है तो आगे वाली सीढ़ी कैसे बनेगी। पहली मंजिल ही नहीं है तो ऊपर की मंजिल कैसे बनेगी। तो शांति तो पहली सीढ़ी है। यह तो पहला प्राण है। इसके बिना आगे के तीन प्राण हो ही नहीं सकते। तो शांति कब आती है कषायों को शमन करने पर।

निंदाः महापाप

प्रत्येक व्यक्ति अपनी कषायों का दुष्परिणाम भोगता ही भोगता है। हाँ ये बात अवश्य है व्यक्ति पुण्य के उदय में तीव्र पाप का अर्जन कर सकता है पाप के उदय में तीव्र पाप नहीं बांध सकता। जब व्यक्ति के जीवन में सब अनुकूलता होती है तब वह चाहे धर्म की निन्दा करके, चाहे वह परमात्मा की निंदा करके, चाहे माँ जिनवाणी की निंदा करके, चाहे निर्ग्रंथ गुरुओं की निंदा करके, चाहे साधर्मी की निंदा करके वह तीव्र पाप का बंध कर सकता है। किंतु जो दुःखी प्राणी है वह तीव्र पाप का बंध नहीं कर सकता।

वह कहेगा भैया वैसे ही तो पाप का फल भोग रहा हूँ। दूसरे की निंदा करके प्रभु की निंदा करके माँ जिनवाणी की निंदा करके, गुरु की निंदा करके, साधर्मी की निंदा करके मैं कहाँ जाऊँ? अब नरक में भी ठौर नहीं मिलेगा। अभी तो पाप का फल भोग रहा हूँ। किंतु जिसका पुण्य का उदय आता है वह कहता है कौन क्या कर लेगा मेरा? भगवान क्या कर लेंगे। भगवान की अटकी हो तो मेरे घर आ जाएँ मैं नहीं जा रहा मंदिर। काहे का धर्म-कर्म। धर्म-कर्म वो करते हैं जो पाप करते हैं। बुढ़ापे में करें अभी तो खाने-पीने के, खेलने-खालने के दिन हैं। अभी तो मौज-मस्ती करने के दिन हैं। इस उमर में मौज-मस्ती नहीं करेंगे तो कब करेंगे। क्या हाथ बांध कर बैठ जायेंगे। मुँह बांधकर बैठ जायेंगे। जो मन में आयेगा सो खायेंगे। जो मन में आयेगा सो करेंगे। आज तू बेटा मनमानी करले, दो क्षण, चार क्षण, दस क्षण बाद में फिर तेरे जीवन में क्या-क्या होगा, फिर कितने भवों तक भोगना पड़ेगा तो तैयार रहना। किंतु व्यक्ति पाप के उदय में उतना पाप नहीं कर पाता। जब दरिद्र होता है, गरीब होता है, शरीर से कमजोर होता है वह पाप करने का साहस नहीं कर पाता।

समानता का पाठ

महानुभाव चाहे क्रोध कषाय की गांठ हो चाहे बैर की गांठ कभी चित्त में शांति उत्पन्न नहीं होने देती। चाहे अहंकार की गांठ हो व्यक्ति अहंकार के कारण किसी छोटे व्यक्ति को तो समझता ही नहीं है। ऐसा समझता है ये सब घास कूड़ा हैं। ये कोई नौकर चाकर जैसे हों किंतु अहंकार के शिखर से जब नीचे उतर के आता है तब उसे लगता है प्रत्येक प्राणी के अंदर आत्मा है। सभी आत्मा एक बराबर हैं। चाहे घर में चार सदस्य हैं। चार भाई हैं तो चारों एक बराबर। यदि संस्था में दस सदस्य हैं तो एक बराबर। यदि समाज में सौ व्यक्ति हैं तो एक बराबर। यदि प्रांत में अनेक व्यक्ति हैं सब एक बराबर। प्रत्येक व्यक्ति

का वोट एक ही वोट होता है चाहे वे राष्ट्रपति हो, प्रधानमंत्री, उपमंत्री हो, चाहे कोई सांसद हो चाहे विधायक हो। यदि बहुत बड़ा पॉवर फुल व्यक्ति है तो एक व्यक्ति की वोट को सौ थोड़ी गिन लेंगे। एक ही वोट तो है और कोई व्यक्ति गरीब है जिसके पास पेट भरने के लिए भोजन नहीं है उसके कितने वोट हैं आधे, चौथाई या 1/100 वां हिस्सा। उसका भी एक ही वोट है सब बराबर हैं।

आ. नेमिचंद सिद्धांत चक्रवर्ती जी कहते हैं सभी जीव शक्ति की अपेक्षा से एक बराबर हैं। कोई न बड़ा है न छोटा है। सब आत्मा एक बराबर हैं प्रदेशों की अपेक्षा से हर आत्मा सिद्ध बनने की अधिकारिणी है। तो महानुभाव, शांति कब आती है क्रोध की अग्नि को बुझाने से, मान की चट्टान को तोड़ने से। मान कहते तो हैं मान किंतु मानता नहीं है व्यक्ति। व्यक्ति मान के उदय से मान कषाय में चलता है तो चाल हाथी जैसी होती है। जब मान के धरातल से नीचे पहुँच जाता है तो चाल चींटी जैसी हो जाती है। अहंकार के साथ सीना तान के चलता है मैं भी कुछ हूँ। ये नहीं मालूम तू सैकेण्ड का भी नहीं है। प्राण कूच कर जायेंगे तो डेड बॉडी कहाँ पहुँचेगी इस जीवन की औकात क्या है। ''मुट्ठी भर राख, चुल्लु भर पानी, इतनी सी है जीवन की कहानी।'' पता नहीं ये कब हवा निकल जाये, सांसों का बटोही कब चला जाये, पिंजरे से आत्मा रूपी पक्षी कब उड़ जाए और कब ये पिंजरा खाली हो जायेगा। काया की नगरी में जब तक आत्मा रूपी सम्राट बैठा हुआ है तब तक काया की नगरी आबाद है। उस सम्राट के निकलते ही काया की नगरी माटी में मिल जायेगी।

'मान' गया तो मान गया

महानुभाव किंतु व्यक्ति जब मान के शिखर पर जाता है तो मान नहीं पाता, एक पिता ने अपने बेटे को समझाया बेटा नहीं समझा और पिता बेटे में वाद-विवाद हो गया। बेटा गुस्सा होकर के घर के बाहर

चला गया पिता ने बहुत समझाया नहीं आया। शाम को लौटकर के आया, पिता के चरण छू लिए और माफी मांग ली। क्यों, आ गया लौटकर के शाम को। उस समय क्यों नहीं मान रहा था। उस समय बेटे के पास मान था इसलिए मान नहीं पाया। जब बेटे का 'मान' गया तो बेटा मान गया। जब तक बेटे का मान नहीं गया तब तक बेटा मान नहीं पाया। जब व्यक्ति का मान चला जाता है, अहंकार चला जाता है तो व्यक्ति सबकी बात मान लेता है। भैया, सबकी बात स्वीकार करने को तैयार, सबके हाथ जोड़ लेता है। और जब तक मान नहीं जाता है तब तक वह किसी की बात मानने को तैयार नहीं होता। न भगवान की, न गुरु की, न जिनवाणी की, न धर्म की, न धर्मात्मा की, न अपने सगे भाई की, न पिता की, न रिश्तेदारों की किसी की मानता नहीं है। इसलिए जब मान चला जाता है तभी मान पाता है और मान नहीं जायेगा तो मान नहीं पायेगा। मान ऐसी खतरनाक चट्टान है चित्त की भूमि पर वह ऐसे हावी हो गई है कि चित्त जैसे तड़प रहा हो अंतिम सांस ले रहा हो और मान की चट्टान रखी रहे और जीवंत जीवन का आनंद ले लिया जाये तो असम्भव है। तो मान के रहते हुए भी चित्त को शांति का अनुभव नहीं हो सकता।

माया शल्य

तीसरी कषाय मायाचारी है। मायाचारी व्यक्ति निरंतर आकुल, व्याकुल संक्लेशित रहता है। उसे ये लगता है कहीं मेरी मायाचारी प्रकट न हो जाये। **आमरणात् किं शल्यं**-मृत्यु पर्यंत व्यक्ति को क्या शल्य रहती है? गुप्त किया गया पाप जिंदगी भर आत्मा में काँटे की तरह चुभता रहता है। जो सबके सामने किया पाप है लोग उसे पापी कह देंगे। निंदा कर देंगे उसका पाप धुल जायेगा किंतु जिसको कोई जानता नहीं, बाहर से लोग पुण्यात्मा कह रहे हैं, धर्मात्मा कह रहे हैं, स्वागत और सम्मान कर रहे हैं और वह अन्दर में पाप से युक्त है। तो

बाहर से पुण्यात्मा, अंदर से पापी। जो गुप्त में पुण्य करता है वह गुप्त में अंदर से निःसंदेह सुख और शांति का अनुभव करता है किंतु जो गुप्त में पाप करता है तो गुप्त रूप से रोता है तड़पता है, बिलखता है।

तो महानुभाव मायाचारी बड़ी खतरनाक है। चौथी कषाय है लोभ। जितनी भी कषाय होती हैं लोभ के कारण। व्यक्ति हिंसा करता है प्रायः करके लोभ के कारण, झूठ बोलता है लोभ के कारण, चोरी करता है लोभ के कारण और विषय का सेवन करता है लोभ के कारण, परिग्रह का संचय करता है लोभ के कारण। लोभ सभी कामों की जड़ है। लोभ पाप का बाप है। लोभ कषाय भी शांति उत्पन्न नहीं होने देती। इसलिए चारों कषायों को शांत करना बहुत जरूरी है। जब चारों कषाय शांत हो जायेंगी तब जीवन में शांति के दर्शन हो सकेंगे। जीवन में शांति आ गई तब समझो व्यक्ति वास्तव में जीवंत है। और शांति नहीं आई तो जीवंत नहीं है। इस प्रकार पहले प्राण के संबंध में चर्चा की।

सुख का कोष

दूसरा प्राण तुष्टि-तुष्टि माने तोष संतोष। संतोष कैसे जो हमारे भाग्य से हमें मिला उतना ठीक है।

''रूखा-सूखा खायके ठण्डा पानी पी,
देख पराई चूपड़ी मत ललचावे जी।''

जो दूसरे की रोटी को छीनने का प्रयास करता है वह न तो चैन से अपनी रोटी खा पाता है न दूसरे की रोटी छीन पाता है। जिसने भी दूसरे की रोटी छीनने का दुस्साहस किया है उसने अपनी हिस्से की रोटी भी जीवन में नहीं खाई। तो महानुभाव, संतोष धारण करो। संतोष सुख का कोष, संतोष जीवन का होश और जिसके पास नहीं है संतोष

समझो वो है बेहोश। जिसके पास नहीं है संतोष वह है खामोश। भले ही खामोश है किंतु उसकी बाहर की खामोशी अंदर का हाहाकार विश्व में अशांति फैलाने वाला है।

''गौधन, गजधन, बाजधन और रतन धनखान
जब आवें संतोषधन, सब धन धूलिसमान''

व्यक्ति गौधन से तृप्त नहीं होता, गजधन से तृप्त नहीं होता, अश्व धन से तृप्त नहीं होता, भूमि से तृप्त नहीं होता, धन-वैभव से तृप्त नहीं होता। कितना भी परिग्रह हो उसे तृप्ति नहीं मिलती है। आत्मा को तृप्ति यदि मिलती है तो ज्ञान से मिलती है क्योंकि ज्ञान संतोष को पैदा करने वाला होता है। ज्ञान के मेघों से संतोष के बादल बरसते हैं। संतोष की मूसलाधार वर्षा ज्ञान के मेघों से होती है। यदि ज्ञान के सघन बादल चेतना के आकाश में न हों तो संतोष रूपी जल की वर्षा न होगी और बिना संतोष रूपी जल के चेतना की दाह कैसे भी शांत नहीं की जा सकती।

संतोष की, मूसलाधार वर्षा ही चेतना रूपी वन में लगी दावाग्नि को शांत करने में समर्थ है अन्यथा चेतना का जंगल स्वाहा हो जायेगा। तो जीवन में संतोष बहुत आवश्यक है। जीवन में कुछ भी न मांगो भगवान से और यदि मांगो तो ये मांगो–भगवान मुझे संतोष दे दो। संतोष यदि तुम्हारे पास है तो कुछ भी नहीं हो तब भी तुम्हारे पास सुख और शांति है। संतोष तुम्हारे पास नहीं है यदि भगवान की भक्ति करके तुमने सब कुछ प्राप्त कर लिया, चाहे तीन खण्ड की सम्पत्ति प्राप्त की है या छह: खण्ड की, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। संतोष नहीं है तो जीवन में दु:ख ही दु:ख है।

सफाई चित्त की भी

तीसरी बात क्या है पवित्रम्-पवित्रता-चित्त में पवित्रता होना चाहिए। यदि आपको रत्नों के महल में बिठा दिया जाए किंतु

आस-पास चारों और गदंगी के ढेर लगे हुए हैं बदबू आ रही है शौच का ढेर लगा हुआ है। आप बैठोगे वहाँ पर? भला आदमी तो नहीं बैठेगा। चाहे जमीन रत्नों की है, चाहे सोने का सिंहासन है। आजू-बाजू में गदंगी पड़ी है मल मूत्र पड़ा है। इसके साथ-साथ कोई मांस मदिरा आदि पड़े हैं खून पड़ा हुआ है तो उस मल को देख करके भला आदमी बैठ नहीं सकता। आपका अंतरंग का वस्त्र यदि वो पसीने से तरबतर है बदबू दे रहे हैं तो बनियान उतारकर फैंक देते हैं यदि गदंगी कपड़ों पर है तो कपड़े उतार देते हो। गदंगी शरीर पर है तो शरीर का प्रक्षालन कर लेते हो और गदंगी घर पर है तो हमारी माताएँ बहनें घर में चार-चार बार झाडू लगाती हैं। वह बाल्टी पर बाल्टी ढ़ोलती हैं वाईपर से साफ करती हैं, रगड़-रगड़ के। महीने में दो-चार वाईपर टूटे। श्रीमान् जी कहते हैं क्या करते रहते हो।

थक गए घर की सफाई करते-करते पर चेतना की ओर उनका ध्यान नहीं जाता। शरीर की सफाई करते-करते बाथरूम में पहुँच जाएँ तो साबुन की बट्‌टी पूरी साफ या टंकी का पानी खत्म हो जायेगा उससे पहले निकलने का नाम नहीं है। श्रीमान जी खटखटा रहे हैं हे भाग्यवान् बाहर निकल कर तो आजा थोड़ी देर से आई बस थोड़ी देर से आई अभी तो साबुन की बट्‌टी रह गई है। टंकी में पानी बाकी है अभी तो। तो वह शरीर को प्रक्षालन करने में लगे हैं। मैं केवल माता-बहनों की नहीं कह रहा। ऐसी बातें पुरुषों में भी तो हो सकती हैं। ये कौन शरीफ आदमी हैं ये भी प्रयास करते रहते हैं शरीर का प्रक्षालन करने का। तन का प्रक्षालन बहुत किया वचनों का प्रक्षालन भी करते हैं बड़ी मीठी-मीठी बातों से।

किन्तु जब कोई भी व्यक्ति ज्यादा मीठी बातें करता है तो बड़ा डर लगता है कि इसमें कुछ गडबड़ है ज्यादा मीठा होता है तो कीड़े पड़ जाते हैं। थोड़ा खट्‌टा पन भी बीच-बीच में आना चाहिए। अति

प्रीति जब टूटती है तो बहुत बड़ा बैर बन जाता है। ऐसे ही ज्यादा मीठी-मीठी बातें नहीं। ठीक है मीठी बातें बोलो ये नहीं कह रहा मैं कड़वी बातें बोलो। परंतु मीठी बातें वास्तव में मीठी होना चाहिए ऐसा नहीं अंदर से तो जहर भरा है ऊपर से मिठास है। यदि जहर की गोली है और शक्कर की चाशनी में डुबो कर दे दी तो मीठी थोड़ी कहलाएगी। तो महानुभाव पवित्रता हो केवल तन पर नहीं केवल वसन पर नहीं केवल भवन में नहीं, केवल वचनों में नहीं पवित्रता हो तो मन में भी हो, चेतना में पवित्रता हो जिसके मन में पवित्रता है जिसकी चेतना में पवित्रता है वास्तव में वह मानव जीवंत मानव है।

श्रद्धा के भगवान्-

जिसके जीवन में पवित्रता नहीं है, भगवान के सामने खड़े होकर भी मायाचारी कर रहे हो, भगवान के मंदिर में जाकर भी माचायारी हो रही है। फिर कहो महाराज जी अभिषेक करते-करते वर्षों बीत गए, पूजन करते वर्षों बीत गए किंतु मेरा रोग ठीक नहीं हो रहा, मेरी दरिद्रता दूर नहीं हो रही। अरे जिनेंद्र भगवान के चरणों में माथा टेकते ही एक बार प्रणाम करते ही लोगों के असाध्य रोग दूर हो जाते हैं, उपसर्ग दूर हो जाते हैं, दरिद्रता नष्ट हो जाती है तुम्हारे दूर क्यों नहीं हो रहे। मैं तुम्हारी बात नहीं कर रहा उनकी बात कर रहा हूँ जिनके दूर नहीं हुए। वहाँ के लोग ऐसे थे क्योंकि वे भगवान् के सामने आकर भी मायाचारी करते थे। भगवान को भी धोखा देने का प्रयास करते थे। वे अपने आपको भगवान का सबसे बड़ा गणधर मानते थे, मैं तो भगवान का सबसे बड़ा गणधर हूँ। भगवान् तो मेरे हैं स्थापना किसने की। मैंने स्थापना की अरे विचार करो भगवान् को कोई नहीं बनाता तुम भगवान का प्रतिबिम्ब बना सकते हो। जिसकी श्रद्धा उसके भगवान् और जिसकी श्रद्धा नहीं उसके भगवान नहीं। भगवान पैसे से नहीं खरीदे जा सकते। भगवान् की मूर्ति आती है उसकी न्यौछावर

राशि दी जाती है। कभी मोल भाव नहीं होता ये नहीं कहते कि भगवान कितने पैसे के हैं। भगवान को पैसों से खरीदोगे? इतने बड़े धन्ना सेठ हो गए तुम, क्या है तुम्हारे पास जो भगवान को खरीदोगे ? तुम केवल पाषाण की धातु की मूर्ति ला सकते हो भगवान तो अंदर से पैदा होते हैं। हृदय में पैदा होते हैं बाहर से भगवान नहीं आते। तो जीवन में पवित्रता हो जिसका चित्त पवित्र है उसे मूर्ति में भगवान दिखाई देते हैं और जिसके चित्त में कालिख पुती हुई है उसे भगवान में भी भगवान दिखाई नहीं देते।

महानुभाव, एक व्यक्ति ऐसा है जो इंसान में भी भगवान देख लेता है। एक व्यक्ति ऐसा है जो भगवान में भी भगवान नहीं देख पाता। यदि श्रद्धा है तो पत्थर में भी भगवान है। और श्रद्धा नहीं तो भगवान भी पत्थर हैं। तो महानुभाव चित्त की निर्मलता, चित्त की विशुद्धी, ये नि:संदेह जीवंत जीवन जीने का प्रतीक है प्रमाण है। चित्त निर्मल हो, विशुद्ध हो। हम और आप किसी और की नहीं कह रहे, हम अपने-अपने अंदर झांककर देखें तो वास्तव में हमारा चित्त कितना निर्मल है। क्या हमारा चित्त मायाचारी का अजायब घर नहीं है। क्या हमारा चित्त गिरगिट की तरह से रंग नहीं बदलता है। कभी मन में कुछ आता है कभी कुछ आता है। घर में कुछ, मंदिर में कुछ, गुरु जी के सामने कुछ, पुन: किसी और के सामने कुछ इस प्रकार की मायाचारी करके कहाँ जाओगे। कई बार व्यक्ति बहुत धर्मात्मा होते हैं। जिदंगी भर पूजा पाठ करते हैं फिर भी अस्पताल में जाकर के मरते हैं, सड़-सड़ के मरते हैं। महिनों-महिनों पड़े रहते हैं या धर्मात्मा होकर के किसी का पेट चीरा जा रहा है, किसी का हृदय चीरा जा रहा है किसी का कुछ चीरा जा रहा है, क्यों ? कहीं न कहीं कुछ गड़बड़ है न। भगवान के सामने कोई मायाचारी की होगी न। अन्यथा पुण्यात्मा व्यक्ति तुमने कभी सुना है किसी तीर्थंकर का ऑपरेशन

हुआ हो। किसी तीर्थंकर का दिल का ऑपरेशन, पेट का ऑपरेशन हुआ हो। ऑपरेशन तब किया जाता है जो तुम्हारे अन्दर है, वह नहीं होना चाहिए किंतु पहुँच गया है उसे निकालना है। यदि तुम्हारे अंदर मायाचारी का परिणाम नहीं आयेगा तो खराब बातें भी तुम्हारे अन्दर नहीं आयेंगी। बेईमानी और बीमारी पेट से पैदा होती है। पेट में गंदी चीज गई, गंदे विचार बने, गंदे विचार हुए तो तुम्हारे शरीर की धातु उपधातु डिस्बैलेंस्ड हो गई उनका संतुलन बिगड़ गया इसलिए संतुलन करने के लिए बाहर से औषधि देना भी जरूरी है और जो ज्यादा हो गया है उसे बाहर निकालना भी जरूरी है।

निर्मल मन में प्रभु का वास

महानुभाव, भगवान का नाम लेने मात्र से चित्त पवित्र हो जाता है। ''पापों का नाश होता है, लेने से नाम के'', तेरा नाम लेने मात्र से पाप नष्ट हो जाते हैं। यदि कोई फकीर जंगल में भगवान का नाम ले रहा है तो क्या उसके पाप नष्ट नहीं होंगे और कोई व्यक्ति यदि भगवान के सामने मायाचारी कर रहा है तो क्या उसके पाप का बंध नहीं होगा। भगवान के सामने खड़े हो गये तो क्या हो गया तुम्हारे अंदर भगवान तो नहीं हैं न, तुम्हारे अंदर तो मायाचारी है, कपट है, छल है, धोखाधड़ी है तुम्हारे अंदर तो बैर भाव है, तुम्हारे अंदर तो गदंगी पल रही है। तो भगवान के सामने खड़े होने से क्या हो जायेगा। तुम्हारे अंदर जो है उससे पाप का बंध होता चला जा रहा है। उस पाप को नष्ट करने के लिए भगवान के दर्शन को जाना चाहिए जिसका चित्त निर्मल है, शांत है, विशुद्ध है, वह वास्तव में जीवंत है और ऐसे मायाचारी से रहित सरल, सहज, पवित्र, निर्मल मन में ही प्रभु का वास होता है।

आनंद यहाँ

चौथी बात-आनंदम् इतितत्वत:। आनंद कैसा आनंद पुद्गल का आनंद नहीं, तत्त्व का आनंद। आनंद जीवन में पुद्गल के सेवन करने

से नहीं आता है। एक व्यक्ति विषयों का सेवन करता है कहता है बड़ा आनंद आता है। एक व्यक्ति जिसे खाने के लिए जो वस्तु चाहिए उसे मिल जाए तो वाह क्या आनंद आता है एक व्यक्ति जो देखना चाहता है उस दृश्य को देख करके बड़ा मस्त हो रहा है एक व्यक्ति जो सुनना चाहता है वह सुनने में आ रहा है तो उसे बड़ा आनंद आ रहा है। तो ये बाहर के पदार्थों का सेवन करने से जो आनंद आ रहा है। उस आनंद की बात नहीं कह रहे या कोई व्यक्ति क्रोध करके, मान करके, माया, लोभ करके किसी को सता के रौद्र ध्यान से मृषानंदी, चौर्यानंदी और परिग्रह संरक्षण करने से आनंद आ रहा है उस आनंद की बात नहीं। और ऐसा भी नहीं कि आप उस आनंद को कहो घर में बेटा हो उसका नाम आनंद रख दिया और आनंद घर में आ जाये तो आनंद आ जाए। ऐसा नहीं कौन-सा आनन्द तत्वत:। जो तत्त्व से निष्पन्न होने वाला है।

जीवन में तत्त्व ज्ञान आ जाए कि मेरी आत्मा का स्वभाव क्या है। क्या ये क्रोध, मान, माया लोभ मेरी आत्मा का स्वभाव है क्या हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह मेरी आत्मा का स्वभाव है? क्या पंचेन्द्रिय विषयों का सेवन करना मेरी आत्मा का स्वभाव है? क्या सप्त व्यसन मेरी आत्मा का स्वभाव है? राग द्वेष करना मेरी आत्मा का स्वभाव है? आत्मा में से आवाज आयेगी नहीं ये स्वभाव नहीं विभाव हैं। इन सबको छोड़ो मेरी आत्मा का स्वभाव तो जानना देखना है। मैं ज्ञान दर्शन स्वरूप हूँ, मैं तो अजर अमर हूँ, न कभी जन्मता हूँ न कभी मरता हूँ, न कभी वृद्ध होता हूँ, न कभी बालक होता हूँ। मेरी आत्मा जैसी है वैसी है। उस आत्मा के स्वरूप को जिसने जान लिया है, पहचान लिया है, मान लिया है, ऐसी आत्मा से निष्पन्न जो आनंद है वास्तव में वो ही अपना आनंद है। उस आनंद की जो अनुभूति करता है ऐसा व्यक्ति जीवंत कहा जाता है भारतीय संस्कृति में।

उपसंहार

चारों बातें समझ में आईं पहली बात कौन सी थी ''शांति''। और शांति कब होती है कषायों का शमन करने से। दूसरी बात थी तुष्टि। जीवन में तृष्णा की अग्नि बुझ जाये तो संतोष आ जाये। और तीसरी बात थी पवित्रता। चित्त में जब निर्मलता आ जाए, परिणाम निर्मल हो जाएँ, पवित्र हो जाएँ तब धर्मध्यान बनता है। यदि चित्त में निर्मलता नहीं है तो मायाचारी के साथ कितना भी धर्म कर लेना पुण्य का बंध न हो पायेगा। पाप का बंध हो जायेगा और चौथी बात अंतिम बात तत्वतः आनंदम्। तत्व में निष्पन्न आनंद अपनी आत्मा के स्वभाव को जानकर के मानकर के जो आनंद आ रहा है ऐसा वह तत्व निष्पन्न आनंद तत्त्व ज्ञानी व्यक्ति के होता है और महानुभाव, ऐसे तत्त्व ज्ञानी व्यक्ति को जीवन में कोई भी कभी भी दु:खी नहीं कर सकता और अज्ञानी व्यक्ति को कोई भी कभी भी सुखी नहीं कर सकता। जो अज्ञानी व्यक्ति है सदैव दु:खी रहेगा। आ. अजितसेन स्वामी ने लिखा है **''तत्त्व ज्ञान विहीनानां, दु:खमेव ही शाश्वतं।''** तत्त्व ज्ञान से विहीन व्यक्ति के जीवन में शाश्वत दु:ख ही दु:ख है। और **''तत्त्वज्ञानहि जीवानाम् लोकद्वय सुखावहं''।** जिस व्यक्ति के जीवन में तत्त्व ज्ञान है उस व्यक्ति के जीवन में इस लोक में भी सुख है और परलोक में भी सुख है। तत्त्व ज्ञानी दोनों लोकों में सुखी रहता है और अज्ञानी व्यक्ति दोनों लोकों में दु:खी रहता है शाश्वत दु:खों को प्राप्त करता है।

तो महानुभाव जीवन में ये बातें बहुत आवश्यक हैं। ये चार बातें तुम्हारे जीवन में आ गई तो समझो तुम्हारे जीवन में चार धामों की यात्रा का फल प्राप्त हो गया। यदि ये चार बातें आपके जीवन में आ गईं मानो आपके जीवन में चारों वेदों का सार आ गया। यदि ये चार बातें आपके जीवन में आ गईं तो आपने चारों अनुयोगों का सार प्राप्त

कर लिया। यदि ये चार बातें आपके जीवन में आ गईं तो चारों पुरुषार्थों के फलों को प्राप्त कर लिया। ये चार बातें आपके जीवन में आ गईं तो चारों कषाय आपकी मर जायेंगी। यदि चार बातें आपके जीवन में आ गईं तो चार गति के चक्कर से छूट जाओगे। चार बातें आपके जीवन में आ गईं तो चार घातिया कर्म को नष्ट करने में समर्थ हो जाओगे। चार बातें जीवन में आ गईं तो चार आराधना के फल को प्राप्त हो जाओगे। ये चार बातें बीज की तरह से हैं इन चार बातों का फल है 'अनन्त चतुष्टय', अर्हन्त अवस्था की प्राप्ति। तो महानुभाव ये चार बातें अपने जीवन में स्वीकार कर लो। चार क्षण की जिदंगी में चार बातें चाहिए। यदि चार बातें आपके पास हैं तो आपके चारों पन सफल और सार्थक हो गए। बचपन, यौवन, प्रौढ़पन और वृद्धपन। आप इन चारों बातों का पुनः-पुनः चिंतन करो कि मेरे पास ये चार बातें हैं या नहीं, शांति है या नहीं, संतोष है कि नहीं, मेरे चित्त में पवित्रता है कि नहीं। मुझे आत्मा में से आनंद आ रहा है या नहीं आ रहा। अगर ये चार बातें बार-बार सोचोगे तो आज नहीं तो कल चारों बातों को प्राप्त करके ही रहोगे और मैं भी यही चाहता हूँ कि आप चारों बातों को जीवन में प्राप्त करके ही रहो। आपका जीवन सफल और सार्थक बने।

सामाजिक-एकता

जीवन में एकता का क्या महत्त्व है? क्या आवश्यकता है एक मिलकर के रहने की? यदि अलग-अलग रहे तो भी क्या हानि है? प्रत्येक व्यक्ति अपने आप में स्वतन्त्र है। जैन दर्शन तो ये बात कहता ही है जीव-मात्र सभी स्वतन्त्र हैं। फिर ये बात आप यहाँ पर एकता की क्यों कह रहे हो? समाज में एकता की क्या आवश्यकता है। यदि समाज में एकता न रहे तो भी क्या हानि है? ''एकता'' व्यवहार ध र्म का मूल आधार है।'' एकता अनुशासन, सुव्यवस्थित संस्कारमय जीवन पद्धति का नाम है। एकता जहाँ पर भी होती है वहाँ पर सुमति, सुविधा, सुसंस्कार एवं स्वभाव की ओर प्राणियों का गमन होने लगता है। जहाँ एकता नहीं होती वहाँ पर टकराव बिखराव और वैमनस्यता आदि अपना पैर आकर के जमा लेते हैं इसलिए जीवन में एकता की आवश्यकता तो है। जो चीज एकता से मिल जाती है वह चीज अकेले-अकेले में मिल नहीं पाती। जो चीज यदि अकेले में मिल जाए तो फिर एकता की आवश्यकता न पड़े।

आप सोचते होंगे ऐसी कौन सी चीज है? अकेले-अकेले व्यक्ति भी तो धर्म कर सकता है। जीव अकेला ही जन्मता है अकेला ही मृत्यु को प्राप्त होता है। अकेला ही नरक जाता है अकेला ही स्वर्ग जाता है, अकेला ही मोक्ष जाता है, अकेला ही निगोद को जाता है। हर प्राणी स्वयं अपने कर्म का फल अकेला ही तो भोगता है। फिर आप सब मिल करके एक करने की बात क्यों कहते हैं। क्योंकि ऐसी भी कुछ दशा है जो सबके मिलने पर ही संभव हो सकती है। एक के द्वारा वह संभव नहीं हो सकती।

जोड़ना मानवीय है

संसार में ऐसी भी कुछ वस्तुएँ हैं ऐसे भी कुछ समूह हो सकते हैं जो समूह जिस चीज को प्राप्त करने में समर्थ होता है अकेला

व्यक्ति उस वस्तु को प्राप्त करने में कभी समर्थ नहीं हो सकता। बताइये-ऐसी कौन सी चीज है जो एकल प्राप्त नहीं हो सकती जो समूह रूप में ही हो सकती है। हम आपसे पूछें-कि स्वादिष्ट खीर कौन सी होती है।

स्वादिष्ट खीर किसे कहते हैं? क्या स्वादिष्ट खीर कोई एक हो सकती है, स्वादिष्ट जब भी बनेगी आप उसमें दूध भी डालते हैं, चावल भी डालते हैं, बूरा भी डालते हैं और मेवा केशर आदि बहुत सारी चीज डालते हैं तब वह स्वादिष्ट और सुगंधित खीर बन पाती है। आप उसमें से कोई एक चीज भी बाहर निकाल कर रख दें तो क्या फिर आप उसे स्वादिष्ट खीर कह सकते हैं अकेले चावलों का नाम स्वादिष्ट खीर नहीं हैं, अकेले दूध का नाम स्वादिष्ट खीर नहीं हैं, अकेले बूरे का नाम स्वादिष्ट खीर नहीं हैं, अकेली मेवा का नाम स्वादिष्ट खीर नहीं हैं। खीर शब्द ही इस बात का प्रतीक है, यदि तुम्हें भी अपना जीवन खीर जैसा बनाना है तब तो आपको अपने जीवन में जितने भी आवश्यक व्यक्ति है उन सबको शामिल करना ही पड़ेगा। असेंबल करना भले आदमी का ही कर्त्तव्य हो सकता है, जो डिसेंबल करता है, नि:संदेह उसके अंदर शैतानियत आने लगती है।

खीर और हलुवा जैसी अवस्था, बिना जोड़े नहीं बन सकती। हलवा कैसे बनता है-अकेले घी का नाम हलवा है क्या? क्या अकेली शक्कर का नाम हलवा है? नहीं, जब आटा, घी, शक्कर तीनों मिलेंगे तभी हलवा बन सकता है। हलवा भी छोड़ो-यदि आप चाय भी पीओगे तो चाय किसका नाम है? मिक्स करने पर ही चाय बनी, अकेली चाय की पत्ती चबाने से चाय का स्वाद नहीं आयेगा, आपकी थकान दूर नहीं हो सकती, अकेला दूध भी चाय नहीं हो सकता, अकेली शक्कर भी चाय नहीं हो सकती। आप चाय भी छोड़ो यदि आप शिकंजी भी पीना चाहो तो-पानी, नींबू शक्कर इन तीनों

की आवश्यकता है। ऐसे ही जीवन में कोई भी चीज जो सम्पूर्ण कहलाती है तो सम्पूर्ण तभी कहलाती है जब सब पार्ट पूर्ण हो जाते हैं।

मोक्ष मार्ग किसे कहते हैं?-अकेले सम्यक् दर्शन को मोक्षमार्ग नहीं कहते आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी जी महाराज, अपर नाम देवनंदी जी महाराज, जिनेन्द्र बुद्धि-उन्होंने लिखा-मोक्षमार्ग क्या है? तो उन्होंने कहा-तीनों की एकता ही मोक्षमार्ग है। पूज्य आचार्य श्री उमा स्वामी महाराज ने भी ''सम्यक्दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्षमार्ग:'' कहा। सम्यक्दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक्चारित्र तीनों की एकता ही मोक्ष मार्ग है। मोक्षमार्ग अलग-अलग नहीं है। आचार्य महोदय ने स्वयं ही प्रश्न किया, क्या दर्शन मोक्षमार्ग है? नहीं क्या ज्ञान मोक्षमार्ग है? नहीं! क्या चारित्र मोक्षमार्ग है? नहीं! क्या ज्ञान और दर्शन मोक्षमार्ग है? नहीं, क्या ज्ञान चारित्र मोक्षमार्ग है? नहीं क्या इन सबके अभाव में मोक्षमार्ग है? नहीं। मोक्षमार्ग तो सिर्फ एक ही है-सम्यक्दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक्चारित्र तीनों जुड़ जायें तीनों में एकपना हो जाये तभी मोक्ष मार्ग है।

किसका कितना सहयोग लेना है सबका निश्चित अनुपात है, यदि अनुपात की मात्रा कम-ज्यादा कर दी तो वही औषधि-हर्र, बहेड़ा, आंवला रेचक भी हो सकता है और दस्तों को रोकने वाला भी हो सकता है। सिर दर्द को करने वाला भी हो सकता है, सिर के दर्द को हरने वाला भी हो सकता है। वही हर्र बहेड़ा आंवला आपके शरीर में ताकत देने वाला भी हो सकता वही यदि बिना अनुपात के ले लिया तो शरीर को क्षीण करने वाला भी हो सकता है। महानुभाव! कोई भी मशीन एक अकेला पार्ट नहीं हो सकती सभी हिस्सों को सम्यक् रूप से जोड़ा जाये तभी पूरी कम्प्लीट हो सकती है। यदि कुम्भकार एक मटका भी बनाता है उसमें भी जो-जो आवश्यक

सामग्री है, जब उन सबको जोड़ देगा तभी वह एक मटका बनेगा। मिट्टी भी चाहिये, पानी भी चाहिये, चाक भी चाहिये, धागा भी चाहिये, चाक को घुमाने के लिये डंडा भी चाहिये और कुंभकार भी चाहिये। यदि सब चीजें अलग-अलग हों तो वह कलश भी नहीं बन सकता। आप किसी वाहन से यात्रा कर रहे हैं वह वाहन चाहे कितने का भी हो, चाहे वह 50,000 का है या 5,00000 लाख रुपये का हो, चाहे 50,00000 का हो चाहे वह 50 करोड़ का है किन्तु वह वाहन तभी बन पाता है जब सभी पार्ट्स को एसेम्बल किया जाये। आपकी राज्य सभा है, या विधान सभा या लोक सभा जो भी हो सभी विधायक जब मिलकर चुनाव करते हैं, तभी सभी मिलकर ही एक सरकार बनती है, सरकार क्या है?-सरकार सबका मिला हुआ रूप ही है, एक अकेले व्यक्ति का नाम सरकार नहीं कह सकते।

कोर्ट क्या है?-अकेली खड़ी बिल्डिंग का नाम कोर्ट नहीं है जिसमें मजिस्ट्रेट भी हो, जिसमें वकील भी हों, जिसमें पेशकार भी हों, सब हैं तभी तो वह कोर्ट है। स्कूल क्या है? -जिसमें अध्यापक भी हों, विद्यार्थी भी हों, अन्य कर्मचारी भी हों, इन सबके मिलने पर ही विद्यालय बनता है। मंदिर क्या है?-भगवान भी हैं, पुजारी भी हैं, भक्त है पूरा परिसर है यदि यह सब न मिलाया जाये तो वह एक रूप बन नहीं सकता। यदि जीवन में ऐसे ही समीचीनपना स्वीकार करने की भावना है यदि जीवन में ऐसे ही मोक्षमार्ग पर बढ़ने की भावना है, यदि जीवन में अपने आपको सिद्ध बनाने की भावना हो तो कोई भी आत्मा कोई एक गुण से सिद्ध नहीं बनती, हमें अपनी चेतना के समग्र गुणों को एसेम्बल करना पड़ेगा तभी हमारी आत्मा सिद्धआत्मा बन सकती है। कोई सोचे अकेली श्रद्धा से सिद्ध बन जायें, सिद्धों में श्रद्धा भी है, ज्ञान भी है, सिद्धों में अनंत गुण हैं उन सभी अनंत गुणों को मिलाकर के सिद्ध बने। एक-एक बूंद को मिलाकर ही नदी, झील

सागर बनती है, अकेली बूंद को हम सागर नहीं कह सकते। एक अकेली बूंद वह कुछ भी करने में समर्थ नहीं होती। एक धागा कभी कपड़ा नहीं कहलाता अनेकों धागे जब ताने और बानों में कसकर जुड़ जाते हैं एक दूसरे के साथ मिलकर रहते हैं, कंधे से कंधा मिलाकर रहते हैं वे धागे तो बहुत कमजोर थे जिस धागे से चींटी का शरीर भी न ढक पाये उससे इतना बड़ा कपड़ा बन सकता है कि एक हाथी के शरीर को भी ढांका जा सकता है।

महानुभाव ! इसी प्रकार जीवन में बहुत सारी चीजें है जहाँ एक से काम चल ही नहीं सकता। सम्पूर्ण वस्तु कोई एक पार्ट नहीं होती है सभी पार्ट को विधिपूर्वक जब जोड़ दिया जाये तभी वह सम्पूर्ण हो सकती है। संपूर्णता प्रदान करना अर्थात् जोड़ना प्रत्येक मानव का कर्तव्य है क्योंकि जोड़ने का काम शैतान नहीं करते।

संपूर्णता में जीवंतता

महानुभाव ! जो अपने आप में सम्पूर्ण नहीं है वह मुर्दे के समान है, यदि किसी व्यक्ति का एक हाथ पड़ा हुआ है, मैं नहीं मानता कि वह जीवंत आदमी है, एक हाथ कितना ही बड़ा हो किन्तु वह अपूर्ण ही है, और एक छोटी-सी मक्खी है उसकी बॉडी के सब पार्ट हैं तो वह जीवंत हो सकती है, किन्तु एक पार्ट कभी जीवंतता नहीं रखता, यदि कदाचित् क्षणभर के लिये उसे जीवंत भी मान लें तो वह कुछ भी करने में समर्थ नहीं होता। छिपकली की पूंछ कट जाती है पीछे पड़ी है, थोड़ी देर के लिए उचटती रहेगी किन्तु कुछ कर न पायेगी अतः संपूर्णता में ही जीवंतता है। ऐसे ही हमारे शरीर में जितने भी अंग और उपांग हैं, वे सभी एक साथ मिल जायें तब तो वह मानव कहा जा सकता है, किन्तु एक-एक भाग अलग-अलग रख दिया जाये तो बताओ क्या उसमें जीवंतता रहेगी, ये ध्यान रखना समाज उसे ही कहते हैं जो एक होती है, जो बिखरी होती है उसे समाज नहीं

कहते। समाज किसी एक व्यक्ति का नाम नहीं है, वह एक व्यक्ति समाज का अध्यक्ष हो सकता है, मंत्री हो सकता है, कोषाध्यक्ष हो सकता है, संयोजक हो सकता है, आयोजक हो सकता है कुछ भी हो सकता है, किन्तु एक व्यक्ति समाज नहीं हो सकता। यदि किसी गाँव में एक ही जैन परिवार है, तब ये कहेंगे कि जैन समाज का एक ही परिवार है। किन्तु जब मिलाकर के कहेंगे समाज तब ही कहलायेगी, अकेले व्यक्ति को समाज नहीं कहते।

तो महानुभाव ! समाज एक ऐसा सामूहिक शब्द है संज्ञा है संज्ञा भाववाचक भी होती है, जिससे वस्तु का अवज्ञान होता है, अबबोध होता है, अवगम होता है कुछ संज्ञा ऐसी भी होती हैं जो संज्ञा समूह के लिये दी जाती हैं-''भीड़''-एक व्यक्ति का नाम नहीं है, ''ढेर''-एक वस्तु का नाम नहीं है या ''संख्यात'' एक का नाम नहीं है या और भी चीज जो एक नहीं है सभी का मिला हुआ रूप है। एक को तो कभी समाज कहा ही नहीं जा सकता, जब समाज एक धागे में बंध जाती है तब समाज, हाथ से फेरी जाने वाली माला की तरह से पूज्यनीय बन जाती है, यदि मोती बिखरे पड़े हैं, तब उन मोतियों की कोई कीमत नहीं, जमीन पर पड़े हैं तो लोग पैर रखकर कुचल कर भी चले जायेंगे, किन्तु जो मोती माला में पिरो दिये गये तो वह माला पुनः कण्ठ में धारण की जाती है, मोती को कंठ में कैसे धारण करोगे? माला तो हृदय में धारण की जाती है, वह अपना हृदय में स्थान बना लेती है किन्तु कब-जब एकत्व को प्राप्त हो जाती है तब। उस माला से आप जाप लगाते हैं और उस जाप को आँखों से भी लगाते हैं, माथे से भी लगाते हैं, सिर झुकाते हैं, माला में पूज्यता आ गयी, वह एकता का संदेश देने वाली है।

जुड़ो और जोड़ो

महानुभाव ! जीवन में आप और भी जगह देखेंगे कि एकता कहाँ-कहाँ आवश्यक है, और ध्यान रखना कि एक शब्द आता

है-''नेक'' अर्थात् अच्छे, सच्चे, सही, भले। किन्तु नेक शब्द भी एक के बिना नहीं बनता।

''नेक में भी एक है, एक ही तो नेक है।
पाता शुभ सुखद हो, वही परम विवेक है।''

परम विवेक वही है जो एकत्व का भाव अपने अंदर रखके नेकता को प्राप्त करे, जिसके जीवन में एकता नहीं आती, वह व्यक्ति नेक नहीं कहलाता, सज्जन व्यक्ति वह कहलाता है जो सबसे जुड़ के चलता है और सबको जोड़ के चलता है।

''सज्जन पे सौ-सौ चले, दुर्जन चले न एक।
ज्यों जमीन पाषाण की ठोकें ठुके न मेक॥

सज्जन पुरुष के साथ सौ व्यक्ति भी एक साथ चल सकते हैं किन्तु दुर्जन व्यक्ति के साथ एक भी नहीं चलता। सज्जन पुरुष तो सोने जैसा होता है, सोने को 100 बार तोड़िये 100 बार जोड़िये कभी नाखुश नहीं होगा और ऐसा भी नहीं कि वह कह दे कि मैं जुड़ूँगा नहीं, किन्तु दुर्जन होता है-कुम्हार के घड़े की तरह से, एक बार तोड़ दिया तो जीवन में दुबारा जुड़ना मुश्किल है। सज्जन व्यक्ति से सौ बार झगड़ा करने पर 100 बार यदि क्षमा मांगेंगे तो क्षमा कर देगा और दुर्जन व्यक्ति का यदि एक बार भी अपमान हो गया तो वह कहेगा-देख ! अब मैं तुझे छोड़ूँगा नहीं। बदला नहीं लिया तो फिर मेरा नाम नहीं।

रावण ने तो ठोकर मार दी विभीषण को, उसने फिर भी चरणों में मुकुट रखकर यह कहा-कि ये जो तुम कार्य करने जा रहे हो, सीता का अपहरण किया भूल हो गयी, वापिस कर दो, वे नारायण और बलभद्र हैं पूरी लंका नष्ट हो जायेगी, नारायण अजेय होते हैं, तीन खण्ड के राजा होते हैं, तुम उन्हें परास्त न कर सकोगे, दूसरी बात यह

है कि अन्यायी कभी विजयी नहीं हुआ अन्याय की सदैव पराजय ही हुयी है। इसलिये उत्तम कार्य यही है कि सीता को वापिस कर दो, किन्तु व्यक्ति की जब कुबुद्धि होती है तब कोई अच्छी बात समझ में नहीं आती। विभीषण के द्वारा समझायी हुयी बात, कुंभकरण के द्वारा समझायी गयी बात, मंदोदरी द्वारा, इन्द्रजीत, मेघनाथ के द्वारा समझायी गयी बात उनके समझ में नहीं आयी।

विनाश का प्रारंभ टूटने से

महानुभाव ! व्यक्ति का जब नाश होता है तब व्यक्ति पहले टूटता है। जब व्यक्ति का नाश होना प्रारंभ होता है तो व्यक्ति छूटता है, टूटता है कैसे?-पहले परिवार से टूटेगा और छूटेगा, मौहल्ले पड़ौस से अलग हो जायेगा, फिर धीमे-धीमे अंदर से भी टूटने लगेगा फिर व्यक्ति नाश के कगार पर पहुँच जाता है।

प्राय:कर संयुक्त परिवार में रहने वाले व्यक्ति उनके जीवन में कैसे भी पाप कर्म का उदय आ जाए वह अपने पाप कर्म को भी सहजता में भोग लेता है किन्तु एकल जब हो जाता है फिर उसके पास कोई उपाय नहीं रहता है तब वह सोचता है अब तो मैं माँ-बाप के पास भी जाकर अपना मुँह नहीं दिखा सकता किसके पास जाऊँ क्या कहूँ मैं ही स्वयं अलग हुआ था, मेरे भाग्य ने ही मेरा साथ नहीं दिया मैंने कितने ही प्रयास क्यों न कर लिये, अब मेरे पास कोई चारा नहीं है, कोई सहारा नहीं है मैं तो बेचारा ओर बेसहारा हो गया, इससे वह सोचता है कि अब तो जीवन का अंत कर लिया जाये तो ही अच्छा है।

व्यक्ति जब बाहर से और अंदर से टूट जाता है तो फिर सोचता है अब तो शरीर को भी तोड़ दो छोड़ दो, किन्तु जो व्यक्ति समूह में रहता है उसके जीवन में ऐसी नौबतें नहीं आतीं। जो सबसे मिलजुल कर रहता है, उसके जीवन में ऐसे क्षण नहीं आते, कि उसे सोचना

पड़े कि मैं अपने जीवन का अंत करूँ, उसके जीवन में कभी कोई ऐसी बात नहीं आती, उसके मन में विकल्प और विचार भी नहीं आता कदाचित् कभी आ भी जाये तो संयुक्त परिवार में एक-दूसरे को समझा देते हैं। बेटा-चिन्ता न कर हम हैं। घर के बड़े, वृद्ध संभाल लेते है, महानुभाव, बात ये है व्यक्ति को जब सहारा दिया जाता है, आचार्य वट्टकेर स्वामी जी ने मूलाचार ग्रंथ में लिखा है-कि आचार्य के पास जब शिष्य जाता है तो आचार्य शिष्य से कहते हैं तू चिन्ता न कर मैं तो हूँ, और शिष्य कहते हैं आचार्य से-मैं आपका ही हूँ। आपसे पृथक नहीं हूँ ये संघ ''समूह'' जब कहलाता है जब संस्था बनती है सब मिलकर के बनती है, एक-व्यक्ति से अकेली संस्था, संघ, समूह नहीं बनते। चतुर्विध संघ किसी एक व्यक्ति का नाम नहीं है, व्यक्ति कितना बड़ा ही क्यों न हो जाये, कितना ही बड़ा प्रभाव क्यों न हो जाये एक अकेले को कोई संघ नहीं कहता।

महानुभाव ! इसलिए यह शब्द भी सही है, इतना सा शब्द-''तू चिन्ता क्यों करता है'' बस ! इतने शब्द चिन्ता मत कर-तेरे भाग्य को कोई मेट नहीं सकता, इन शब्दों में बहुत सहानुभूति होती है, करुणा, दया होती है वात्सल्य होता है, प्रेम होता है तो महानुभाव, सहपरिवार में इतना आदर-सम्मान समर्पण होता है, किन्तु जब परिवार अलग-अलग होते चले जाते हैं तब उनमें प्रेम घटता चला जाता है, एक सगे पिता का भी अपने बेटे के प्रति उतना प्यार नहीं रहता यदि बेटा अपनों से दूर रहता है तो, फिर बस कभी पक्ष में मास में एक फोन द्वारा ही औपचारिकता रहती है फिर वह वात्सल्य अंदर ही अंदर सूखने लगता है क्योंकि व्यक्ति का ये स्वभाव है कि वह जिस वातावरण में रहता है उसका प्रेम उसी से हो जाता है, अपने सगे मां-बाप को भूल जाता है जिस बेटे ने अपनी माँ की गोद को तीन साल तक प्राप्त किया है जिस बेटे ने अपने पिता की अंगुली को 9 साल तक प्राप्त किया है,

ऐसा बेटा जीवन में 90 साल का भी हो जायेगा, माता-पिता के उपकार को भूल नहीं सकता, किन्तु जिस बेटे ने अपनी माँ की गोद प्राप्त ही नहीं की, जन्म लेते ही दास-दासियों ने पालन-पोषण किया, बाद में गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त की तो उसके मन में अपने माता-पिता के प्रति उतना सम्मान नहीं रहता, उसके मन में भाव आता भी है तो अपने उन साथियों के प्रति, जिनके साथ वह रहा है। बंद मुट्ठी लाख की, खुल गई तो खाक की।

एकता में उन्नति

तो सामाजिक एकता की बात मैं कह रहा था, जितने भी सहपरिवार है उनमें सुख-शांति है, चाहे पाप कर्म के उदय से गरीबी भी आ जाये तो भी कोई उनकी सुख-शांति को भंग नहीं कर सकता, और ये बात भी सही है कि संयुक्त परिवार में शक्ति भी होती है, जो शक्ति संयुक्त में है वह एकल में नहीं हो सकती है, जो शक्ति इस हाथ से जुड़ी अंगुली में है, जिससे आप एक बाल्टी भी उठा सकते हो, यदि उसे हाथ से अलग कर दिया जाये तो बाल्टी तो दूर हल्की-फुल्की रुई भी न उठा सकोगे। शक्ति समूह के साथ होती है।

एक ग्रामीण किसान जिसके तीन बेटे थे, आपस में लड़ते रहते थे, उस किसान ने उन्हें बहुत समझाने का प्रयास किया, किन्तु वे नहीं माने किसान रोने बैठ गया क्या करूँ ? कैसे समझाऊँ? तब उसने एक उदाहरण देकर समझाने का प्रयास किया-किसी कवि ने उसे पद्य में लिख दिया-

''भोला के थे लड़के तीन, रामू, श्यामू, मातादीन, सुनते थे न किसी की बात, लड़ते रहते थे दिन-रात। भोला ने सबको समझाया लकडी का गठ्ठा मंगवाया, सबसे कहा कि इसको तोड़ो या लड़ने से मुखड़ा मोड़ो, सबने भारी जोर लगाया, उस गठ्ठे को तोड़ न पाया,

भोला ने तब उनको समझाया-एक-एक लकड़ी सबको दे दी सबने उसको तोड़ गिराया।''

महानुभाव ! भोला उन सबको समझाता है-जैसे ये गट्ठा है इसे तोड़ने में तुम सब समर्थ नहीं हुये, तीनों भाईयों ने गठ्ठा तोड़ नहीं पाया, गठ्ठे की लकड़ी अलग-अलग कर दी तो एक-एक करके सबने तोड़ दी, ऐसे ही तुम जब तक समूह में रहते हो तुम्हें दुनिया की कोई भी शक्ति तोड़ नहीं सकती। जब व्यक्ति अलग-अलग हो जाता है तब उन्हें तोड़ने में आसानी होती है, एक परिवार-आठ भईया परिवार आज यदि एक करोड़ का मालिक है। यदि आठ भाई अलग-अलग हो गये तब कौन कहेगा, उन्हें करोड़पति। जब आठ भईया थे तब वे करोड़पति थे, अब नहीं रहे। जब एकता थी तब नि:संदेह वह सम्पत्ति सबकी है चाहे हिस्सें में 12.2 लाख हैं किन्तु तब भी आठों भाई अपने आप में करोड़ पति हैं, जो भी कहेगा वह यही कहेगा-ये तो करोड़पति बाप का बेटा है, चाहे 1 ही करोड़ की सम्पत्ति है, किन्तु जब अलग हो जायेंगे तो 1-1 व्यक्ति 12 1/2 लाख मात्र के ही मालिक कहलायेंगे, और किसी के पाप या पुण्य के उदय से सम्पत्ति घट भी सकती है और बढ़ भी सकती है। अभी जब वे भाई 1 करोड़ के मालिक थे तब समाज में उनका पहला स्थान था, जब 12.2-12.2 लाख के हो गये तब समाज में उनका नंबर हो गया 500 वे नंबर पर। इससे सिद्ध होता है एकता में प्रमोशन है और बिखराव में डिमोशन।

जहाँ भी एकता है वहाँ उन्नति है, उत्थान है और जहाँ बिखराव होता है वहाँ पतन है। यदि वह बेटा जिसके हिस्से में 12 1/2 लाख आये माना कि उसके भी छ: बेटे हैं उनने कहा 2-2 लाख हमें दो 50 हजार तुम रखो तुम्हारे लिये पर्याप्त हैं अब उसे कौन करोड़पति कहेगा। व्यक्ति जब साथ में है तो लाखपति अलग-अलग हो गये तो

खाकपति, जो करोड़ के मालिक थे वे रोड़ पर चादर बिछाकर सो रहे हैं, पहले हवेली की कीमत 7-10 करोड़ की थी किन्तु अब? हवेली के इतने हिस्से कर दिये कि वह कीमत अब दो लाख की भी नहीं बची, तो महानुभाव, एकता में बड़ा बल है। आप देखते हैं-एक अंगुली से तुम किसी को मारो तो एक अंगुली से उसे ज्यादा चोट नहीं पहुँचेगी, कितना ही बड़ा पहलवान ही क्यों न हो, दो अंगुली से एक की बजाय ज्यादा चोट लगेगी और तीन अंगुली से और ज्यादा चोट यदि पाँचों अंगुली एक साथ पड़ेंगी तब गाल पर छप जायेंगी पुनः पाँचों अंगुलियों को एक कर दिया मुक्का बना लिया, पीठ पर मार दिया तो फिर हड्डी क्रेक भी हो सकती है तो महानुभाव ! संयुक्त होने पर शक्ति कई गुनी बढ़ जाती है एक-एक होने से कल्याण नहीं होता। आपने सम्यक् दर्शन को सुना, आप जानते हैं सम्यक् दर्शन में आठ अंग होते हैं-निशंकित, निःकांक्षित, निर्विचिकित्सा, अमूढदृष्टि, उपगूहन, स्थितिकरण, प्रभावना, वात्सल्य ये आठ अंग हैं, कोई व्यक्ति आठ अंग में किसी भी एक अंग को पकड़ कर बैठ जाये तो क्या उसका कल्याण हो सकता है? नहीं हो सकता, जैसे सम्यक्दर्शन के आठ अंग ही अनिवार्य है, जैसे खाट में 8 पार्ट होते है चार उसके पाये और चार उसकी आजू-बाजू की बल्लियाँ। तभी खाट पर व्यक्ति बैठ सकता है। एक भी टूट जाये तो व्यक्ति बैठ नहीं सकता, जहाँ दो या चार व्यक्तियों का सामूहिक काम हो उसमें से एक भी टूट जाये तो फिर सफलता नहीं मिलती, एक पक्षी का एक पंख टूट गया, दूसरा पंख यदि बहुत बड़ा भी है फिर भी वह उड़ नहीं सकता, दो पंख ही चाहिये, छोटे से मच्छर के छोटे-छोटे ही सही किन्तु 2 पँख हों तभी उड़ सकता है, तो जो काम दो से होता है वह दो से ही हो सकता है, एक से कभी हो ही नहीं सकता, जो काम तीन से होता है वह तीन से ही होगा, कम से नहीं होगा।

समाज में यदि दस परिवार हैं तो वे दस एक ही रहें, और 100 परिवार हैं तो सौ भी एक ही रहें। वह कहलाती है, सामाजिक एकता। और सामाजिक एकता ही उत्थान का मार्ग है, जब कहीं भी उत्थान होगा सामाजिक एकता से ही होगा, वह एकता केवल वचनों की ही न रहे, एकता केवल तन की न रहे, व्यक्ति के जीवन में मतभेद हो सकता है किन्तु कभी मनभेद नहीं होना चाहिये। मन आपके यदि एक मिले हैं तो आप वास्तव में एक हैं जिसका मन ही नहीं मिला। एक पलंग पर साथ-साथ सोने वाले प्राणियों में एकता भले ही तन की हो किन्तु दूरियाँ तो मन की हैं, तन की दूरी कोई विशेष महत्त्व नहीं रखती पर मन से जो दूर हो जाता है तब तन की निकटता भी उस दूरी को पाट नहीं पाती, तो महानुभाव ! एकता के मायने हैं मन मिले, हम एक सूत्र में बंधें, गुलदस्ता अच्छा लगता है एक अकेला फूल अच्छा नहीं लगता, पुष्पवाटिका पूरी अच्छी लगती है एक अकेले पेड़ पर पुष्प अच्छे नहीं लगते, तो नि:संदेह समूह अपनी ओर आकृष्ट करने वाला होता है, एकल अपनी ओर आकृष्ट करने में असमर्थ होता है।

महानुभाव ! धर्म हमेशा दूसरों को अपनी ओर आकृष्ट करता है, यदि कोई मुनिमहाराज जंगल में जाकर के विराजमान हो जायें तो जंगल के पशु-पक्षी भी उनके पास आ जाते हैं, वृक्षों पर फल और पुष्प एक साथ आ जाते हैं। चौथे काल में मुनिराज एक इन्द्रिय जीव को भी प्रसन्नता व आनंद देने वाले होते थे। जन्म जात-वैर धारण करने वाले शेर-गाय में भी प्रेम और वात्सल्य का संचार करने लगते, सर्प और नवेला जैसे जीवों में भी आपस में प्रेम का भाव आ जाता, और कुत्ते-बिल्ली, बिल्ली-चूहा, मयूर-सर्प, गरूड़-सर्प में एकता का भाव आ जाता, प्रेम वात्सल्य बढ़ जाता। उनके (मुनि के) प्रभाव से सभी एक साथ बैठ जाते, आज हम पंचम काल के साधु वह नहीं कर

पायें तो कम से कम समाज में आकर के मनुष्यों को तो एक कर दें। जो साधु समाज में बैठकर भी समाज को एक न कर पाये, तो मैं समझता हूँ उस साधु की साधुता में कहीं कमी है, अन्यथा साधु को मुख से कहने की आवश्यकता नहीं, साधु की विशुद्ध वर्गणायें, उसके मन को अपने आप बदल देंगी, कहने की आवश्यकता नहीं है जैसे जमा हुआ घी सूर्य को देखकर अपने आप पिघल जाता है, न भी देखे सूर्य को यदि कहीं कमरे में भी रखा है तो सूर्य का आतप उसे अपने आप पिघला देता है ऐसे ही साधु की वर्गणा। उसके तुमने दर्शन भी नहीं किये, प्रवचन भी नहीं सुना किन्तु साधु की वर्गणा अंदर तक पहुँच जाती हैं। उसका मन अपने आप द्रवीभूत होने लगता है।

महानुभाव ! हमारे गुरु महाराज-पूज्य आ.श्री विद्यानंद जी महाराज कहते हैं-हम जंगल में जाकर के क्रूर जंगली जानवरों को बदल पायें या न बदल पायें, हम कहीं जंगल में जाकर के सूखे वृक्षों को हरे कर पायें या न कर पायें, हम किसी सूखे तालाब को पानी से भर पायें या न भर पायें, चाहे और कोई विशेष बात हो पाये या न हो पाये किन्तु कम से कम किसी समाज में जाकर के चार व्यक्तियों के चेहरे तो खिला सकते हैं, यदि हम साधु होकर समाज के व्यक्तियों के चेहरे न खिला पाये तो साधु से तो वह बहुरूपिया अच्छा है, वह हास्य का कवि तो अच्छा है जो लोगों को एक-क्षण के लिये हँसा देता है और सभी उसे याद रखते हैं, अरे! हम साधु होकर भी किसी के चित्त के मैल को न धो पाये, किसी की कलुषता को न धो पाये, हम साधु होकर भी चार भाईयों को एक दरी पर न बिठाल पायें, हम साधु होकर भी प्रेम और एकता का संदेश न दे पायें तो समझना चाहिये कि हमारी साधुता में कहीं कमी है, साधुता के मायने तो मैं समझता हूँ कि सबको एक करके चलें, साधुता तो ऐसी मिष्ट होती है जैसे दूध में पड़ी शक्कर। दूध में पड़ी शक्कर किसी एक कोने को मीठा नहीं

करती अपितु पूरे दूध को मीठा करती है। मैं कई बार कहता हूँ कि आज आवश्यकता है सभी बाल-वालों को अलग करने की इन बाल से आशय-पल्लीवाल, खण्डेलवाल, जैसवाल, पोरवाल, कासलीवाल, अग्रवाल, ये सब बाल-वाल में कुछ नहीं हैं ये वाल दीवाल का कार्य करने वाली हैं।

वॉल का अर्थ-दीवार होता है, उस वॉल को अलग कर दिया जाये तो एक हॉल बन जायेगा, उस हॉल में बैठकर के जो आनंद आयेगा वह आनंद वॉल में कभी भी नहीं आ सकता, यह 'वाल' बवाल पैदा करने वाला है। इसलिये-आबाल वृद्धों को अब बालपन छोड़ देना चाहिये, अब आप बाल नहीं रहे युवा हो गये, वृद्ध हो गये यह बालपन अब आपको शोभा नहीं देता, ये बातें तो बचपन में बच्चे कहते थे कि ये तेरी डायरी है, ये मेरा पेन है, ये तो बचकानी बातें बच्चों की होती हैं, बड़ा व्यक्ति तो कहता है क्या किसका है, सब एक है, एक आकाश के नीचे रहते हैं, एक ही जमीन पर सो जाते हैं। महानुभाव ! यदि 'वाल-वाल' की बातें हम अपने मन से निकाल दें तो नि:संदेह सभी एक हॉल में आ जायेंगे जिसमें हमारा हाल और चाल सब बदल जायेगा। कमरे के बाहर आकर ही हाल-चाल बदल जायेगा, दो भाई अलग-अलग कमरे में रहते हैं यदि उनके बीच की दीवार को हटा दिया जायेगा तो दोनों का कमरा दूना हो जायेगा। बीच की दीवार होने से कमरे आधे-आधे रह जायेंगे, जब दोनों का कमरा एक हो गया तो कोई पूछेगा-तुम्हारा कमरा कितना बड़ा वह कहेगा। 100 x 200 का और यदि आधा-आधा कर दिया तो 50 x 100 का रह गया। तो महानुभाव, समाज में भी एकता रहना चाहिये और जो समाज में एकता का कार्य करता है वही नेक व्यक्ति हो सकता है। बिना जोड़े तो मकान भी नहीं बनता, बिना जोड़े तो कोई व्यक्ति अमीर भी नहीं बनता, बिना जोड़े तो कोई व्यक्ति गुणज्ञ भी नहीं

बनता, बिना जोड़े तो कोई व्यक्ति सदाचारी भी नहीं बनता, एक-एक ईंट जोड़ी जाती है तो मकान बन जाते हैं जब इंसान जोड़ा जाता है जब गुण जोड़े जाते हैं तो इंसान को जोड़ने वाला भगवान बन जाता है, इसीलिये समवशरण में सभी को जोड़ दिया जाता है, चाहे देव हों, चाहे पशु पक्षी हों, चाहे मनुष्य हों भगवान के समवशरण में सबको स्थान मिल जाता है।

मानव को मानव से जोड़ें

महानुभाव ! आज आवश्यकता तो ये ही है, आज जोड़ने की आवश्यकता है। जिसको तुमने जोड़ने का काम किया है जीवन में वह तुम्हें कभी भूल नहीं सकता। जन्म देने वाले माता पिता को भूल सकता है कब, जब माता-पिता ने जन्म देकर संस्कार नहीं दिये, चार भाई हैं चारों में आपस में तनी रहती है। यदि भाईयों में एकता नहीं है तो वह परिवार सुख आनंद का उपभोग नहीं कर सकता। एकता ही परिवार, समाज और देश की उन्नति में कारण होती है।

एक बार 6-7 साल का एक बच्चा अपने पापा से खेलने की जिद करने लगा। उसके पापा तभी ऑफिस से आए थे और अगले दिन के किसी महत्त्वपूर्ण केस की तैयारी में व्यस्त थे। उन्होंने अपने बेटे को समझाया बेटा देखो, अभी मैं थोड़ा जरूरी काम कर रहा हूँ कल खेलेंगे। बेटा बोला, पापा! आपको जब देखो तब जरूरी काम रहता है आप मेरे साथ कभी भी नहीं खेलते। उसके पापा उसे बहुत समझाते हैं पर बच्चों की जिद तो बच्चों की ही होती है उन्होंने पास से एक कागज उठाया, उस पर भारत का नक्शा बनाया और 10-15 टुकड़े कर उस बच्चे को दे दिए और कहा बेटा पहले इन टुकड़ों को जोड़कर लाओ तब मैं तुम्हारे साथ खेलूँगा। पिता बेटे को वे टुकड़े देकर निश्ंिचत हो गए सोचा अब 4-5 घंटे इन टुकड़ों में निकल जाएँगे और मेरा काम भी हो जाएगा। बेटा उन टुकड़ों को लेकर गया और 15

मिनट बाद उन टुकड़ों को जोड़कर अपने पिता के पास ले आया। जैसे ही पिता ने उन जुड़े हुए टुकड़ों को देखा वे आश्चर्य में पड़ गए। सोचा अगर मैं भी इन टुकड़ों को जोड़ता तो इतनी जल्दी नहीं जोड़ पाता। उन्होंने अपने बेटे से पूछा बेटा ! तुमने इतनी जल्दी भारत के नक्शे को कैसे जोड़ दिया। इतनी आड़ी-तिरछी लाइनों में तुम्हें कैसे पता चला कि ये यहीं से जुड़ना है। वह बालक बोला पापा जब आप भारत का नक्शा बना रहे थे तब मैंने देखा कि उस पेपर के पीछे एक मनुष्य का चित्र बना हुआ था। बस मैंने तो उस मानव को जोड़ा था भारत तो अपने आप जुड़ गया।

महानुभाव ! मानव को मानव से जोड़ना है और जब इंसान को इंसान से जोड़ा जाएगा तो पूरा समाज, राज्य, देश और राष्ट्र खुद-ब-खुद जुड़ जाएगा। मैं तो आप लोगों से यही कहना चाहता हूँ कि पहले आप सब एकता का स्तंभ स्थापित करें जो कि समाज की उन्नति में सहायक होगा। सबको जोड़े और उससे भी पूर्व सबसे जुड़े। सबको जोड़ने का प्रयास करोगे तो हो सकता है वह तुमसे जुड़ने से मना कर दे। इसीलिए जोड़ो मत, स्वयं जुड़ जाओ! जब आप सबसे जुड़ोगे तो सब आपसे स्वतः ही जुड़ जायेंगे और जब हम एक-दूसरे से जुड़ जायेंगे तो एक अखण्ड समाज अपने आप बन जाएगी।